

# २१ बनाम ३०

[वर्तमान आन्दोलन पर नई कल्पना और नये विचारों द्वारा अपूर्व प्रकाश डालनेवाला, बड़ी ओजस्वी भाषा में लिखा हुआ सर्वथा मौलिक ग्रंथ। ]



लेखक,

आचार्य श्रीचतुरसेन शास्त्री।

—:o:—

फरवरी १९३० ई०

प्रथम बार} मूल्य १॥)

प्रकाशक—
संजीवन कार्य्यालय
देहली।



मुद्रक—
ज्योतीप्रसाद गु
देवीदयाल प्रिंटिंग
देहली।

# एक बात

सन् १६२१ का महायोग आया और चला गया, भारत के दुर्धर्ष दुर्भाग्य ने उसे हमारे जाग्रत होने से प्रथम ही भार भगाया। तब से अब तक का १० वर्षका समय हमने जागृति, आत्मबोध की चेष्टा में व्यतीत किया। आत्म बोध हमें हुआ, और आज-जब सन् ३० का प्रथम प्रभात उदय हुआ, तो हम जाग्रत होकर सच्चे युवक की भाँति अपनी उस सामूहिक अभिलाषा को धैर्य और धीरता से प्रकट कर सके जो हमारे चरम आत्म बलिदान से ओत प्रोत है।

सहस्रों वर्ष बाद हमारी आत्मा में सन् ३० के प्रथम क्षण में वह भाव—तेज—त्याग और साहस आया है, जो प्राचीन आर्य्य संस्कृति के लिये-महा जातियों के इस मध्य उत्थान के युग में असाधारण है। यदि इस क्षण की भावना के ऊपर चल कर हमारा सर्व नाश भी हो तो भी हम पृथ्वी की समस्त जातियों में अपने को महा भाग्य शाली समझेंगे।

दिल्ली।<br>१५।२।३०

श्रीचतुरसेन शास्त्री।

———

सन् ३० के प्रथम प्रभात

के

आलोक की प्रथम किरण

को

**समर्पण**

# २१ बनाम ३०

## पहला अध्याय

### पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा।

——:o——

गत वर्ष का भीष्म प्रतिज्ञा के आधार पर महात्मा गान्धी ने सन् २६ के अन्तिम क्षण व्यतीत होने पर, १२ बज कर ३ मिनिट पर अपनी पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा लाहौर की राष्ट्रीय महासभा की वेदी पर से कर दी है।

वह प्रस्ताव जो भारतवर्ष के ३२ करोड़ निवासियों के १५ हजार अन्यतम प्रतिनिधियों ने अपने छलकते हुए हृदयों से स्वीकार किया है वह यह है—

"यह कॉंग्रेस-कार्य-कारिणी समिति के उस कार्य को मञ्जूर करती है जो उसने वायसराय की ३१ अक्टूबर वाली औपनिवेशिक स्वराज्य-सम्बन्धी घोषणा पर कॉंग्रेस नेताओं तथा दूसरे दलों के नेताओं के हस्ताक्षर से निकले हुये वक्तव्य के सम्बन्ध में किया है और, स्वराज्य सम्बन्धी राष्ट्रीय आन्दोलन

के निपटारे के लिये वायसराय ने जो-जो उद्योग किया है यह कांग्रेस उस की कदर करती है मगर उसके बाद जो कुछ कार्रवाई हुई हैं और महात्मा गान्धी, पं० मोतीलाल नेहरू तथा दूसरे नेताओं से वायसराय की बात चीत का जो नतीजा हुआ है उस का विचार करके इस कांग्रेस की राय है कि वर्तमान अवस्था में कांग्रेस के प्रतिनिधियों को सम्मेलन में भेजने से कुछ भी लाभ न होगा, इसी लिये यह कांग्रेस अपने गत वर्ष के कलकत्ते वाले निश्चय के अनुसार घोषित करती है कि कांग्रेस के पहले नियम में जो 'स्वराज्य' शब्द है उस का अर्थ 'पूर्णस्वाधीनता' होगा, और यह भी घोषित करती है कि नेहरू कमेटी की रिपोर्ट की सारी योजना रद्द हो गई और आशा करती है कि अब से सभी कांग्रेस वाले अपना सारा ध्यान हिन्दोस्तान को पूर्ण रूप से स्वाधीनता प्राप्त कराने में लगावेंगे।"

"स्वाधीनता के संग्राम की आरम्भिक कार्रवाई के लिये और कांग्रेस की नीति को यथा सम्भव परिवर्तित ध्येय पर चलाने के लिये-यह कांग्रेस केन्द्रीय और व्यवस्थापक सभाओं तथा सरकार द्वारा नियुक्त कमेटियों के बहिष्कार का निश्चय करती है और कांग्रेस वालों तथा दूसरे लोगों से कहती है कि राष्ट्रीय आन्दोलन में शामिल हो कर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आगे के चुनाव में शामिल न हों और कौंसिलों

तथा कमेटियों के वर्तमान कांग्रेस मेम्बरों को आदेश करता है कि व इस्तीफा देदें"।

"यह कांग्रेस देशवासियों से अपील करती है कि लोग मुस्तैदी के साथ कांग्रेस के रचनात्मक कार्य क्रम को पूरा करें, और भारतीय कांग्रेस कमेटी को अधिकार देती है कि जब वह उचित समझे तो किसी खास स्थान में या और जगह सविनय अवज्ञा का कार्य क्रम जारी करदे जिसमें कर न देना भी शामिल हो और उस में आवश्यक सावधानता का ध्यान रक्खे।"

प्रस्ताव पर बोलते हुये महात्मा जी ने एक मर्मस्पर्शी अपील की—आपने कहा कि "मेरी आत्मा नौजवान है अगर आपके साथ चलना सम्भव हो तो मैं चलने को तैय्यार हूं, मेरी राय में इस समय जितना बढ़ना सम्भव है उतना बढ़ने की व्यवस्था कार्य्यकारिणी समति के प्रस्ताव में की गई है- अगर एक कदम भी इससे आगे बढ़ियेगा तो खन्दक में गिरियेगा।

दुनिया की नज़र हम पर है, उसे यह कहने का मौका न दीजिये कि इस महत्व के दिन और इस प्रस्ताव के ऊपर भी हम एक न हो सके—मैंने आपके धैर्य की कठोर परीक्षा ली है मैं सिर्फ एक बात कहता हूँ जब तक मैं ज़िन्दा हूँ कुछ और सब्र कीजिये।"

लोगों को मोहित करने के लिये जादूगर महात्मा के यह जादू भरे शब्द काफ़ी थे और यह प्रस्ताव 'महात्मा गाँधी की जय' की गर्जना के साथ पास हो गया। इसके बाद राष्ट्रपति जवाहर लाल नेहरू ने स्वतन्त्र भारत के नव वर्ष की बधाई दी।

पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा करके महात्मा गान्धी ने इस बार सारे देश को मानो जलती हुई भट्टी में डाल दिया है। यदि घोषणा के अनुसार देश ने स्वाधीनता की ओर अग्रसर होने की सच्ची चेष्टा की, तो मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ कि सन् तीस भारत वर्ष के लिए बड़ा भयानक साल होगा।

मेरी इस धारणा के दो ज़बर्दस्त कारण हैं—देश को अग्रसर होना ही पड़ेगा चूंकि घोषणा महात्मा गान्धी ने की है और वे अब प्राण देकर भी विश्राम लेने वाले जीव नहीं हैं। गत वर्ष महात्मा गाँधी ने देश भर में घूम कर अपनी शक्ति को तोल लिया है और वे एक दम निराश नहीं हैं यदि ऐसा होता तो निश्चय महात्मा गाँधी इस ज़बर्दस्त जवाबदेही को सिर पर न लेते। परन्तु महात्मा जी ने ऐसे नाज़ुक मौके पर, ऐसी भीषण घोषणा करने का इरादा पक्का करने पर भी इस बार काँग्रेस के सभापति का स्थान स्वीकार न कर और उसे प० जवाहरलाल नेहरू को बलात् देकर युवक हृदयों को बहुत स्वाधीन कर दिया है और यह काम असाधारण जोखिम से भरा हुआ है।

संसार के सभी देशों के युवक राष्ट्रीय भावना में गर्म दल के होते ही हैं। भारतीय युवकों के उग्र भाव आज छिपे नहीं हैं, भारत के युवकों के हृदय में जिस तेजी से गरम दल के भाव पैदा हुए हैं और वे जिस साहस और त्याग का परिचय इन पिछले दिनों में दे चुके हैं वह साधारण नहीं है। परन्तु जैसा कि महात्मा जी का मन्तव्य है और जो वास्तव में यथार्थ बात है कि भारत वर्ष जैसे विशाल देश का—प्रतापी ब्रिटेन की साम्राज्य सत्ता पर विजय प्राप्त कर पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करना उन उपायों से बिलकुल सम्भव नहीं है जिन्हें—ये वीर युवक उपयोग में अब तक लाते रहे हैं। ब्रिटेन की महा शक्तियों को विजय करने के लिये देश को असाधारण सामूहिक त्याग, संगठन, और सहिष्णुता एवं स्थैर्य को ज़रूरत है, जिसका कि अभी देश में बड़ा अभाव है।

महात्मा गान्धी ने हठ पूर्वक देश पर युवक संघ का प्रभुत्व होने दिया है, यह केवल भारत ही ने नहीं पृथ्वी भरने चकित होकर देखा है, परन्तु संसार को इस बार इस प्रबल और महान् घटना से उतना भय और आशंका नहीं हुई जितनी सन् २१ में वर्धमान असहयोग आन्दोलन से होगई थी। उस असाधारण कार्य क्रम ने संसार की महाशक्तियों की राजनैतिक दृष्टि भारत के इस सच्चे आन्दोलन की ओर फेरी थी और यह भारत इस निस्सहाय अवस्था में भी कुछ कर गुज़रेगा

ब्रिटेन की सत्ता एवं पृथ्वी की महाशक्तियों को भी भास गया था।

इस बार हम सन् तीस के प्रभाव में अब सोते हुये उठे हैं तब हमने अपनी आत्मा को स्वाधीन भारत की घोषणा के प्रभाव से ओत प्रोत पाया है, परन्तु इस असाधारण चीज़ की प्राप्ति से जो आनन्द हृदय में होना चाहिये वह हमें नहीं हुआ है, बल्कि एक बोझ छाती पर रखागया है और इस का एक ही कारण है, कि वर्तमान परिस्थिति और कार्य क्रम के देखते—देश इस घोषणा के अनुरूप स्वाधीन हो सकेगा इस में हमें घोर सन्देह है। भारतवर्ष के पूर्ण स्वाधीन होने का समय अभी किसी भी तरह हमें निकट नहीं दीख रहा है।

यह बात सच है कि महात्मा गान्धी अपने प्राणों की आहुती देने का सुयोग खोज रहे हैं इस लिये हलका और सीधा प्रोग्राम उनके हृदय से निकलना सम्भव ही नहीं हो सकता। परन्तु यह बात भी निश्चित है कि आज महात्मा गान्धी सरलता से अकेले आत्म आहुति नहीं देसकते, पंजाब के शेर की अपमृत्यु मालूम होता है कि भारतवर्ष ने चुपचाप सहन करली है और साधारण दृष्टि से अगर देखा जाय तो यह कहा जासकता है कि कदाचित महात्मा जी के प्राणों पर भी

परन्तु आँखों वाले देख सकते हैं कि देश की राष्ट्रीयता के हृदय में जो दुधर्ष रोष उत्पन्न होगया है वह लाला जी के प्राणों का मोल है और यह सम्भव ही नहीं हो सकता कि महात्मा जी अपने प्राणों पर खेल जायं और देश का वातावरण सोता रहे। अब कठिनता यह है कि महात्मा जी जो कुछ करने वाले हैं उसे बिलकुल उन्हीं की पद्धति पर आदि से अन्त तक निबाहना इस समय देश का शक्ति से बाहर है, ऐसी अचानक विपत्तियाँ जो आज देश के सिर पर सवार हैं, और ऐसी प्रचंड बाधाएं जो उसकी स्वाधीनता के मार्ग में अड़ी हुई हैं क्रोध और अविचार से नहीं दूर की जा सकतीं। उसके लिये बड़ा भारी संयम, जबरदस्त धैर्य और अचल सहिष्णुता की आवश्यकता है जो देश में है ही नहीं।

महात्मा जी की यह घोषणा बड़ी तेज़ी से समुद्रों को चीरती हुई और पर्वतों को लांघती हुई संसार के दरवाज़ों पर पहुँच गई है और आज सारा संसार भारत की जवानी और बुढ़ापे के एक ही प्राण के इस निश्चय को क्रियात्मक रूप में देखने को उत्सुक है। संसार पर और खास कर ब्रिटन पर यह घटना कितना बड़ा प्रभाव रखती है। इसका परिचय एक ब्रिटिश पत्र के यह कहने से मिलता है "आज भारत से हमारी सत्ता उठ गई"

लाहौर के राष्ट्रीय सभा के अवसर पर जो वक्तव्य प्रगट किये गए वह इस बात को स्पष्ट करते हैं कि देश की

बेचैनी इस समय देश को पूर्ण अहिंसक नहीं बनाये रख सकती, जिसका कि महात्मा गान्धी के कार्यक्रम में एक बहुत ही आवश्यक भाग है।

पूर्ण स्वाधीनता के लक्ष को सामने रखकर यदि देश कार्य रूप से अग्रसर हो तो सब से पहली टक्कर जो उस को झेलनी पड़ेगी वह गवर्नमेंट की दमन नीति की चोट होगी, वह चोट इतनी साधारण नहीं है जिस की चर्चा हो न की जाय। यह बात तो प्रगट हो चुकी है कि ब्रिटिश गवर्नमेंट ने सन् ३० में भारतवर्ष से मुकाबला करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है, और अपनी मुलाकात में वायसराय ने स्पष्ट ही भारत वर्ष को उत्तर दायित्व देने से इन्कार कर दिया है।

अगर भारतवर्ष को आज स्वाधीनता न प्राप्त हो तो भी वह बड़ी खुशी से अभी पचास साल ज़िन्दा रह सकता है और अपने सङ्गठन और बल को उत्तरोत्तर बढ़ा सकता है। परन्तु ग्रेटब्रिटेन यदि भारत की अभिलाषा के सामने परास्त हो जाय तो वह निस्सन्देह एक ही वर्ष में बरबाद हो जायगा। भारतवर्ष ग्रेटब्रिटेन का एक मात्र जीवन अवलम्ब है और इस लिये भारतवर्ष को अपने आधीन बनाये रखने के लिए सारी अंग्रेज जाती आवश्यकता पड़ने पर एक बार जूझ मरेगी। इस में तो कोई शक नहीं कि आज साम्यवाद की बदौलत इङ्गलैण्ड में भी यह भाव फैला हुआ है कि कमज़ोर से कमज़ोर

और छोटी से छोटी कौम को भी आत्मशासन का स्वाभाविक अधिकार प्राप्त है और जैसा कि एक बार श्रीयुत सकलातवाला ने कहा था " वर्तमान साम्राज्यवाद के पृष्ठपोषक इंगलैंड में भी मुश्किल से ६० हज़ार मनुष्य होंगे" परन्तु हम इस बात को गम्भीरता पर विचार करना चाहते हैं कि भारत की पूर्ण स्वाधीनता को इंगलैंड का क्या कोई भी उदार से उदार दल सहन कर सकेगा ? औपनिवेशिक स्वराज्य तो एक ऐसी सरल चीज़ है जहाँ समस्त जातियों का और खास कर ग्रेट ब्रिटेन का व्यापारिक स्वार्थ अबाध रूप से चल सकता है, इस के सिवा ग्रेट ब्रिटेन की राजनीतिक मैत्री भी उसका एक अनिवार्य रूप है इस लिये औपनिवेशिक स्वराज्य का समर्थन इंगलैण्ड के जन बल से होना कदाचित सम्भव होता, परन्तु पूर्ण स्वाधीनता का ध्येय तो ग्रेट ब्रिटेन के विध्वंस का प्रश्न है, हम नहीं समझते कि ब्रटेन का जन बल इस प्रश्न का समर्थन कर अथवा उदासीन भी रह सकेगा । फिर, भारत के शासन में इंगलैंड का जन बल बहुत दूर का हाथ रखता है और भारत सरकार को उसका स्याह सफेद करने का असाधारण अधिकार प्राप्त है इस के सिवा वह बुरी तरह से इण्डिया ऐक्ट के बन्धन में बन्धी हुई है जो निर्धारित रीति से इधर उधर हो ही नहीं सकता । तब एक ही बात स्पष्ट है कि भारत वर्ष को इस पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा की पूर्ति के लिये ब्रिटिश सत्ता

से युद्ध करना पड़ेगा और चूंकि इस युद्ध का नेतृत्व महात्मा गान्धी के हाथ में रहेगा इस लिये यह निश्चय है कि देश को अपने युद्ध की नीति पूर्ण अहिंसात्मक बनाई रखनी पड़ेगी क्योंकि अहिंसा महात्मा जी का सर्वोपरि शस्त्र है और सारे संसार मे इसी के कारण उन्हें महत्व का पद दिया है। परन्तु ब्रिटिश सत्ता को खुली आज़ादी है कि वह अपनी मर्यादा की रक्षा के लिये अपने तमाम सामरिक बल और नैतिक छलों का उपयोग करे—और यदि महात्मा गान्धी का समस्त भारतीय युवक दल को लेकर अग्रसर होना अनिवार्य है तो ब्रिटेन सत्ता का अपनी मर्यादा की रक्षा के लिये, अपने समस्त बल का उपयोग करना भी अनिवार्य है, और इसी लिये सन् ३० में भारत को जलती हुई भट्टी में तपना पड़ेगा इस में ज़रा भी सन्देह नहीं।

# दूसरा अध्याय

## जवाहर लाल नेहरू

---

जवाहर लाल नेहरू एक प्रचण्ड देशभक्त प्राणी हैं, यह निश्चय है कि वे जीते जी देश के उन्माद से मुक्त होने वाले जीव नहीं। वे पोतड़ों के अमीर और प्रतापी पिता के इकलौते पुत्र हैं। उस दिन लाहौर में जब राष्ट्रपति के नाते उनका जुलूस निकल रहा था, और अनारकली में उनके पिता पं० मोतीलाल नेहरू ने उन पर पुष्प वर्षा की थी जिस के उत्तर में उन्होंने उन का अभिवादन किया था। यह दृश्य साधारण न था, वे स्वाधीनता की वेदी पर जूझ मरने वाले सच्चे योद्धा हैं। यह वीर पुरुष सब प्रकार के राजसी ठाठ त्यागकर देश के लिये जेल जाता है उधर उसकी सुकुमार धर्मपत्नी चिन्ता में पड़ क्षय रोग से ग्रसित होती है। यदि इस व्यक्तिगत जीवन के सच्चे पहलू पर दृष्टि दी जाय तो यह एक बहुत ही करुणा पूर्ण आत्मत्याग

का नमूना प्रतीत होता है । उनके देश के प्रति उत्कट भाव उनके उस भाषण से प्रकट होते हैं, जो उन्होंने राष्ट्रपति की हैसियत से राष्ट्रीय महा सभा की वेदी से दिया था । हम उसे यहां उद्धृत करते हैं ।

बाद में या तो अपना जीवन ही अर्पण कर दिया या अपना उज्ज्वल युवाकाल कष्टों और मुसीबतों में बिताया है। उन में से कितनों ही के नाम भी हमें नहीं मालूम हैं। उन्हों ने चुपचाप काम करके कष्ट सहे और सर्वसाधारण से प्रशंसा पाने की कभी आकांक्षा नहीं की। उन्हों ने अपने हृदय के रक्त से सींचकर भारत की स्वतन्त्रता के छोटे से नरम पौधे को पाला था। जब हम में से कितने ही लोग टालमटोल और समझौता करते थे, वे वीर डटे रहे और डंकेकी चोट कहते रहे कि देशवासियों को स्वतन्त्रता का अधिकार है संसार के सामने घोषणा की कि भारत की इस गिरी हुई अवस्था में भी उसके भीतर जीवन की चिनगारी बनी हुई है क्योंकि वह अत्याचार और गुलामी के आगे सिर झुकाने से इनकार करता है। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन का भवन एक एक ईंट जोड़ने से बना है और भारत बहुधा अपने शहीदों की पड़ी हुई लाशों पर से होकर आगे बढ़ा है। पुराने महारथी हमारे साथ भले हो न हों, पर उन का साहस हमारे साथ अब भी है और आज भी भारत यतिन दास और विजय जैसे शहीद पैदा कर सकता है। आज आप इसी सुन्दर मीरास का प्रबंध हमारे हाथ सौंपना चाहते हैं। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि इस प्रतिष्ठित पदपर संयोगवश ही पहुंच गया हूं। आप की इच्छा किसी दूसरे को ही चुनने की थी जो आज संसार में सर्वोपरि है और उससे बढ़िया चुनाव दूसरा

का नमूना प्रतीत होता है। उनके देश के प्रति उत्कट भाव उनके उस भाषण से प्रकट होते हैं, जो उन्होंने राष्ट्रपति की हैसियत से राष्ट्रीय महा सभा की वेदी से दिया था। हम उसे यहाँ उद्धृत करते हैं।

## शहीदोंकी याद

भाइयो !

यह राष्ट्रीय कांग्रेस भारत की राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिये चवालीस वर्ष से उद्योगशील है। इतने जमाने में इसने धीरे धीरे किन्तु निश्चय ही राष्ट्रीय जागृति पैदा की है और आन्दोलनको जन्म दिया है। आज हमारे भाग्यका फैसला होनेका प्रश्न उपस्थित है इसलिये जो लोग यहाँ एकत्र हैं उन सबका ध्यान सब से पहले उन की ओर जाता है जिन्हों ने अब से पहले अपना जीवन इस लिये समाप्त किया कि जिस में जो लोग उनके पीछे हों उन्हें सफलता का आनन्द प्राप्त हो सके। हमारे कितने ही पुराने महारथी अब हमारे बीच नहीं हैं और हम उन्हीं के उद्योगोंकी यहाँ खड़े होकर निन्दा करते हैं। संसार का यही कायदा है। लेकिन आपस में से कोई भी उन्हें या उनके उस काम को भुला सकता जो उन्हों ने स्वतंत्र भारत की नींव रखने में किया है। हम में से कोई उन महान् पुरुषों और देवियों को नहीं भुला सकता जिन्हों ने परिणामों की कुछ भी परवाह न करते हुए विदेशियों के आधिपत्य के प्रति-

याद में या तो अपना जीवन ही अर्पण कर दिया या अपना उज्ज्वल युवाकाल कष्टों और मुसीबतों में बिताया है। हम में से कितनों ही के नाम भी हमें नहीं मालूम हैं। उन्हों ने चुपचाप काम करके कष्ट सहे और सर्वसाधारण से प्रशंसा पाने की कभी आकांक्षा नहीं की। उन्हों ने अपने हृदय के रक्त से सींचकर भारत की स्वतन्त्रता के छोटे से नरम पौधे को पाला था। जब हम में से कितने ही लोग टालमटोल और समझौता करते थे, वे वीर डटे रहे और डंकेकी चोट कहते रहे कि देशवासियों को स्वतन्त्रता का अधिकार है संसार के सामने घोषणा की कि भारत की इस गिरी हुई अवस्था में भी उसके भीतर जीवन की चिनगारी बनी हुई है क्योंकि वह अत्याचार और गुलामी के आगे सिर झुकाने से इनकार करता है। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन का भवन एक एक ईंट जोड़ने से बना है और भारत बहुधा अपने शहीदों की पड़ी हुई लाशों पर से होकर आगे बढ़ा है। पुराने महारथी हमारे साथ भले हो न हों, पर उन का साहस हमारे साथ अब भी है और आज भी भारत यतिन दास और विजय जैसे शहीद पैदा कर सकता है। आज आप इसी सुन्दर मीरास का प्रबंध हमारे हाथ सौंपना चाहते हैं। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि इस प्रतिष्ठित पदपर संयोगवश ही पहुंच गया हूँ। आप की इच्छा किसी दूसरे को ही चुनने की थी जो आज संसार में सर्वोपरि है और उससे बढ़िया चुनाव दूसरा

कोई होही नहीं सकता था। किन्तु उस पुरुष ने भाग्य के साथ साज़िश करके आपकी और मेरी इच्छाके विरुद्ध मुझे यहाँ इस भयंकर जिम्मेवारी के स्थान पर ढकेल दिया। आपने मुझे यहाँ इस धर्म संकट में डाल दिया है क्या इस के लिये मुझे आपके प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिये? किन्तु आपने मेरे ऊपर जो विश्वास प्रकट किया है यद्यपि मैं अयोग्य हूँ तो भी उसके लिये मैं आपका कृतज्ञ हूँ।

## एशियाका महत्व।

आप यहाँपर हमारे सामने उपस्थित कितने ही अत्यावश्यक राष्ट्रीय प्रश्नोंपर विचार करेंगे और सम्भव है कि आप के निर्णय ऐसे हों जिन से भारतीय इतिहास का मार्ग ही बदल जाय। लेकिन केवल इसी देशके निवासियों के सामने प्रश्न नहीं उपस्थित है। सारे संसारके सामने कठिन समस्या उपस्थित है और प्रत्येक देश और उसके निवासी परिवर्त्तन काल से गुज़र रहे हैं। विश्वास का युग बीत गया और प्रत्येक बात पर प्रश्न किया जाता है चाहे वे बात हमारे पूर्वजों को कितनी ही स्थायी और पवित्र अंचली रही हों। सर्वत्र सन्देह और अशान्ति है और राज्य तथा समाज की बुनियादों में भारी परिवर्त्तन हो रहा है। स्वतंत्रता, न्याय, सम्पत्ति और यहाँ तक कि कुटुम्ब सम्बन्धी पुराने स्थिर विचारों पर प्रहार हो रहे हैं जिन का

परिणाम क्या होगा सो नहीं कहा जा सकता। यह समय ऐसा है जब संसार में परिवर्तन हो रहा है और उस के फल स्वरूप नयी व्यवस्था का जन्म होने वाला है। कोई नहीं कह सकता कि भविष्य के गर्भ में क्या है, किन्तु हम कुछ विश्वास के साथ कह सकते हैं कि एशिया और भारतका भी संसार की भावी नीति में निर्णयात्मक भाग होगा। यूरोपियनों के आधिपत्य का छोटा सा दिन अपने अन्त को पहुंच रहा है। यूरोप अब कार्य और महत्व का केन्द्र नहीं रहा है। भविष्य अब अमरीका और एशिया पर निर्भर करता है। झूठे और अपूर्ण इतिहास के कारण हम में से कितनों हो को विश्वास करा दिया गया है कि युरोपक सदा संसार पर प्रभुत्व रहा है और एशिया सदा पश्चिम की सेनाओं के सामने झुकता रहा है। हम भूल गये हैं कि एशिया की फौजों ने युरोप पर विजय प्राप्त की थी और आज कल का युरोप एशिया के उन्हीं आक्रमणकारियों के वंशजों से आबाद है। हम भूल गये हैं कि भारत ही था जिसने सिकन्दर की सैनिक शक्ति तोड़ी थो। विचार निस्सन्देह एशिया और खासकर भारत का भूषण था, पर कार्यक्षेत्र में भी एशिया का कार्य ऐसा ही महान् रहा है। किन्तु हम में से किसी की यह इच्छा नहीं कि एशिया या युरोप की सेनायें पुनः महाद्वीपों पर आक्रमण करें। काफ़ी चढ़ाईयां हो चुकी हैं।

## भारत की सामाजिक व्यवस्था ।

आज भारत संसार के आन्दोलन का एक भाग है केवल चीन, तुर्की, फारस और मिश्र ही नहीं, बल्कि रूस और पश्चिम के अन्य देश भी इस आन्दोलन में भाग ले रहे हैं और भारत अपने को इससे अलग नहीं रख सकता। हमारे प्रश्न अलग हैं, जो पेचीले और कठिन हैं। उनसे हम दूर भाग कर संसार के व्यापक प्रश्नों की आड़ नहीं ग्रहण कर सकते। किन्तु यदि हम संसार की अपेक्षा करेंगे तो इसकी जोखिम हमें उठानी पड़ेगी। आज जो सभ्यता है यह किसी एक देश के निवासियों या राष्ट्रकी रचना या बपौती नहीं है। इसमें सभी देशों का भाग है। अगर भारत के पास संसार को देने के लिए कोई सन्देश है जैसा कि मेरा विश्वास है, तो इसे अन्य देशों के निवासियों के सन्देशों से भी बहुत कुछ सीखना है। जब सभी बातें बदल रही हैं तब भारतीय इतिहास के लम्बे रास्ते को याद करना अच्छा है। भारत की समाजिक व्यवस्था कितने ही विदेशी प्रभावों और हजारों वर्षों के परिवर्तनों और झगड़ों के बाद भी दृढ़ बनी हुई है, यह संसार की एक आश्चर्यजनक बात है। यह उनके मुकाबले में इसीसे बनी हुई है, क्योंकि यह सदा उनको अपने भीतर लेती और उनके प्रति

अस्य पैदा करना रहा है। आर्य और अनार्य लोग एक साथ बस गये और उन्होंने स्वीकार किया कि प्रत्येक को अपनी सभ्यता का अधिकार है और पारसियों की तरह बाहर से जो लोग आये उन्हें सामाजिक व्यवस्था में स्थान मिला। मुसलमानों के आने से समतुल्यता में कुछ गड़बड़ पैदा हुई किन्तु भारत ने उसे पुनः ठीक करने का प्रयत्न किया और बहुत कुछ सफलता भी हुई। हमारे दुर्भाग्य से हम मत भेद मिटा भी नहीं पाये थे कि राजनीतिक व्यवस्था टूट गयी, अंग्रेज़ आ गये और हम गिर गये जैसे स्थायी समाज की स्थापना में भारत को भारी सफलता मिली थी वैसे ही एक खास बात में वह असफल रहा जिसके कारण उनका पतन हुआ और अबतक पददलित है। समानता का प्रश्न नहीं हल किया गया। भारत ने जान बूझ कर इसकी उपेक्षा की और अपनी सामाजिक व्यवस्था असमानता की नींव पर खड़ी की जिसका भयंकर परिणाम हमारे सामने है कि करोड़ों देशवासी अछूत समझे जाने लगे जो अभी कल तक वंचित थे और उन्नति का उन्हें कुछ भी अवसर नहीं प्राप्त था।

## गुलामी की बेड़ियाँ काटो।

जो भी जिस समय युरोप में धर्मों के लिये युद्ध हो रहे थे और ईसाइ मत के दो फ़िर्क़े ईसामसीह के नाम पर एक

## भारत की सामाजिक व्यवस्था ।

आज भारत संसार के आन्दोलन का एक भाग है केवल चीन तुर्की, फारस और मिश्र ही नहीं, बल्कि रूस और पश्चिम के अन्य देश भी इस आन्दोलन में भाग ले रहे हैं और भारत अपने को इससे अलग नहीं रख सकता। हमारे प्रश्न अलग हैं, जो पेचीले और कठिन हैं। उनसे हम दूर भाग कर संसार के व्यापक प्रश्नों की आड़ नहीं ग्रहण कर सकते। किन्तु यदि हम संसार की अपेक्षा करेंगे तो उसकी जोखिम हमें उठानी पड़ेगी। आज जो सभ्यता है वह किसी एक देश के निवासियों या राष्ट्रकी रचना या बपौती नहीं है। इसमें सभी देशों का भाग है। अगर भारत के पास संसार को देने के लिए कोई सन्देश है जैसा कि मेरा विश्वास है, तो इसे अन्य देशों के निवासियों के सन्देशों से भी बहुत कुछ सीखना है। जब सभी बातें बदल रही हैं तब भारतीय इतिहास के लम्बे रास्ते को याद करना अच्छा है। भारत की समाजिक व्यवस्था कितने ही विदेशी प्रभावों और हजारों वर्षों के परिवर्तनों और झगड़ों के बाद भी दृढ़ बनी हुई है, यह संसार की एक आश्चर्यजनक बात है। यह उनके मुकाबले में इसीसे बनी हुई है, क्योंकि यह सदा उनको अपने भीतर लेती और उनके प्रति सहिष्णुता प्रकट करती रही है। इसका उद्देश्य भिन्न भिन्न सभ्यताओं का मूलोच्छेद करना नहीं बल्कि उनके बीच सामं-

पेचीला होने से यही हल करने में कठिनाई होती है। गत वर्ष सर्व-दल कमेटी ने इसे हल करने का भारी प्रयत्न किया था और बहुत कुछ काम भी उस ओर हुआ था, किन्तु हमें यह तो मानना ही होगा कि प्रयत्न पूर्णरूप से सफल नहीं हुआ। जिस तरह प्रश्न का हल सोचा गया उसका हमारे बहुतेरे मुसलमान और सिक्ख भाइयों ने घोर विरोध किया तथा फ़ौजदी के आँकड़ों को लेकर बखेड़ा खड़ा किया गया। भय और अविश्वास कोरे तर्क से नहीं मिटा करते। उनको तो विश्वास और उदारता ही ने मिटा सकते हैं। मैं आशा करता हूँ कि भिन्न भिन्न जातियों के नेता अधिक परिमाण में यह विश्वास और उदारता दिखायेंगे। अगर हम सभी लोग एक गुलाम देश के भीतर गुलाम हैं तो हम अपना या अपनी जाति का क्या भला कर सकते हैं? और इसमें हमारी हानि क्या हो सकती है कि हम एक बार भारत की बेड़ियाँ काट दें और फिर स्वतन्त्रता के वायुमण्डल में सांस लें? क्या हम यह चाहते हैं कि वे विदेशी लोग जो हममें से नहीं हैं और जिन्होंने हमें गुलामी में रख छोड़ा है हमारे छोटेसे अधिकारों के रक्षक हों जब कि वे हमें स्वतन्त्रता का अधिकार देने से इनकार करते हैं? कोई बहुपक्ष ठान ठाने हुए अल्पपक्ष को कुचल नहीं सकता और न किसी अल्प पक्ष की काफी रक्षा ही किसी व्यवस्था सभा में उसके कुछ अधिक मेम्बर हो जाने

दूसरे का कतल करने में लगे हुए थे भारत उस समय सहिष्णु बना हुआ था यद्यपि दुःख है कि आज वह सहिष्णु नहीं है। कुछ धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करके युरोप ने राजनीतिक स्वतंत्रता और राजनीतिक तथा कानूनी समानता के लिये प्रयत्न किया। यह सब प्राप्त करके भी वह देखता है कि आर्थिक स्वतंत्रता और समानता के बिना इनका कुछ भी महत्व नहीं है। इसीसे आज राजनीतिका बहुत अर्थ नहीं रहा है और सबसे अधिक महत्व का प्रश्न सामाजिक और आर्थिक समानता का है। भारत को भी यह प्रश्न हल करना होगा जिसके बिना उसकी राजनीतिक और समाजिक व्यवस्था स्थायी नहीं बन सकती। जरुरी नहीं कि यह प्रश्न किसी अन्य देश की तरह ही हल किया जाय। इसके स्थायित्व के लिये आवश्यक है कि यह प्रश्न इसी देश के निवासियों की बुद्धि के अनुसार हल हो और इसी के विचार और सभ्यता के फलस्वरूप हो। जब यह हल हो जायगा तो भिन्न २ जातियों के जिन मतभेदों से हमें कष्ट झेलना पड़ता है और हमें स्वतंत्रता नहीं मिल पाती थे, स्वयं ही मिट जायेंगे। वस्तुतः असली मतभेद तो मिट चुके हैं, किन्तु एक दूसरे के प्रति भय, अविश्वास और सन्देह बने हुए हैं जो झगड़ों के बीज बोते हैं। हमारे सामने मतभेदों को मिटाने का प्रश्न नहीं है। वे साथ साथ बने रह सकते हैं। प्रश्न तो यह है कि भय और सन्देह कैसे मिटाया जाय और

होगा। पर इस देश में अब भी जन्म को प्रधानता दी जाती है इसलिए जन्मसे हिन्दू होनेके कारण मैं हिन्दुओं के नेताओं से यह निवेदन करूंगा कि वे इस उदारता में पहले आगे बढ़ें। उदारता केवल सदाचार ही नहीं है बल्कि प्रायः अच्छी नीति और अच्छा उपाय भी है। यह तो मैं समझ ही नहीं सकता कि स्वतन्त्र भारतमें हिन्दू कभी अशक्त हो सकते हैं। स्वयं मैं तो अपने मुसलमान और सिक्ख भाइयों से यहाँ तक कह सकता हूँ कि जो आप चाहें ले लें मैं उसका विरोध न करूंगा मैं जानता हूँ कि समय जल्द आ रहा है जब हमारे झगड़े आर्थिक आधार पर होंगे। इस बीच हमें इस की परवाह नहीं कि हमारे आपसके समझौते क्या हैं मगर शर्त यह है कि हम कोई ऐसी रुकावट न खड़ी करें जो हमारी भावी उन्नतिके मार्ग में बाधक हो।

## स्वतन्त्रता की घोषणा करो।

वास्तव में समय आ चुका है जब हमें सर्व दल की (नेहरू) रिपोर्ट को अलग हटाकर बेरोक टोक अपने लक्ष्य की ओर बढ़ना चाहिए। आप को याद है कि पिछली कांग्रेस ने सर्वदल की स्कीम को स्वीकार करने के लिए एक वर्ष की मुहलत दी थी। वह वर्ष प्रायः बीत चुका है। अब उस निर्णय का स्वाभाविक परिणाम यह है कि यह कांग्रेस स्वतन्त्रता की

से हो सकती है। हमें याद रहे कि आज संसारमें प्रायः सर्वत्र बहुत हो अल्पसंख्यक लोगोंके हाथमें शक्ति और बल है और बड़े बड़े पदों पर उन्हीं का प्राधान्य है।

## हठधर्मी का अन्त करो।

मैं धर्म में हठ और पक्षपात नहीं पसन्द करता और मुझे हर्ष है कि ये कमज़ोर हो रहे हैं। न मैं साम्प्रदायिकता को ही किसी रूपमें पसन्द करता हूँ। मैं यह नहीं समझ सकता कि राजनीतिक या आर्थिक अधिकारों का दारमदार किसी मज़हब या जाति की मेम्बरी के ऊपर क्यों हो। यह तो मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि धर्म और सभ्यता में प्रत्येक को स्वतन्त्रता का अधिकार है। खासकर भारतमें तो जिसने सदा इन अधिकारों को स्वीकार किया और दिया है, इनको बनाये रखने में कोई कठिनाई ही न होनी चाहिए। हमें तो केवल ऐसा रास्ता ढूंढ निकालना है जिससे इस भय और अविश्वास का मूलोच्छेद हो सके जिसने हमारे सामने अन्धकार खड़ा कर रखा है। एक पराधीन जाति की राजनीति बहुत अंशों में भय और घृणा के आधार पर होती है और हम काफी से ज्यादा समय तक गुलामी में रहे हैं जिससे सहज ही छुटकारा नहीं पा सकते। मैं जन्मसे हिन्दू हूँ, पर नहीं जानता कि मेरा अपने को हिंदू कहना या हिन्दुओं की ओरसे बोलना कहाँतक उचित

होगा। पर इस देश में अब भी जन्म को प्रधानता दी जाती है इसलिए जन्मसे हिन्दू होनेके कारण मैं हिन्दुओं के नेताओं से यह निवेदन करूंगा कि वे ही उदारता में पहले आगे बढ़ें। उदारता केवल सदाचार ही नहीं है बल्कि प्राय अच्छी नीति और अच्छा उपाय भी है। यह तो मैं समझ ही नहीं सकता कि स्वतन्त्र भारतमें हिन्दू कभी अशक्त हो सकते हैं। स्वयं मैं तो अपने मुसलमान और सिक्ख भाइयों से यहां तक कह सकता हूँ कि जो आप चाहें ले ले मैं इसका विरोध न करूंगा मैं जानता हूँ कि समय जल्द आ रहा है जब हमारे झगड़े आर्थिक आधार पर होंगे। इस बीच हमें इस की परवाह नहीं कि हमारे आपसके समझौते क्या हैं मगर शर्त यह है कि हम कोई ऐसी रुकावटें न खड़ी करें जो हमारी भावी उन्नतिके मार्ग में बाधक हो।

## स्वतन्त्रता की घोषणा करो।

वास्तव में समय आ चुका है अब हमें सर्व दल को (नेहरू) रिपोर्ट को अलग हटाकर बेरोक टोक अपने लक्ष्य की ओर बढ़ना चाहिए। आप को याद है कि पिछली कांग्रेस ने सर्वदल की स्कीम को स्वीकार करने के लिए एक वर्ष की मुहलत दी थी। वह वर्ष प्रायः बीत चुका है। अब उस निर्णय का स्वाभाविक परिणाम यह है कि यह कांग्रेस स्वतन्त्रता की

घोषणा करे और उसे प्राप्त करने के लिए शक्ति संगठित करे। मुहलत के काल में न तो औपनिवेशिक स्वराज्य मिला और न सर्वदल सम्मेलन द्वारा प्रस्तावित शासन विधान ही। उस के बदले हमें कष्ट मिला तथा हमारे राष्ट्रीय और मजूर आन्दोलनों का और भी अधिक दमन किया गया तथा हमारे बहुत से भाई विदेशी गवर्नमेण्ट के द्वारा अलग कर रखे गये हैं। उनमें से कितने अधिक ऐसे हैं जो विदेशों में निर्वासन का जीवन बिता रहे हैं और उनके लिये इस देश में लौटने का सुभीता नहीं किया जाता। इस देश पर अधिकार रखने वाली सेना हमारे देश को अपने फौलादी पञ्जे में जकड़े हुए है और हमारे प्रभुओंका कोड़ा हर वक्त हमारे श्रेष्ठसे श्रेष्ठ पुरुषों पर पड़नेके लिये सदा तैयार रहता है यदि वे सिर उठाने का साहस करें। कलकत्ते के प्रस्ताव का जो उत्तर दिया गया है वह स्पष्ट और निश्चित है।

## समझौतेका प्रस्ताव धोखा है।

हाल में शान्तिका प्रस्ताव किया गया है। ब्रिटिश सरकार की ओर से वायसराय ने कहा है कि भारतके भावी शासन विधानपर सलाह करने को भारतीय नेता बुलाये जायंगे उनका अभिप्राय अच्छा और भाषा शान्ति की है। परन्तु हमें ब्रिटिश कूटनीति का काफी अनुभव है जिस से सावधान

रहना चाहिये। गवर्नमेंट के प्रस्ताव में किसी कार्य की प्रतिमा नहीं है। बहुत खींच खांच कर ही कहा जा सकता है कि कलकत्ते के प्रस्तावके बदले मे यह घोषणा है। भिन्न भिन्न राजनीतिक दलों के नेताओं ने उसके बाद हो मिलकर विचार किया और शान्तिके इच्छुक होने के कारण उन्होंने घोषणा का अच्छे से अच्छा अर्थ लगाया। पर साथ ही उसे स्वीकार करने के लिये नम्र शब्दों में शर्तें भी पेश कीं। हम में जो स्वतन्त्रता के पक्षवाले हैं उनमें से कितनों ही ने सन्देह किया कि यह हमें मार्ग भ्रष्ट करने और हमारे भीतर फूट डालने के लिये चाल है। बहुत सोच विचार कर हमने नेताओं के घोषणापत्र पर दस्तखत कर दिया। अच्छा किया या बुरा, यह हमें अभी नहीं मालूम। पीछे पार्लिमेण्ट में और उसके बाहर जो बातें कही गयीं उनसे रहा सहा सन्देह भी दूर हो गया और सरकारी प्रस्ताव का असली रहस्य मालूम हो गया। आप की वर्किंग कमेटी ने भी दरवाजा खुला रखा और अन्तिम निर्णयका भार इस कांग्रेस पर छोड़ दिया। पिछले दिनों भारत-सचिव ने पार्लिमेण्ट के अपने भाषण में यह सिद्ध करने का प्रस्ताव किया कि सरकार बराबर ही भारत के प्रति कार्यतः अपनी भलाई सिद्ध करती है। मि० बेन भारत के लिये कुछ करना और भारतियों का सद्भाव प्राप्त करना चाहते हैं लेकिन उनके तथा अन्यों के भाषणों से हमें कुछ और नहीं मालूम

होता। जिस औपनिवेशिक स्वराज्य के कार्य-रूप में होने की बात कही गयी है उससे भारत की लूट तो बन्द हुई नहीं है। दस वर्ष पहले के सुधारों से जनसाधारण के ऊपर बोझ और भी बढ़ गया है। हम हाईकमिश्नरी, राष्ट्रसंघ में प्रतिनिधित्व गवर्नरी और ऊंचे पदों के तो भूखे नहीं हैं। हम तो भारत के गरीबों का लुटा जाना बन्द करना और वास्तविक अधिकार पाना चाहते हैं। मि० बेन ने पिछले दस वर्ष के जो कारनामे पेश किये हैं उन के साथ हो उन्हें पंजाब के मार्शल ला, जलयाँवाला बाग का हत्याकांड, दमन और दोहन की भी गिनती कराना चाहिये थी जो तब से बराबर जारी है। उन की बातों से पता चलता है कि उन का औपनिवेशिक स्वराज इनेगिने भारतीयों को अधिकार देगा और जन साधारण का दमन और लूट और भी अधिक होगी।

## स्वतन्त्रता की घोषणा

यह कांग्रेस क्या करेगी ?-सहयोग की शर्तें पूरी नहीं की गयीं। जब तक वास्तविक स्वतन्त्रता की गारण्टी न मिले क्या हम सहयोगदान कर सकते हैं ? क्या हम सहयोग कर सकते हैं जब हमारे भाई जेल में हैं और दमन नीति जारी है ? शान्ति संगीन के बल नहीं हो सकती और यदि हमारे ऊपर विदेशियों का प्राधान्य बना रहना है, तो हमें कम से कम

यह स्वीकार तो न करना चाहिये । कलकत्ते के प्रस्ताव को मानने से तो हमारे सामने एक स्वतन्त्रता का ही लक्ष्य है। यह शब्द अच्छा तो नहीं है क्योंकि संसार में इस का अर्थ आज 'सब से अलग रहना' किया जाता है । पर स्वतन्त्रता से हमारा अभिप्राय ब्रिटिश प्राधान्य और साम्राज्य वाद से पूर्ण स्वतन्त्रता का है। स्वयं स्वतन्त्र होने के बाद मुझे कुछ भी सन्देह नहीं कि भारतवर्ष संसार के सहयोग और संघठन के प्रयत्न का स्वागत करेगा और संघ के लिये अपनी कुछ स्वतन्त्रता देने को भी तैयार होगा जिसका यह बराबरी का मेम्बर होगा। आज का ब्रिटिश साम्राज्य वैसा संघ नहीं और तब तक यह हो नहीं सकता जब तक यह करोड़ों आदमियों को अपनी अधीनता में रखे हुए और संसार का बहुत बड़ा भाग अपने कब्ज़े में वहाँ को निवासियों की इच्छा के विरुद्ध किये हुए है। यह तब तक स्वतन्त्र राष्ट्रों का संघ नहीं हो सकता जब तक इसका आधार साम्राज्यवाद है और इसकी रोज़ी का प्रधान साधन अन्य जातियों का शोषण करना है । वस्तुतः यह साम्राज्य एक प्रकार से धीरे धीरे छिन्न-भिन्न हो चला है इस की समतुल्यता अस्थायी है। इसका एक मेम्बर दक्षिण अफ्रीका प्रसन्न नहीं है और आयरिश फ्री स्टेट इस में रहने को राज़ी नहीं है। मिश्र अलग हुआ जा रहा है। भारत कामन-वैल्थ की बराबरी का मेम्बर कभी नहीं हो सकता जब तक

होता। जिस औपनिवेशिक स्वराज्य के कार्य-रूप में होने की बात कही गयी है उससे भारत की लूट तो बन्द हुई नहीं है। दस वर्ष पहले के सुधारों से जनसाधारण के ऊपर बोझ और भी बढ़ गया है। हम हाईकमिश्नरी, राष्ट्रसंघ में प्रतिनिधित्व गवर्नरी और ऊँचे पदों के तो भूखे नहीं हैं। हम तो भारत के गरीबों का लूटा जाना बन्द करना और वास्तविक अधिकार पाना चाहते हैं। मि० बेन ने पिछले दस वर्ष के जो कारनामे पेश किये हैं उन के साथ हो उन्हें पंजाब के मार्शल ला, जलया-नवाला बाग का हत्याकांड, दमन और दोहन की भी गिनती करानी चाहिये थी जो तब से बराबर जारी है। उन की बातों से पता चलता है कि उन का औपनिवेशिक स्वराज इनेगिने भारतीयों को अधिकार देगा और जन साधारण का दमन और लूट और भी अधिक होगी।

## स्वतन्त्रता की घोषणा

क्या करेगी ?—सहयोग की शर्तें पूरी नहीं की गयीं। जब तक वास्तविक स्वतन्त्रता की गारण्टी न मिले क्या हम सहयोगदान कर सकते हैं ? क्या हम सहयोग कर सकते हैं जब हमारे भाई लोग जेल में हैं और दमन नीति जारी है ? शान्ति संगीन के बल नहीं हो सकती और यदि हमारे ऊपर विदेशियों का प्राधान्य बना रहना है तो हमें कम से कम

हैं। भारतीय राजाओं के स्वार्थ, ब्रिटिश अफसरों, ब्रिटिश और भारतीय पूंजीपतियों तथा बड़े जमींदारों के स्वार्थ ब्रिटिश गवर्नमेंट के कारण हमारे भीतर घुसेड़ रक्खेगये हैं जो उनको रक्षा के लिये चिल्लाहट मचाते हैं। जिन अभागे करोड़ों जनसाधारण की वास्तव में रक्षा की आवश्यकता है वे मूक हैं और उनकी ओर से कहने वाले इनेगिने आदमी ही हैं। जब तक ब्रिटिश साम्राज्य किसी भी रूप में भारत में बना रहेगा यह इन स्वार्थों को प्रोत्साहन देगा और नये स्वार्थ खड़ा करेगा जो सभी हमारे मार्ग के कण्टक होंगे। सरकार आवश्यकता वश दमन पर भरोसा करती है। इसके शासन का चिन्ह इस का जासूसी विभाग है जिसके साथ घृणित एजेंट गोइन्दे और सरकारी गवाह बनने वाले अपराधी लोग भरे पड़े हैं।

## पूरी स्वतन्त्रता

हम लोगों में पूर्ण स्वतन्त्रता और औपनिवेशिक शासन पर काफी बहस हो चुकी है। असली बात अधिकार प्राप्त करने की है उसे चाहे जो नाम दे लो। मैं नहीं समझता कि किसी तरह के औपनिवेशिक शासन से हमें वास्तविक अधिकार मिलेंगे। इस अधिकार की परीक्षा इसी बात से होगी कि भारत पर अधिकार रखने वाली कुल सेना और कुल आर्थिक नियन्त्रण हटा लिये जायें। इसी से हमें अपनी सारी शक्ति

साम्राज्यवाद का त्याग न हो। बिना ऐसा हुए, भारत की अवस्था साम्राज्य में अधीनता की ही होगी और इस की लूट जारी रहेगी। ब्रिटिश साम्राज्य का आलिंगन ख़तरनाक है क्योंकि यह प्रेम का नहीं है।

## ब्रिटिश साम्राज्य के दोष

संसार की शांति की बड़ी चर्चा है और राष्ट्रों ने समझौतों पर सही भी बनाई है। पर तो भी सेनाओं और शस्त्रास्त्रों में वृद्धि की जा रही है। शान्ति तभी होगी जब युद्ध के कारण मिटाये जायें। जब तक एक देश दूसरे देश पर आधिपत्य जमाये हुए है या एक श्रेणी वाले दूसरी श्रेणी वालों का दोहन करते हैं तब तक वर्तमान व्यवस्था को मिटाने के प्रयत्न होते रहेंगे और शांति नहीं हो सकती। ब्रिटिश साम्राज्य इन्हीं के पक्ष में है और इसका आधार जनसाधारण का दोहन है इसी से हम स्वेच्छा का स्थान इसके भीतर नहीं पाते। उस प्राप्ति से कुछ लाभ नहीं जिस से हमारे यहां के जन साधारण के ऊपर से असह्य भार न टले। बड़े भारी साम्राज्य का बोझा ढोया नहीं जा सकता तो भी हमारे देश-वासियों ने बहुकाल तक उसे बरदाश्त किया। अब उनकी पीठ झुक गई और उनका साहस प्रायः नष्ट हो चुका है। तब इस भार के रहते हुए वे क्योंकर कामनवैल्थ के मेम्बर हो सकते

हैं। भारतीय राजाओं के स्वार्थ, ब्रिटिश अफ़सरों, ब्रिटिश और भारतीय पूंजीपतियों तथा बड़े ज़मींदारों के स्वार्थ ब्रिटिश गवर्नमेंटके कारण हमारे भीतर घुसेड़ रक्खेगये हैं जो उनकी रक्षा के लिये चिल्लाहट मचाते हैं। जिन अभागे करोड़ों जनसाधारण को वास्तव में रक्षा की आवश्यकता है वे मूक हैं और उनकी ओर से कहने वाले इनेगिने आदमी ही हैं। जब तक ब्रिटिश साम्राज्य किसी भी रूप में भारत में बना रहेगा वह इन स्वार्थों को प्रोत्साहन देगा और नये स्वार्थ खड़ा करेगा जो सभी हमारे मार्ग के कण्टक होंगे। सरकार आवश्यकता वश दमन पर भरोसा करती है। इसके शासन का चिन्ह इस का जासूसी विभाग है जिसके साथ घृणित एजेंट गोइन्दे और सरकारी गवाह बनने वाले अपराधी लोग भरे पड़े हैं।

## पूरी स्वतन्त्रता

हम लोगों में पूर्ण स्वतन्त्रता और औपनिवेशिक शासन पर काफी बहस हो चुकी है। असली बात अधिकार प्राप्त करने की है उसे चाहे जो नाम दे लो। मैं नहीं समझता कि किसी तरह के औपनिवेशिक शासन से हमें वास्तविक अधिकार मिलेंगे। इस अधिकार की परीक्षा इसी बात से होगी कि भारत पर अधिकार रखने वाली कुल सेना और कुल आर्थिक नियन्त्रण हटा लिये जायें। इसी से हमें अपनी सारी शक्ति

इन्हीं के लिये लगानी चाहिये । हम भारत की पूर्ण से पूर्ण स्वतन्त्रता चाहते हैं। इस कांग्रेस ने न तो यह स्वीकार किया है और न करेगी कि ब्रिटिश पार्लमेंटको हमें आज्ञा देनेका कोई हक है। हम उस से कोई अपील नहीं करते । हम संसार की पार्लिमेंट और अन्त करण से अपील करते हैं और कहते हैं कि भारत अब और अधिक विदेशी आधिपत्य नहीं स्वीकार करता। आज या कल भले ही हम अपनी इच्छा की पूर्ति के लिये काफी समर्थ न हों। हमें अपनी कमज़ोरी मालूम है और हम अपने बल का अभिमान नहीं करते । लेकिन हमारे दृढ़ निश्चय की शक्ति के बारे में कोई और कम से कम इंगलैंड तो भूल न करे और इसे कम न समझे। मैं आशा करता हूँ कि गम्भीरता पूर्वक इस के परिणामों को भली भांति समझकर हम यह संकल्प करेंगे जिस से फिर पीछे पग न हटायेंगे। एक बार दृढ़ संकल्प होने पर कोई महान् राष्ट्र अधिक समय तक नहीं रोका जा सकता। अगर आज हम सफल नहीं होते और कल भी नहीं होते तो उस के बाद सफलता का दिन ज़रूर आयेगा । हम झगड़ों से थक चुके हैं और शान्ति के भूखे हैं । हमारे वीर युवक लाचारी वश जेल जाते और हमारे श्रमजीवी लाचार होकर ही हड़ताल करके भूखों मरना स्वीकार करते हैं। सम्मानपूर्ण समझौते का मार्ग न होने से ही हमें राष्ट्रीय झगड़े का संकट पूर्ण रास्ता पकड़ना पड़ता है । हम शान्ति के

इच्छुक हैं और मित्रता का हाथ सदा बढ़ाने को तैयार हैं अगर कोई उसे पकड़ना चाहे तो। पर उस हाथ के पीछे ऐसा शरीर होगा जो अन्याय के सामने न झुकेगा और ऐसा दिमाग होगा, जो किसी आवश्यक बात में आत्मसमर्पण न करेगा। यह समय भावी शासन—विधान निश्चय करने का नहीं है। दो वर्ष से अधिक समय से हम यही कर रहे थे और अन्त में सर्वदल सम्मेलन ने एक स्कीम तैयार भी की थी जिसे कांग्रेस ने एक वर्ष के वास्ते स्वीकार किया था। उस से भारत को लाभ ही हुआ है। पर वर्ष बीत चुका इस लिये अब नई अवस्थाओं से सामना करना है जिस के लिये कार्य करने की ज़रूरत हैं, शासन विधान बनाने की नहीं। हमें सामाजिक व्यवस्था और समतुल्यता स्थापित करने की ओर ध्यान देना होगा तथा उन शक्तियों को काबू में करना होगा जो भारत के लिये विपयत् थीं।

## साम्यवाद और प्रजातन्त्र

मैं यह स्पष्ट शब्दों में कहूँगा कि मैं साम्यवादी और प्रजातन्त्रवादी हूँ और बादशाहों तथा राजाओं से या ऐसी व्यवस्था में मेरा विश्वास नहीं है जो बड़े बड़े कारखानों के मालिकों को पैदा करती है जिनका मनुष्यों के जान माल पर राजाओं से भी अधिक अधिकार होता है। तो भी मैं यह

समझता हूँ कि जिस तरह की राष्ट्रीय संस्था यह कांग्रेस है देश की वर्तमान अवस्था में इस के लिए साम्यवाद का पूरा कार्यक्रम स्वीकार करना शायद सम्भव न हो पर हमें यह भी समझना चाहिये कि संसार भर के समाज के भीतर साम्यवाद धीरे धीरे करके व्याप्त हो गया है और अब विवादात्मक प्रश्न केवल यह है कि उसको पूर्णरूप से प्रचलित किन उपायों से और कितनी तेज़ी से कर सकते हैं। अगर भारत को अपनी दरिद्रता और असमानता का अन्त करना है तो इसे भी उसी रास्ते से जाना होगा भले ही यह अपने उपाय ही काम में लाये और आदर्श को अपनी जाति की बुद्धि के उपयुक्त बना ले।

## देशी राज्यों की प्रजा के अधिकार

हमारे सामने तीन मुख्य समस्याएं हैं-अल्पसंख्यक जातियां, देशी राज्य और मज़ूर तथा किसान। प्रथम के विषय में मैं विचार कर चुका हूँ। यहां केवल यही फिर कहूँगा कि हमें अपने शब्दों और कामों से उन्हें पूर्ण रूप से यह विश्वास करा देना होगा कि उन की सभ्यता और परम्परा सुरक्षित रहेगी। देशी राज्य पिछले युग के अत्यन्त अद्भुत चिन्ह हैं। इन के कितने ही शासक अब भी अपने को ईश्वर के प्रतिनिधि समझते हैं। चाहे वे दूसरों के हाथ कठपुतले ही क्यों न हों। ये

समझते हैं कि राज्य और राज्य की सारी वस्तुएं अपनी हैं। जिन्हें मनमाने तौर पर उड़ा सकते हैं। इन में से एक दो अपनी ज़िम्मेदारी समझते और अपनी प्रजा की सेवा करने का प्रयत्न करते हैं, बाकी तो सब वैसे ही हैं। उनको दोष देना शायद अन्याय होगा क्योंकि वे दूषित पद्धति की उपज हैं इस लिये यह पद्धति ही मिटनी चाहिये। एक राजा ने हम से साफ़ कह दिया है कि भारत और इग्लैंड में युद्ध छिड़े तो वह इग्लैंड के पक्ष में होकर अपनी मातृभूमि के विरुद्ध लड़ेगा। यही उसकी देशभक्ति है। तब इस में आश्चर्य क्या यदि वे राजा यह दावा करते और ब्रिटिश गवर्नमेंट इसे स्वीकार करती है कि एकमात्र वे ही किसी कॉन्फ्रेन्स में अपनी प्रजा का प्रतिनिधित्व कर सकते और उनकी प्रजा के किसी आदमी को कुछ कहने का अधिकार नहीं है? भारत के देशी राज्य शेष भारत से अलग नहीं रह सकते इसलिये उन्हें भी उन्हीं की राह आना होगा जो ऐसाही सोचा करते थे। राज्यों के भविष्य का निश्चय एक मात्र उन के प्रजाजन ही कर सकते हैं जिन में राजा भी शामिल हों। स्वभाग्य निर्णयका दावा करने वाली यह कांग्रेस देशी राज्यों के प्रजाजनों को अधिकार देने से इनकार नहीं कर सकती। कांग्रेस से बात करने को जो तैयार हों ऐसे देशी राजाओं से बात करने और ऐसा रास्ते सोचने को यह बिलकुल तैयार है जिस से परिवर्तन एकाएक ही न हो।

किन्तु किसी भी दशा में राज्य के निवासियों की उपेक्षा नहीं की जा सकती ।

## मजूर और किसान

तीसरी समस्या सब से बड़ी है । कारण, भारत का अर्थ ही मजूर और किसान हैं। हम जिस अंशतक उन्हें उठायेंगे और उनकी माँगें पूरी करेंगे हमारे काम में सफलता भी उसी अंश तक होगी। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन में वे जितना ही शामिल होंगे उतना ही इस का बल बढ़ेगा । उन का पक्ष जो वस्तुतः देश का पक्ष है, लेकर ही हम उन्हें अपने साथ मिला सकते हैं। कांग्रेस ने उन के प्रति सद्भाव तो प्रकट किया है, पर उस के आगे यह कभी नहीं बढ़ी है कहा जाता है कि कांग्रेस को पूंजीपति और मजूर तथा जमींदार और काश्तकार के बीच न्याय तुला बराबर रखनी चाहिये। किन्तु एक ओर का पलड़ा भयङ्कर रूप से भारी है और इसे ज्यों का त्यों रखना अन्याय और लूट को बनाये रखना है। इस के दूर करने का एक मात्र मार्ग यही है कि एक श्रेणी का दूसरी पर से प्राधान्य मिटा दिया जाय । आलइण्डिया कांग्रेस कमेटी ने कई महीने पहले बम्बई में प्रस्ताव पास करके सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के इस आदर्श को स्वीकार किया है । आशा है कि कांग्रेस भी उस पर अपनी मुहर लगा देगी और

ऐसा कार्यक्रम निश्चय कर देगी जो शीघ्र ही पूरा किया जा सके। शायद इस में कांग्रेस आज बहुत आगे नहीं जा सकती। किन्तु इसे अन्तिम लक्ष्य दृष्टि में रखना और तदर्थ काम करना चाहिये। प्रश्न मजूरों और उस उदारता का ही नहीं है जो काम कराने वाले मजूरों के सामने प्रलोभनार्थ रखते हैं। कारबार और जमीन के बारे में इस से बुराई का अन्त नहीं होने का। इसी तरह ट्रस्टीशिप (संरक्षकता) का नया सिद्धान्त भी व्यर्थ है, क्योंकि इसका अर्थ यह है कि भले बुरे का अधिकार स्वयंभू संरक्षकों का रहता है जो स्वेच्छानुसार उसे काम में ला सकते हैं। सारा राष्ट्र ट्रस्टी या संरक्षक हो तभी अच्छा होता है, एक व्यक्ति या दल की संरक्षकता ठीक नहीं। कितने ही अंग्रेज़ सच्चे दिल से समझते हैं कि वे भारत के संरक्षक हैं तो भी हमारे देश की क्या अवस्था उन्हों ने कर डाली है? हमें निश्चय करना है कि कारबार और ज़मीन की पैदावार किस के लाभ के लिये हो। आज ज़मीन से जो इतनी अधिक पैदावार होती है वह किसानों या खेतों में काम करने वाले मजूरों के लिये नहीं है और कारबार का प्रधान उद्देश्य तो करोड़पती पैदा करना है। कितनी ही बढ़िया फसल और मुनाफा हो, इन गरीबों के कच्चे मकान और फूस के झोंपड़े तथा वस्त्रशून्यता ही ब्रिटिश साम्राज्य और वर्तमान सामाजिक पद्धति की महिमा प्रकट करने वाली है। इस लिये हमारा

आर्थिक कार्यक्रम ऐसा हो जो मनुष्य को धन की बलि चढ़ाने वाला न हो। अगर कोई कारबार अपने मजूरों को भूखों मारे बिना नहीं चल सकता तो वह अवश्य बन्द होना चाहिये। अगर खेती में काम करने वालों को काफ़ी खाना नहीं मिलता तो बीच के वे लोग न रहने चाहियें जो उन्हें खाने से वञ्चित करते हैं। खेत या कारखानों में काम करने वाले को कम से कम इतनी मजूरी पाने का हक है कि वह साधारणतः आराम से रह सके। सर्वदल कमेटी ने स्वीकार किया है कि कितने घण्टे काम करने से श्रमजीवी का बल न टूटेगा। आशा है कि कांग्रेस भी ऐसा ही करेगी। इस के सिवा वह मजूरों के अच्छे जीवन की सुप्रसिद्ध माँगें भी स्वीकार करे और उन लोगों का संगठन होने में सब तरह से सहायता दे। पर उद्योग धन्धों के मजूर तो भारत के एक बहुत छोटे अंश हैं। सब से अधिक तो किसान हैं जो कि खाद्य के लिये रो रहे हैं। हमारे कार्य क्रम में उन की वर्तमान अवस्था से उद्धार का प्रबन्ध अवश्य होना चाहिये। वसमान कानूनों और लगान के वर्तमान आधार में परिवर्तन होने से ही वास्तव में उन की रक्षा हो सकती है। हमारे बीच बहुत से ज़र्मींदार हैं जो खुशी से रहें। पर उन्हें यह अवश्य समझना चाहिये कि बड़ी बड़ी ज़र्मींदारियों की पद्धति संसार से बड़ी शीघ्रता से उठी जा रही है। पूञ्जीपतियों के देश में भी बड़ी रियासतों के टुकड़े

करके सम्हें किसानों को जोतने बोने के लिये सौंपा जा रहा है। भारत के भी बहुत से भाग में किसान ही अपने खेतों के मालिक हैं और यही पद्धति हमें देश भर में प्रचलित करनी होगी। ऐसा करने में कम से कम कह बड़े जमींदार भी हमें मदद देंगे, इस की मैं आशा करता हूँ। इस कांग्रेस के लिये यहाँ कोई ब्योरेवार आर्थिक कार्य क्रम तैयार करना सम्भव नहीं है। यह तो साधारण सिद्धान्त स्थिर करके उस की सफलता पूरा करने का भार आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी को दे दे जो मजूर दलो कांग्रेस तथा अन्य संगठनों के साथ मिलकर उसे पूरा करे। वास्तव में मैं आशा करता हूँ कि इस कांग्रेस और मजूर दल कांग्रेस में सहयोग बढ़ेगा और दोनों भविष्य के संघर्षों में एक साथ मिल कर लड़ेंगी।

## हिंसा बुरी है, पर गुलामी उस से भी ज्यादा है

अब तक हम में शक्ति न हो ये सारी बातें आशा ही आशा तक समाप्त हैं। इस लिये सर्वप्रथम शक्ति की प्राप्ति आवश्यक है जो कोरी बहसों और वकीलों की दलीलों से नहीं, बल्कि राष्ट्र का संगठन करने से प्राप्त होगी। उस के लिये इस कांग्रेस को अपना ध्यान अवश्य लगाना चाहिये। पिछला साल हमारी तय्यारी का था और हमने अपने कांग्रेस संगठन को मजबूत करने का पूरा पूरा प्रयत्न किया है जिस से उसकी

आर्थिक कार्यक्रम ऐसा हो जो मनुष्य को धन की बलि चढ़ाने वाला न हो। अगर कोई कारबार अपने मजूरों को भूखों मारे बिना नहीं चल सकता तो यह अवश्य बन्द होना चाहिये। अगर खेती में काम करने वालों को काफ़ी खाना नहीं मिलता तो बीच के वे लोग न रहने चाहियें जो उन्हें खाने से वञ्चित करते हैं। खेत या कारखानों में काम करने वाले को कम से कम इतनी मजूरी पाने का हक है कि वह साधारणतः आराम से रह सके। सर्वदल कमेटी ने स्वीकार किया है कि कितने घण्टे काम करने से श्रमजीवी का बल न टूटेगा। आशा है कि कांग्रेस भी ऐसा ही करेगी। इस के सिवा यह मजूरों के अच्छे जीवन की सुप्रसिद्ध माँगें भी स्वीकार करे और उन लोगों का संगठन होने में सब तरह से सहायता दे। पर उद्योग धन्धों के मजूर तो भारत के एक बहुत छोटे अंश हैं। सब से अधिक तो किसान हैं जो कि भाग्य के लिये रो रहे हैं। हमारे कार्य क्रम में उन की वर्तमान अवस्था से उद्धार का प्रबन्ध अवश्य होना चाहिये। वर्तमान कानूनों और लगान के वर्तमान आधार में परिवर्तन होने से ही वास्तव में उन की रक्षा हो सकती है। हमारे बीच बहुत से ज़मींदार हैं जो खुशी से रहें। पर उन्हें यह अवश्य समझना चाहिये कि बड़ा बड़ी ज़मींदारियों की पद्धति संसार से बड़ी शीघ्रता से उठी जा रही है। पूंजीपतियों के देश में भी बड़ी रियासतों के टुकड़े

करके उन्हें किसानों को जोतने बोने के लिये सौंपा जा रहा है। भारत के भी बहुत से भाग में किसान ही अपने खेतों के मालिक हैं और यही पद्धति हमें देश भर में प्रचलित करनी होगी। ऐसा करने में कम से कम कई बड़े जमींदार भी हमें मदद देंगे, इस की मैं आशा करता हूँ। इस काँग्रेस के लिये यहाँ कोई ब्योरेवार आर्थिक कार्यक्रम तैयार करना सम्भव नहीं है। यह तो साधारण सिद्धान्त स्थिर करके उस की तफ़सील पूरा करने का भार आल इण्डिया काँग्रेस कमेटी को दे दे जो मजूर दलों काग्रेस तथा अन्य संगठनों के साथ मिलकर उसे पूरा करे। वास्तव में मैं आशा करता हूँ कि इस काँग्रेस और मजूर दल काँग्रेस में सहयोग बढ़ेगा और दोनों भविष्य के संघर्षों में एक साथ मिल कर लड़ेंगी।

## हिंसा बुरी है, पर गुलामी उस से भी ज्यादा है

अब तक हम में शक्ति न हो ये सारी बातें आशा ही आशा तक समाप्त हैं। इस लिये सर्वप्रथम शक्ति की प्राप्ति आवश्यक है जो कोरी बहसों और वकीलों की दलीलों से नहीं, बल्कि राष्ट्र का संगठन करने से प्राप्त होगी। उस के लिये इस काँग्रेस को अपना ध्यान अवश्य लगाना चाहिये। पिछला साल हमारी तय्यारी का था और हमने अपने काँग्रेस संगठन को मजबूत करने का पूरा पूरा प्रयत्न किया है जिस से उसकी

दशा इस समय ऐसी अच्छी है जैसी असहयोग आन्दोलन के बाद की प्रति क्रिया के समय से अब तक कभी नहीं थी। लेकिन हमारी निर्बलताएं बहुत हैं और वे स्पष्ट हैं। खास कांग्रेस कमेटियों और उनके चुनावों के भीतर पारस्परिक झगड़े खड़े हो हमारी शक्ति का नाश करते हैं। अगर हम ऐसे ही छोटे २ झगड़ोंमें फँसे रहे तो भारी लड़ाई कैसे लड़ सकेंगे? मुझे पूरी आशा है कि कार्य का कोई मजबूत प्रोग्राम सामने होने से हमारी दृष्टि बदलेगी और हम यह व्यर्थ की लड़ाई न करेंगे। वह प्रोग्राम क्या हो सकता है? उसे निश्चय करने में हमारे प्रतिबन्ध हैं। हमारा विधान बाधक नहीं है क्योंकि उस से तो इच्छा होते ही हम बदल सकते हैं। बन्धन तो वस्तुस्थिति और अवस्थाओं के कारण है। हमारे विधान का पहला नियम यह है कि हमारे कार्य के ढंग उचित और शाँति पूर्ण होने चाहिये। उचित तो वे सदा ही रहेंगे, क्योंकि कोई ऐसा काम करके हम अपने पक्ष को हानि नहीं कर सकते जिस से हमारी प्रतिष्ठा में बट्टा लगे। वे शाँति पूर्ण हों यह भी मैं पसन्द करूंगा, क्योंकि शांतिपूर्ण ढंग हिंसा की अपेक्षा अधिक वाञ्छनीय और स्थायी होते हैं। हिंसा से तो बहुधा पीछे से प्रति क्रिया और नैतिक मृतता होती है और खास कर हमारे देश में तो इस के परिणाम स्वरूप छिन्न भिन्नता हो सकती है। यह बिलकुल सही है कि आज संसार में संगठित

हिंसा की ही तूती बोल रही है और सम्भव है कि हम भी उस के प्रयोग से लाभ उठा सकते। पर संगठित हिंसा के लिये न तो हमारे पास सामान ही है और न उस की शिक्षा ही मिली है और एक दो व्यक्तियों का हिंसात्मक साधन काम में लाना निराशा सूचक है। मैं मानता हूँ कि इस प्रश्न पर हम में से अधिक लोग इस दृष्टि से विचार नहीं करते कि नैतिक दृष्टि से हिंसा ठीक है या नहीं बल्कि इस दृष्टि से करते हैं कि यह कार्य में लाई जासकती है या नहीं। और यदि हम हिंसा का मार्ग अस्वीकार करते हैं तो इसी से कोई तात्विक परिणाम की आशा नहीं पाई जाती। किन्तु अगर भविष्य में किसी समय यह कांग्रेस या राष्ट्र इस निर्णय पर पहुँचे कि हिंसा के साधनों से हम गुलामी से छुटकारा पा सकते हैं तो मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है कि यह उन्हें स्वीकार करेगी। हिंसा बुरी है, किन्तु गुलामी उस से भी अधिक बुरी है। हमें यह भी याद रखना चाहिये कि अहिंसा के प्रधान प्रचारक ने स्वयं कहा है कि 'कायरता के कारण लड़ने से इनकार करने से लड़ाई करना अधिक अच्छा है।' स्वतन्त्रता के लिये कोई आन्दोलन हो उस का सार्वजनिक होना आवश्यक है और सार्वजनिक आनन्दोलन का शांतिपूर्ण होना अति आवश्यक है। हाँ, संगठित बलवे की तो बात दूसरी है। चाहे दस वर्ष पहले का असहयोग आन्दोलन उठाये या आज कल के साधन सार्व

अनिक हड़ताल से काम ले उस का आधार शाँतिपूर्ण संगठन और शांति पूर्ण कार्य है । अगर प्रधान आन्दोलन शाँतिपूर्ण है तो इक्के-दुक्के हिंसा के कार्य से केवल ध्यान बंट जाने और आन्दोलन कमज़ोर होने का ही भय है। यह सम्भव नहीं कि दोनों तरह के आन्दोलन साथ साथ चलाये जायें । हम को एक चुनकर उसी का पूर्ण रूप से पालन करना होगा। यह कांग्रेस कौनसा रास्ता चुनने वाली है मुझे उसके बारे में कुछ सन्देह नहीं है यह केवल शाँतिपूर्ण आन्दोलन पसन्द कर सकती है।

## कौंसिल का पूरा बायकाट हो।

क्या हमें असहयोग के कार्यक्रम और नीति को ही फिर स्वीकार करना चाहिये? यह कोई आवश्यक नहीं है। किन्तु उसका आधारभूत सिद्धान्त अवश्य बना रहेगा। कार्यक्रम और नीति तो अवस्था के उपयुक्त बनाना होगी और इस कॉंग्रेस के लिये अभी उसकी तफसील तैयार करने की न तो ज़रूरत है और न ऐसा करना सम्भव ही है। यह काम तो उसकी कार्य समिति आल इण्डिया कॉंग्रेस कमेटी का है। किन्तु सिद्धान्त स्थिर करने होंगे। असहयोग का पुराना कार्यक्रम कौंसिलों अदालत तथा स्कूलों के बायकाट का था जिस को लेकर सेना में नौकरी न करने और टैक्स चुकाने से इनकार करने

तक पहुँच सकते थे। जब राष्ट्रीय लड़ाई पूरे जोरों पर होगी तब मैं नहीं समझ सकता कि उस में जो लोग पड़े होंगे वे क्योंकर स्कूलों या अदालतों में बने रह सकते हैं। तो भी इसी समय स्कूलों और अदालतों के बायकाट की घोषणा करना मेरी समझ से ठीक न होगा। कौंसिलों के बायकाट पर पहले बहुत गरमागरम बहसें हो चुकी हैं। और इस प्रश्न पर यह कांग्रेस भी दो भागों में विभक्त हो चुका है। हमें फिर यह विवाद न खड़ा करना चाहिये, क्योंकि अवस्था आज बिलकुल ही भिन्न है। मैं समझता हूँ कि कई वर्ष पहले कांग्रेस ने जो अपने आदमियों को कौंसिलों में जाने की इजाजत दे दी थी वैसा करना अनिवार्य था। वैसा करने से कुछ लाभ नहीं हुआ यह कहने को मैं तय्यार नहीं। पर जो लाभ हो सकता था वह पूर्ण रूपसे हमने उठा लिया, और पूर्ण सहयोग और बायकाट के बीच का कोई रास्ता नहीं रहा है। हम सब को मालूम है कि ये नकली व्यवस्था-सभाएं हमारे कार्यकर्त्ताओं में कैसी अनबन फैला चुकी हैं और हमारे कितने अच्छे आदमियों को कम की कमेटियाँ और कमीशन फन्दे में फ़ंसा लेते हैं। हमारे कार्यकर्त्ताओं की संख्या परिमित है और कोई सार्वजनिक आन्दोलन हम नहीं कर सकते जब तक सभी कार्यकर्त्ता उसमें न जुट जाँय और कौंसिलों की इमारतों की ओर से पीठ न फेर लें। अगर हम स्वतन्त्रता की घोषणा

करते हैं तो हम क्योंकर कौंसिलों में घुस सकते और वहाँ निरर्थक कार्यों में समय नष्ट कर सकते हैं ? कोई कार्यक्रम या नीति सदा के लिये निश्चित नहीं की जा सकती और न यह कांग्रेस देश को या अपने ही को किसी नीति के अनुसार काम करने के लिये अनिश्चित समय तक के लिये बाँध सकती है। पर आज तो मैं कांग्रेस से यही निवेदन करूंगा कि कौंसिलों के बारे में एकमात्र नीति उसके पूरे बायकाट की है । आल इंडिया कांग्रेस कमेटी ने इसके लिये गत जुलाई में सिफारश की थी और उसे कार्य का रूप देने का समय आ गया है।

## कर चुकाना बन्द किया जायगा।

यह बायकाट उद्देश्य को सिद्ध करने का साधन मात्र होगा। इससे सारा शक्ति और ध्यान वास्तविक संग्राम में लग सकेगा, जो जहा सम्भव हो वहाँ कर चुकाना बन्द करने और मजूर आन्दोलन के सहयोग से सार्वजनिक हड़ताल का स्वरूप ग्रहण करेगा। किन्तु करों का चुकाना बन्द करने का काम संगठित रूप से एक खास भाग में हो करना चाहिये और इस के लिये कांग्रेस को आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी को अधिकार देना चाहिये कि वह जहाँ और जब उचित समझे उसके लिये आवश्यक प्रबन्ध करे। अभी

तक मैं ने कॉंग्रेस के रचनात्मक कार्य की चर्चा नहीं की है। यह जारी रखना जरूरी है किन्तु गत कई वर्षों के अनुभव से सिद्ध है कि यह हमें काफी तेजी से आगे नहीं बढ़ाता। यह भावी कार्य के लिये मैदान तैयार करता है और दस वर्ष के शान्तिपूर्वक कार्य का फल आज दिखाई दे रहा है। खासकर मैं आशा करता हूँ कि विदेशी कपड़ों और ब्रिटिश माल का बायकाट जारी रक्खेंगे। इस लिये हमारा कार्यक्रम राजनीतिक और आर्थिक बायकाट होना चाहिये। जब तक हम वास्तव में स्वतन्त्र न हों और स्वतन्त्र होने पर भी पूरे तौर पर हमारे लिये यह सम्भव नहीं है कि किसी देश का पूरे तौर पर बायकाट कर सके या उससे सब तरह का सम्बन्ध तोड़ सके। किन्तु हमारा प्रयत्न यह अवश्य होना चाहिये कि ब्रिटिश गवर्नमेंट से सब तरह के लगाव का जितना भी कम कर सकें करें और अपने ऊपर भरोसा करें।

## इंगलैण्ड का लिया हुआ ऋण न चुकायेंगे।

हमें यह भी स्पष्ट कर देना चाहिये कि इंगलैण्ड ने जो कर्ज लेकर भारत के ऊपर लाद रक्खा है उसकी जिम्मेवारी भारतवर्ष अपने ऊपर न लेगा। क्या कॉंग्रेस ने इन कर्जों को चुकाने की जिमेवारी लेने से इनकार किया था और हमें फिर भी स्पष्ट घोषणा करके उस पर डटे रहना चाहिये।

भारत के सार्वजनिक ऋण का यह भाग तो हम स्वीकार करते हैं और उसे चुकाने को तैयार हैं जो भारत के लिये लाभ के कामों में खर्च किया गया है। पर जो बड़ी रकमें भारत को अधीनता में बनाये रखने के उद्देश्य से ली गयी हैं उन्हें चुकाने की जिम्मेवारी हम अपने ऊपर बिल्कुल नहीं लेते। गरीबी के मारे हुए भारतवासी उन कर्जों का बोझ सहने को तैयार नहीं हो सकते जो युद्धों के खर्च के लिये काढ़े गये हैं जो इङ्गलैण्ड ने अपना राज्य बढ़ाने और भारत में अपनी स्थिति मज़बूत बनाने के लिये किये थे। न हम उन बहु संख्यक रियायतों को ही स्वीकार कर सकते हैं जो विदेशी दोहन करने वालों के साथ अन्धाधुन्ध तौर से उचित मावज़े (बदल) के बिना ही की गई हैं।

## भारी खतरों के बिना भारी सफलता नहीं।

अब तक प्रवासी भारतीयों के बारे में मैंने कुछ नहीं कहा और न ज्यादा कहने का विचार ही है। यह इस लिये नहीं कि उनके साथ हमारी सहानुभूति नहीं है जो भारी शक्तियों का वीरता से सामना कर रहे हैं। उनके भाग्य का निर्णय भारत में ही होगा और जो संग्राम हम यहाँ छेड़ रहे हैं वह उनके लिये भी उतना ही है जितना हमारे वास्ते। इस संग्राम के लिये हमें कार्ययोग्य यन्त्र की आवश्यकता है। हमारा, कांग्रेस

का सङ्गठन और विधान बेहद पुराना और मन्द—गतिवाला हो गया है जो विकट समय के लिये उपयुक्त नहीं है। बड़े बड़े प्रदर्शनों का समय चला गया अब तो हम चुपचाप और ऐसा काम चाहते हैं जिसका मुकाबला कोई न कर सके। यह तभी हो सकता है जब हमारे कार्यकर्ताओं में पूर्ण व्यवस्था हो, हम जो प्रस्ताव पास करें उनको कार्य रूप दें। कांग्रेस के असली मेम्बर चाहे कितने ही कम हों, किन्तु यदि अगर इसका कार्य व्यवस्थित रूप न हो तो इसकी शक्ति बढ़ेगा। जी होमकर आगे बढ़ने वाले बहुत अल्पस संख्यक लोगों ने राष्ट्रों के भाग्य पलट दिये हैं। खास स्वतन्त्रता का भी अर्थ नियन्त्रण और व्यवस्था पालन है और हममें से प्रत्येकको बड़े हित के सामने अपने को अधीन बनाना पड़ेगा। कांग्रेस देश के अल्पस संख्यक लोगों की प्रतिनिधि नहीं है। चाहे बहुतेरे लोग निर्बलता वश इसके मेम्बर न बनें, पर वे इसकी ओर आशा से देखते और चाहते हैं कि यह उनका उद्धार करे। कलकत्ते के प्रस्ताव के समय से ही देश की दृष्टि इस अधिवेशन की ओर लगी हुई है। हममें से कोई नहीं कह सकता कि हमें कब और क्या प्राप्त होगा। हम अपनी इच्छा से ही सफलता नहीं पा सकते। पर बहुधा सफलता उन्हीं को मिलती है जो साहस करके काम करते हैं। ऐसे कायरों को तो वह कभी प्राप्त ही नहीं होती जो परिणामों से डर जाते हैं। अगर हमें

भारी वस्तुए पाने की इच्छा है तो भारी खतरों में जाने से ही वे मिल सकता हैं। हमें जल्दी सफलता हो या देर से भारी उद्योग से हमें हमारे सिवा और कोई नहीं रोक सकता।

## हमारा खुला हुआ षड्यन्त्र।

देश के भिन्न भिन्न भागों में षड्यन्त्र के मामले चल रहे हैं, वे सदा ही देखे जाते हैं। पर गुप्त षड्यन्त्र का समय चला गया। अब अपने देश को विदेशी शासन से स्वतन्त्र करने के लिए हमारा खुला षड्यन्त्र है। भाईयो, आपको और हमारे देश के सभी पुरुषों और स्त्रियों को इसमें शामिल होने का निमन्त्रण दिया जाता है, लेकिन इसके इनाम में आपको कष्ट और जेल भोगना पड़ेगा और मृत्यु भी हो सकती है। पर आपको यह सन्तोष भी होगा कि आपने बूढ़े किन्तु सदा जवान भारत के लिये कुछ थोड़ा सा काम कर लिया और मानव जाति को उसकी वर्त्तमान गुलामी से छुड़ाने में तनिक सहायता की है।

यह बात बहुत शीघ्र समझ में आजायगी कि पं० जवाहर लाल का यह भाषण कांग्रेस के इतिहास में बिलकुल नई चीज़ है। और यह देश को नये युग में प्रवेश कराता है यह बात गम्भीरता पूर्वक विचारनी चाहिये कि इस भाषण के गर्भ में

छिपी हुई भावना न तो वातावरण को देख कर और न प्रभावित होकर उत्पन्न हुई है, प्रत्युत् यह चिर अभिलाषित भावना है। इस भावना के प्रभाव से आवेदन कारिणी सभा जो सन्मुख आज समस्त भारत की जातियों की प्रतिनिधि सभा है क्रान्ति कारिणी बन गई है। प्रार्थना और अनुनय के क्षेत्र से निकल कर कॉंग्रेस ने स्वावलम्बन क्षेत्र में प्रवेश किया है। जवाहरलालजी के शब्दों में यह खुलम खुला षड्यन्त्र करने का इरादा कर चुकी है। पण्डित जवाहर लाल जी के भाषण में यदि कुछ पुरानी चीज है तो वह अहिंसा और असहयोग है इसे छोड़ कर प्राचीन कॉंग्रेस की शक्तावाजि तक का उन्होंने त्यागन कर दिया है। ध्यान से देखने की बात तो यह है कि इस भाषण में चर्खा और खद्दर का जिक्र भी नहीं है, हम जहाँ तक खयाल कर सकते हैं सन् २१ के बाद यह प्रथम ही बार महात्मा गान्धी के इस जीवन प्राण वस्तु पर अवहेलना की गई है।

परन्तु, इन दोनों प्रधान वस्तुओं की अवहेलना करने पर भी अहिंसा और असहयोग को पूरी मज़बूती से पकड़ा गया है, असहयोग तो एक मात्र भविष्य संग्राम की नीति ही है। परन्तु अहिंसा का समावेश मानो महात्मा जी के उस अमोघ प्रभाव से मूर्छित होकर किया गया है जिसमें वायसराय की गाड़ी पर साधारण बम उत्पात के लिये खेद प्रकाशन करने

को कांग्रेस प्रतिनिधियों को बेवस कर दिया। जब कि यह स्पष्ट कह दिया गया कि लाला लाजपतराय की हत्या और जतीन की शोचनीय मृत्यु पर सरकार ने ज़रा भी शराफत की नज़र नहीं की।

खद्दर और चर्खे पर जो राष्ट्रीय झण्डे में गहराई तक स्थान पा चुका है १० वर्ष बाद राष्ट्रपति की अवहेलना एक प्रभाव शाली परिणाम प्रकट करेगा इसमें सन्देह नहीं। हम अपनी राय पृथक स्पष्ट करके इस सम्बन्ध में देंगे।

इस भाषण में जवाहर लाल नेहरू ने अपने को स्पष्ट प्रजातन्त्र वादी और साम्यवादी बयान किया है उनके भाषण में इस भावना की बू काफ़ी है। परन्तु मुसलमानों और सिक्खों के साथ हिन्दुओं को जिस उदारताका व्यवहार करने का सलाह दी है। उस पर हमें गम्भीरता से विचार करना होगा। सन् २१ में देश ने इस उदारता को प्रयोग में लाकर देख लिया है, और उसका ठीक परिणाम नहीं प्रतीत हुआ है। वे समाज में एकाकार चाहते हैं। पर भारत की जातियों में धर्म भित्ति जैसी है। उसे देखते एकाकार होना कितना दुरूह है, यह प्रत्येक विचार शील समझ सकता है। और हम आगे चल कर अपनी उस कठिनाई का बयान करेंगे जो ओपित प्रोग्राम पर अवसर होने पर इन जातीय बन्धनों के कारण हम पर आवेंगी ही।

पं० जवाहरलाल नेहरू इस भाषण में इतने अधिक स्पष्ट हो गये हैं कि उसमें राजनीतिज्ञों की पालिसी का ज़रा भी गुंजाइश नहीं रह गई है। प्रायः सभी ज्वलन्त विषयों पर बिल्कुल साफ विचार प्रकट कर दिये हैं। इस स्पष्ट वादिता ने इसमें कोई सन्देह नहीं कि देश को बहुत साहस दिया है और देश वाइसराय तथा भारत मन्त्री की सारहीन घोषणाओं और वक्तव्यों से ऊब गया है इसके सिवा महात्मा गान्धी ने अपने वज्र मुख से स्वाधीनता की घोषणा की है।

अहिंसा के प्रश्न पर जैसा कि हम कह चुके हैं वे महात्मा के अमोघ प्रभाव में मूर्छित हो गये हैं—परन्तु उनका अन्तर्गत भावना तो यहाँ भी झलक गई है, जब वे कहते हैं कि अगर हम हिंसात्मक उपाय काम में नहीं लाते तो इसी लिये कि उससे कोई सात्विक परिणाम निकलने की आशा नहीं है। किन्तु यदि यह कांग्रेस या राष्ट्र आगे चलकर किसी समय इस नतीजे पर पहुँचे कि हिंसात्मक उपायों से हम अपनी गुलामी से छुटकारा पा जायेंगे तो मुझे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि यह उसे स्वीकार करेगी और इस भयानक सत्य की पुष्टि में वे एक ही अकाट्य बात कहते हैं कि हिंसा बुरा है, पर ग़ुलामी इससे भी बुरी है।

स्वाधीनता की अपनी इच्छा प्रकट करने पर पं० जवाहर लाल नेहरू ने जिस कार्यक्रम की तरफ इशारा किया है। यह

असाधारण है वह इस प्रकार है।

१—कौंसिल आदि का बहिष्कार।

२—विदेशी वस्त्रों तथा माल का बहिष्कार।

३—ब्रिटेन से सब प्रकार का सम्बन्ध विच्छेद करने की यथा साध्य चेष्टा।

४—इग्लेंड का भारत के नाम पर जो ऋण है। वह चुकाने से इन्कार!

५ सब प्रकार के कर देने से इन्कार तथा भद्र अवज्ञा।

यह प्रोग्राम यदि इसकी वास्तविकता पर विचार किया जाय तो हृदय में गहरा दृढ़ कम्प उत्पन्न कर देने वाला है। और यह युवक राष्ट्रपति उसके गुरुत्व से अनजान नहीं वह अन्त में कहता है।

"सफलता साहसी जनों को ही मिला करती है। वह उन कायरों के पास नहीं फटकती। जो सदा परिणाम से भय खाते हैं"।

जवाहर लाल नेहरू की तड़पती हुये आत्मा, उनके उद्गारों में है अब प्रश्न यह है कि इस भारी उत्तर दायित्व की जिसे उन्होंने ठीक अनुभव किया है क्या १ वर्ष तक भी निबाह लेजाना इस प्रतापी राष्ट्रपति के लिये सम्भव होगा? मैं यह मानता हूँ कि महात्मा गान्धी जैसे अहिंसक और दृढ़ निश्चिय और मोती लाल जैसे मनस्वी पुरुषों के प्रबल आश्रय

इस वय उन्हें प्राप्त रहेंगे। परन्तु यह तो स्पष्ट ज़ाहिर है कि अहिंसा सत्य में जवाहर लाल नैतिक तौर पर उतने विश्वासी नहीं साथ हा देश भी महात्मा जी को अच्छा मानते हा करे पर यह पसन्द करेगा पं० जवाहरलाल जी नेहरू को ही गर्म भावना का।

देश में आत्म विश्वास नहीं है, आत्म शक्ति का न चय भी नहीं है—परन्तु उग्र भावना अवश्य है—इस लिये देश कूदेगा, पं० जवाहरलाल नेहरू के पास क्या कोई ऐसी शक्ति है कि यदि देश महात्मा गांधी या पं० मोतीलाल के नियन्त्रण में न रहे, जिसके भय ने महात्मा जी को सभापति का आसन स्वीकार नहीं करने दिया है—और यह लोहे के बदले लोहा बजाने को तैयार हो जाय तो उसे नियन्त्रण में कर सके, अथवा उसको रक्षा कर सकें।

यह प्रश्न बहुत भयानक है। हम क्रोध में आकर गर्म मस्तिष्क ने प्रबल से प्रबल आक्रमणों के मनसूबे कर सकते हैं। हम अत्याचारों और अन्याय के बुरी तरह शिकार हो रहे हैं यह भी सच है और हम उस के बदले में कड़ो से कड़ो और लाल से लाल भावना मन में लावें या ज़बान से कहें परन्तु, अपनी और पराई शक्ति पर यदि हम विचार नहीं कर सकते, तो हमारे जीवन नष्ट होने का सामान सामने है। सिपाही सदैव योद्धा होते हैं, सेनापति की आज्ञा पर प्राणों का

मोह छोड़ आगे बढ़ना उन का कर्तव्य है। परन्तु सेनापति का कर्तव्य है दूरदर्शिता से शत्रु के बलाबल का विचार करना। अपनी सेना को व्यर्थ ही नष्ट होने के अवसरों से बचाना-तथा कम से कम हानि में अधिक से लाभ की चेष्टा करना।

युवक राष्ट्रपति के भाषण और भावों में सच्चे योद्धा की वीरात्मा है यह आवश्यकता पड़ने पर सच्चे योद्धा की तरह प्राणों की आहुती देगा यह भी निस्सन्देह सच है। पर हमारे तुच्छ विचार में उन में सेनापति की दूरदर्शिता नहीं प्रतीत हुई, हम अपने उपरोक्त भयानक प्रश्न का उत्तर नहीं पाते! जवाहर लाल नेहरू हमें अपने सच्चे आवेश और बलिदान से प्रभावित करके क्रान्तिकी लाल आँधी में बड़े ज़ोरसे से उड़ने की शक्ति रखते हैं। पर यदि शत्रु पक्ष का प्रबल वेग हमें कुचल डाले तो उससे हमारी रक्षा करने की शक्ति उन में नहीं।

हम जवाहर लाल नेहरू की आधीनता में चित्तौड़ की राजपूतानियों की तरह जूझ कर मर सकने का सुन्दर और तेज पूर्ण दृश्य दिखा सकते हैं। यदि हम योग्य हुये। परन्तु भारत को पूर्ण स्वाधीन बनाकर विजयी होने का सम्मान प्राप्त नहीं कर सकते।

अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तंत्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम्॥

# तीसरा अध्याय

## गान्धी का बल

महात्मा गान्धी ही आज एक ऐसी विभूति है जिसके ाधार पर हम कुछ आश्वासित हो सकते हैं और ब्रिटेन की ता भयभीत हो सकती है। हम महात्मा गान्धी के बल को विश्य ही अपनी विचार धारा पर तोलना चाहते हैं।

महात्मा गान्धी ज्वाला मुखी पर्वत हैं। वह अशान्त ौर अचल स्थैर्य, एवं अप्रतिम साहिष्णुता जिस पर अना ास ही देखने वाले की दृष्टि पड़ जाती है। एक ओर वस्तु है स छोटे से मुख से निकलती हुई ज्योतिर्मयी ली उस के भीतर धकती हुई भीषण महाग्नि समुद्र की बौछार है। जो पाताल क गहरा है और वह चाहे जब आकाश तक ऊँचा उठ ायगा।

महात्मा गान्धी बीसवीं शताब्दि की पीड़ाओं का विकाश है। वह विश्व भर के पीड़ित जीवों के विश्वास की मूर्ति है। ह जगत के न्याय का अवतार है। और वह कदाचित हमारा ारत का भविष्य काल का प्रारब्ध है।

मायावाद, अर्थशास्त्र और पशुबल के आधार पर योरोप ने प्रत्येक वीर को, प्रत्येक मनस्वी को प्रत्येक आत्मवादि को मोह कर गुलाम बना लिया था। परन्तु यह दुर्बल शरीर, मलिन प्रभा, चिन्तित मस्तिष्क, व्यथित हृदय, भावित मन, किन्तु प्रखर तेज, प्रदीप्त चैतन्य बुद्धि, अद्भुत क्षमा, अपूर्व आत्म विश्वास, भीषण साहस, अलौकिक सत्य और अप्रतिम निर्भयता की सत्ता से रक्षित पुरुष—३२ करोड़ नर नारियों से परिपूर्ण भारत को गत १० वर्षों से संचालित कर रहा है।

साधारण दृष्टि वाले मनुष्य यह कदाचित न समझ सकेंगे कि गत वर्षों में इस महान साधु ने देश को कितना अग्रसर किया है, बहुत मनुष्य यह कह सकते हैं कि महात्मा गान्धी देश को आगे बढ़ाने में नितान्त असफल रहे हैं।

परन्तु इस धैर्यवान योद्धा ने देश की राजनैतिक आकांक्षा को अंग्रेजों की राजनैतिक छल पूर्ण स्वेच्छाचारिता के सन्मुख इतनी स्पष्ट जितनी कि वह आज है, बना दिया है। महात्मा गान्धी से प्रथम देश ब्रिटेन की सत्ता के सन्मुख विनय [illegible] था आज वह पूर्ण स्वाधीनता का अधिकार प्रकट [illegible] रहा है जहां स्वराज्य शब्द मुख से निकालने का [illegible] प्रबल से प्रबल राजनीतिज्ञ को भी नहीं हो सकता था वहां देश भर के कण्ठ से पूर्ण स्वाधीनता का राग सुनाई दे रहा

है। क्या महात्मा गान्धी के प्रथम हम में अपनी मातृ भाषा को कांग्रेस की वेदी पर प्रतिष्ठित करने का साहस था ? क्या महात्मा गान्धी से प्रथम कांग्रेस देश के प्रतिनिधियों की सच्ची सभा थी ? क्या तब भी आज की भांति—देश की आत्मा कांग्रेस के लिये इतनी बेचैन थी ? क्या तब भी कांग्रेस देश के प्राणों से इतनी निकट थी ? नहीं। यह सब कुछ करने का श्रेय महात्मा गान्धी को है। सन् २१ में उस पुरुष ने अपना प्रबल असहयोग प्रारम्भ करते बार कहा थाः—

"हमारे लिये लज्जा की बात है कि केवल १ लाख गोरे ३१ करोड़ हम पर पूर्ण स्वेच्छा चारिता और राजनैतिक कुलका शासन कर रहे हैं। और यह घोर निन्दा की बात है कि उन्हें अपनी प्रत्येक तजवीजों का स्वच्छन्दता से प्रयोग करने में बेरोक हमारा सहयोग मिल रहा है। हम सांप की तरह अपने ही अण्डों को खाये जाते हैं देश यह चाहता है कि अंग्रेजों की पाशविक शक्ति नष्ट करदी जाय और यह दिखा दिया जाय कि पाशविक शक्ति से भारत में अब एक दिन भी शासन नहीं हो सकता।"

सन् २१ में जब इस वीर पुरुष ने असहयोग आन्दोलन शुरु किया था—तब तत्कालीन वायसराय लार्ड चेल्मसफोर्ड ने घमण्ड से कहा थाः—कि हम असहयोग आन्दोलन को स्वयं

मायावाद, अर्थशास्त्र और पशुबल के आधार पर योरोप ने प्रत्येक वीर को, प्रत्येक मनस्वी को प्रत्येक आत्म वादि को मोह कर गुलाम बना लिया था। परन्तु यह दुर्बल शरीर, मलिन प्रभा, चिन्तित मस्तिष्क, व्यथित हृदय, भावित मन, किन्तु प्रखर तेज, प्रदीप्त चैतन्य बुद्धि, अद्भुत क्षमा, अपूर्व आत्म विश्वास, भीषण साहस, अलौकिक सत्य और अप्रतिम निर्भयता की सत्ता से रक्षित पुरुष—३२ करोड़ नर नारियों से परिपूर्ण भारत को गत १० वर्षों से स चालित कर रहा है।

साधारण दृष्टि वाले मनुष्य यह कदाचित न समझ सकेंगे कि गत वर्षों में इस महान साधु ने देश को कितना अग्रसर किया है, बहुत मनुष्य यह कह सकते हैं कि महात्मा गान्धी देश को आगे बढ़ाने में नितान्त असफल रहे हैं।

परन्तु इस धैर्यवान योद्धा ने देश की राजनैतिक आकांक्षा को अंग्रेज़ों की राजनैतिक छल पूर्ण स्वेच्छाचारिता के सन्मुख इतनी स्पष्ट जितनी कि वह आज है, बना दिया है। महात्मा गान्धी से प्रथम देश ब्रिटेन की सत्ता के सन्मुख विनय भिखारी था आज वह पूर्ण स्वाधीनता का अधिकार प्रकट कर रहा है जहां स्वराज्य शब्द मुख से निकालने का साहस प्रबल से प्रबल राजनीतिज्ञ को भी नहीं हो सकता था वहाँ देश भर के कण्ठ से पूर्ण स्वाधीनता का राग सुनाई दे -

होने पर है। महात्मा गान्धी ने देश को जाग्रत किया है उसे खड़ा किया है। और उसे भिक्षुक से अधिकार का हकदार बनाया है, देश में आज कमी तो है, पर यह वह देश नहीं है जब अंग्रेजों के भारत में पदार्पण करने के समय था। उस *समय देश में राष्ट्रीयता का अभाव था आज वह पैदा हो रहा है।*

परन्तु महात्मा गान्धी अकेले हैं, और देश उनके साथ नहीं है, *विचारणीय बात तो यह है। लोग महात्मा गान्धी को* एक सत्यानिष्ठ पुरुष मानते हैं, उनकी पूजा करते हैं, उन की नीति को आदर करते हैं पर उसे वे सर्वोपरि नीति नहीं मानते वे महात्मा गान्धी को नीति को अपनी वर्तमान परस्थिति के लिये सुभीते को उपयोगी नीति मात्र मानते हैं।

यह भी वे लोग जो उनके समर्थक और साथी हैं, परन्तु देश में ऐसे भी लोग हैं जो महात्मा गान्धी को पागल उनको और देश के [illegible] घातक बताते हैं। यदि हम इस बात पर विचार करें कि संसार को वैज्ञानिक शक्ति किस तेजी से बढ़ रही है, तो हमें विमूढ़ होना पड़ेगा। जब संसार के घोर बच्चे आकाश में ३०० मील प्रति घन्टेके हिसाब से उड़ कर मानवीय मस्तिष्क की उन्नत अवस्था का प्रकटी करण कर रहे हैं वहाँ चुपचाप चर्खा कातना और खद्दर बुनना हमारे देश

मरने के लिये छोड़ देते हैं" परन्तु अन्त में यूरोप के प्रबल राज नैतिकों को यह कहना पड़ा कि उस समय केवल एक इन्च की कमी ग्रेटब्रिटेन के सर्व नाश में रह गई थी।

देश ने महात्मा जी का साथ नहीं दिया। और महात्मा जी के जेल जाने पर देश ने अपनी नाति को बदल दिया—और उसके बाद महात्मा जी ने भी अपनी नीति को ढोला कर दिया— फल स्वरूप वह महा सुयोग निकल गया।

परन्तु इतना होने पर भी देश में जो जाग्रति पैदा हुई वह साधारण न थी। पराई विद्या के बैल और पराई बुद्धि के दलालों के हाथ से निकल कर देश को राजनैतिक आकांक्षा देश के सर्व साधारण के हृदय और मस्तिष्क तक पहुँच गई है। और महात्मा जी अब केवल कुछ विचार शीलों और असाधारण मनुष्यों के बल पर नहीं प्रस्तुत देश की पूर्ण सामूहिक सुगाठित संघ शक्ति के हाथों में कांग्रेस को सौंप उन्हीं के हाथ से देश को स्वाधीन करना चाहते हैं।

महात्मा गान्धी की यही नीति युगधर्म एवं वास्तविकता से भरी हुई है। आज सारे संसार की जातियों में आत्मरक्षा के भाव उत्पन्न होरहे हैं। और वे आत्म रक्षा के लिये कड़े से कड़ा युद्ध करने को तैयार हैं। एक सत्ता वाद और साम्राज्य वाद ध्वंस होगये। जो रह गये हैं उनका जीवन काल समाप्त

बात बड़ी अद्भुत दीख रही है। वह यह है कि महात्मा गान्धी ने स्वयं महारथी का स्थान ग्रहण न कर सारथी का स्थान ग्रहण किया है। जब हम इस बात का स्मरण करते हैं कि महावीर अर्जुन के सारथी बन कर महा पुरुष कृष्ण ने बड़ी भारी नीति खेली थी तब हम इस छिपे भेद को कौतूहल से देखने की इच्छा करते हैं। क्या सच मुच महात्मा गान्धी ने कृष्ण की तरह जान बूझ कर जवाहर लाल नेहरू को महारथी पद देकर स्वयं सारथी का स्थान ग्रहण किया है। और क्या वे उसी गम्भीरता से युवक योद्धा के नैतिक पथ प्रदर्शक बनेंगे जैसे कि कृष्ण बने थे।

परन्तु मैं फिर कहता हूँ कि देश महात्मा जी के साथ तो नहीं और उनके साथ चलने के योग्य भी नहीं। मैं इस बात से तो इन्कार ही नहीं करता कि देश बहुत आगे बढ़ा है और उसका श्रेय महात्मा जी को है परन्तु मैं इस बात को समझ ही नहीं सकता कि महात्मा जी ने पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा किस बल पर की है। यह बात नहीं कि महात्मा जी वस्तुस्थिति से धोखा खा गये हों, उनके ये शब्द कि "इससे आगे एक कदम भी बढ़े कि खन्दक में गिरे" असाधारण हैं। ये शब्द उन्होंने सुभास बाबू के समान सरकार बनाने के संशोधन के उत्तर में कहे थे। इनका यह मतलब है कि उन्होंने जो शब्द योजना की है वह थोथी शब्द योजना ही नहीं है

के लिये कहाँ तक उद्धार में सहायक होगा यह बिना विचारे नहीं रह सकते; हम इस बात पर दृढ़ विश्वास रखते हैं कि देशों और जातियों की स्वाधीनता गर्म रक्त की नदी में नहाने से ही प्राप्त हुआ करती हैं, केवल बातों से नहीं। मैं अपनी व्यक्तिगत राय दे सकता हूँ कि चर्खा कातना और खद्दर बुनना मेरे लिये खुले युद्ध में घाव खाकर मर जाने से ज्यादा कठिन है। यह कैसे सम्भव हो सकता है कि हम अपनी प्राचीन एकात्मता को अब उसी ढंग पर बनाये रख सकते हैं, यही कैसे हो सकेगा कि हम देश को अपने लाखों वर्ष की पुरानी सभ्यता के सहारे इस भयानक गुलामी से आज़ाद कर सकते हैं।

महात्मा गान्धी का यह कथन सत्य है कि रक्त पात से देश का उद्धार करना अनिष्टकर है जैसी परिस्थिति है उसे देखते लोग इस बात में सहमत तो हैं कि रक्त पात हीन युद्ध ठीक है परन्तु सच्ची वास्तविकता जो महात्मा गान्धी के युद्ध में है वह दो बातों पर निर्भर है, एक पूर्ण अहिंसा दूसरी सब प्रकार के करों को देने से इन्कार, पूर्ण अहिंसा का परिणाम तो यह होगा कि ब्रिटिश शक्ति को सामारिक बल उपयोग में लाने का अवसर ही न आवेगा।

स्वाधीनता के युद्ध के निकट भविष्य के प्रोग्राम में एक

विश्वास है व्यर्थ होगी—इसके सिवा महात्मा का दूसरा अस्त्र जो सबसे प्रबल है—यह है कि सरकार की आमदनी बन्द कर दी जाय—यदि यह अस्त्र सफल हो जाय तो बड़ी से बड़ी सरकार को ध्वंस होने में देर नहीं लग सकती। धन बल बड़ा प्रबल है, धन से वेतन पाकर बड़े २ पुरुषों ने शरीर और आत्मा को बेच दिया है, धन से सभी संहारक अस्त्र शस्त्र बनते हैं भारत सरकार बड़े भारी कर्ज़ के नीचे दब रहा है इसके सिवा उसका खर्चा भी असाधारण है यदि सरकार की आय नष्ट कर दी जाय तो समझिये कि उसका अस्तित्व जादू के ज़ोर से मिट जायगा।

इस वर्ष के होने वाले आन्दोलन के बाद—सरकार की ओर से कहा जा सकता है कि महात्मा जी विद्रोही हैं, मैं सरकार से यह पूछता हूँ कि विद्रोह का अर्थ क्या है, अगर विद्रोह से सरकार का यह अर्थ हो कि देश में जो अशान्ति फैली है और सरकार के प्रति देश की जो अभक्ति और विरक्ता सदा को पैदा हो गई, और देश अंग्रेज़ सरकार को नापसन्द करता है, और इससे लड़कर या तो बरबाद हो जाने पर या स्वाधीन होने पर तुला है—यह सब भावना महात्मा गान्धी की फैलाई है—और महात्मा गान्धी ही इनके ज़िम्मेदार हैं तो मैं कहूँगा कि यह सर्वथा झूठ है—

जैसा कि विद्वान राजनीतिज्ञ मिस्टर माण्टेग्यू ने एक बार

वे उसके एक एक अक्षर पर कदम उठा कर चलना चाहते हैं और अपने प्रत्येक शब्द को जिम्मेवार समझते हैं।

यद्यपि जो कुछ करना विचारा गया है—अभी बहुत परिमित है, और महान् लक्ष्य को देखते—नगण्य हैं पर मैं इसे प्रबल साहस का काम समझूंगा। यह बात विचारने के योग्य है कि महात्मा जी ने वायसराय पर बम कागड का प्रस्ताव जनता से बलपूर्वक पास कराया है, उस का उद्देश्य कांग्रेस की नीति को अहिंसा से न झुकने देना ही है परन्तु उन लोगों की भावना की ओर भी तो विचार करना चाहिये जो देश के लिये अभी इसी समय प्राणों की आहुति देने को तैयार हैं और जिनमें महात्मा जी के प्रति पूर्ण आदर भाव होने पर भी—उनके धैर्य्य की प्रतीक्षा करने की सहनशीलता नहीं है। वे किस नीति से वश में रह सकेंगे? कांग्रेस की निन्दा की उन्हें परवा नहीं। वे जीवन और मृत्यु में मोह नहीं रखते, वे हृदय में धधकती ज्वाला से जल रहे हैं वे देश को गुलाम देख नहीं सकते ऐसे वीर पुरुष-देश का उद्धार करें या न करें—पर देश पर भारी विपत लाने के ज़िम्मेदार तो अवश्य हो होंगे। यह मैं इस लिये कहता हूँ कि उन्हीं के कारण सरकार को दमन का अधिकार हो जायगा और महात्मा गान्धी जो यह चाहते हैं कि अपनी सम्मोहनी विद्या से सरकार की दमन नीति को स्तब्ध करदें—जिस का कि उन्हें पूर्ण

महात्मा गान्धी से बहुत प्रथम यह लहर भारत में गूंज रही थी—उसका कारण है—कि देश समर्थ हो रहा है—देश जाग्रत होरहा है—देश अब गुलाम नहीं बना रहेगा—देश अब पराई बुद्धि से काम नहीं लेगा—अब उसे खुर्राटे की नींद लेकर खटमलों से खून चुसाना सह्य नहीं है। इस लिये देश स्वयं उठा है स्वयं वह अपने अधिकार, मान, मर्यादा और स्वाधीनता माँग रहा है, उसे नेताओं का ज़रूरत है जैसा कि सब देशों में होती है और उसे अनेक नेता मिले परन्तु अन्त में उसने गान्धी के नेतृत्व को पसन्द किया इस लिये गान्धी उस आग या प्यास का ज़िम्मेवार नहीं है जो समस्त देश में फैल गई है बल्के वह उस नाति का ज़िम्मेदार है जिस पर वह चला कर देश की उस प्यास को बुझाना चाहता है—

महात्मा गान्धी की वह चाल छिपी नहीं है वह जल के समान स्वच्छ और शान्त है उसमें खून ख़राबा नहीं, हिंसा नहीं, द्वेष नहीं, पाप नहीं, बैर नहीं, प्रेम है, दया है, त्याग है, उदारता है और वीरता है। हिन्सा से उन्हें आन्तरिक घृणा है बम्बई में जब खेद पूर्ण दुर्घटनाएं हुई तब उन्होंने अपने कार्यक्रम को रोक दिया, चौरा चारी में उनकी नीति पर कलंक लगने वाला काम हुआ उन्होंने अपनी गति को रोक दिया, इस काम से उन्होंने अपनें परायों का कड़े से कड़ा अपमान भी सहा। फ्रांसीसी साधू पाल रिचार्ड से

पार्लियामेन्ट में साफ़ २ कुछ दिन प्रथम कहा था कि भारत की इस राजनीतिक जागृती के कई गम्भीर कारण हैं

जैसे युद्धके बादकी महंगाई, टर्की को सन्धि शर्तें, व्यापार की दशा और पञ्जाब की हत्या और टालमटूल की नीति आदि। मैं प्रत्येक समझदार आदमी से इस बात पर ध्यान देने को अपील करूंगा—

कि जो स्वराज्य की लहर स्वर्गीय लोकमान्य के शब्दों में "हमारा जन्मसिद्ध अधिकार" के नाम से कई वर्ष प्रथम से भारत के नाम से बह रही थी, सूरत की कांग्रेस में जब कि महात्मा गान्धी शायद भारत में नहीं थे तब जिस लहर का एक तूफ़ान देखने में आया था और लहर के चक्कर में बीर लाला लाजपतराय, अजीतसिंह और कई धुरन्धर-मस्तक वालों पर वज्रपात हुआ था। जिस लहर की रौ में मो तपस्वी अरविन्द को व्यर्थ यातना दी गई—जिस लहर की झपट में सैंकड़ों बी० ऐ०, एम० ऐ० भारतियों ने चक्की पीसी, काले पानी में कोल्हू चलाये, काल कोठरी में दश २१ वर्ष काटे, पागल हुये, फांसी पाई उस लहर को सच्चा उदार सज्जन देशभक्ति या देशोन्माद कहेगा, यदि सरकार उसे "विद्रोह" भी कहे तो उस "विद्रोह" के उत्पादक सञ्चालक या समर्थक महात्मा गान्धी नहीं हैं और हरगिज़ नहीं हैं।

दृढ़ता, विश्वास, प्रेम, और स्वाधीनता के इच्छुक हैं न उन्हें अंग्रेजों से द्वेष, न हिन्दू मुसलमानों से प्रेम, वे दुर्बलों के साथी और प्रेमी और बलवान के द्वेषी हैं।

मि० सी० एच० हारकूट नामके किसी अंग्रेज़ विद्वानने 'डेली एक्सप्रेस' पत्र में महात्मा गान्धी और भारतीय वस्त्र व्यवसाय के बारे में एक मजेदार लेख लिखा था—उसका कुछ अंश यों है।

"लंका शायर से छः हज़ार मील के फासले पर बैठा हुआ एक मायावी अपने चर्खों की घरघराहट और करघों की ठकठकाहट द्वारा अपने जादू मन्त्र का प्रयोग कर रहा है। यह करघे और चर्खे अपने कामों में लगे रह कर उस शिल्प प्रधान देश के भावी ऐश्वर्य की सूचना प्रदान कर रहे हैं। उस पुरुष की आकृति प्रचलित मायावियों की सी नहीं है। इस नाटे कद के ताम्रवर्ण दुबले-पतले मनुष्य की देह घुटनों से कमर तक साधारण मोटे वस्त्र से ढँका रहती है। उसके मुंड़े हुए सिरके मध्यभाग में कुछ बड़े-बड़े बाल और आगे के दाँत टूटे हुए है। छोटी मूछें उसे छिपाये रहती हैं। उसके कान बड़े बड़े और खड़े हैं दोनों आँख छोटी हैं किन्तु उनसे बुद्धिमत्ता टपकती है। उसकी गर्दन छोटी है। एक तरफ का कन्धा इतना अस्वाभाविक रूपसे ऊंचा उठा है कि उसे

एक बार उन्हों ने साफ़ २ कह दिया था—

कि मेरा ध्येय देश में अहिंसा का प्रचार करना है और जब उनसे पूछा गया कि कदाचित अहिंसा से देश को स्वाधीनता नहीं मिले हिंसा से मिले और देश हिंसा से स्वाधीनता लेने का अपनी योग्यता प्रमाणित करदे तब भी क्या आप अहिंसा के ही पक्ष में रहेंगे—तब भी इस सच्चे महात्मा ने यही जवाब दिया कि तब मैं देश—त्यागी बनू गा। उत्तर के पहाड़ों में चुपचाप जीवन के दिन काट दूंगा। पर- हिंसा से यदि स्वर्ग भी मिलेगा तो उसका लेना एक और रहा समर्थन भी न करू गा। ये उद्गार एक गम्भीर सत्य पर प्रकाश डालते हैं प्रथम तो यह कि महात्मा जी स्नुमीता वादी नहीं हैं, नीति वादी हैं उन्हें अपने गहरे से गहरे जोखिम के कामों का भी कुछ बदला स्वयं नहीं चाहिये यह केवल अत्याचार और सत्ताओं के बलात्कार को नापसन्द करने वाले और उस अनीती पर मर मिटने वाले व्यक्ति हैं, यह सार्वभौमप्रेम चाहते हैं जहां बलवान और निर्बल अपने बल को न आजमावे, जहाँ स्नेह के बन्धन में बन्धे बलवान कमज़ोरों की रक्षा में मरें, जैसे प्रत्येक मर्द अबला स्त्रियों की रक्षा को मरता है वे मनुष्य समाज को पशु समाज की तरह बलवानों की बजनीति से स्वभाविक घृणा करते हैं कमज़ोरों को बलवान मार कर खा जायें यह उन्हें सह्य नहीं है वे मनुष्य समाज में आनन्द,

से ही प्राप्त होगा। भारत को अगर जीवित रहना है तो उसे अवश्य ही स्वराज्य प्राप्त करना होगा। भाई लोग, तुम लड़ाई मत करना। हत्या करने से महा पाप होता है, इस के सिवा संख्या में बहुत होने पर भी तुम कमज़ोर और बलहीन हो। तुम केवल काम करते रहो और अपने देशवासियों को समझाते रहो। ग्रेट ब्रिटेन अपने स्वार्थों के लिये जब तक भारतवर्ष को पीछे की ओर खींचता रहेगा तब तक वह तुम्हें स्वराज ( होमरूल ) नहीं देगा। हम जितने दिन ब्रिटेन की चीज़ें खरीदते रहेंगे उतने दिन तक भारत को पराधीन रखने के लिये ब्रिटेन के हाथों को मज़बूत बनाते रहेंगे।"

हज़ारों उत्साही प्रचारक उसकी यह वाणी जन साधारण तक पहुँचाया करते हैं। अगणित शताब्दियों से बेखबर सोया हुआ विशाल भारत उस महापुरुष की वाणी सुनकर जागरण के लिये लगबगाने लगा है। वह कहता है—"हमें स्वराज्य क्या है! इसके लिये अधिक माथापची करने की आवश्यकता नहीं। महात्मा गाँधी की यही आज्ञा है। वह एक साधु पुरुष हैं। बस, उनकी आज्ञा है कि हम लोग विदेशी वस्त्र न ख़रीदें। यह दुःख की बात है, परन्तु उस से हमारी भलाई होगी। महात्मा गाँधी कह रहे हैं, इसलिये हम अवश्य ही उनकी आज्ञा का पालन करेंगे।"

महात्मा गाँधी ब्राह्मण नहीं, वैश्य हैं—दूकानदारों की

देखने से मालूम होता है, कि उसका सिर शरीर से मिला हुआ है। उसका आचरण जादूगरों की तरह नहीं होता। वह एक साधारण आसन पर बैठा रहता है। दोनों हाथ शान्त भाव से दोनों भुजाओं पर पड़े हैं। पैर पीछे की ओर मिले हुए हैं। उसका कण्ठस्वर भी जादूगर की तरह नहीं। आवाज़ ऊँची और स्पष्ट होती है। मुखमण्डल पर किसी भावका परिवर्त्तन नहीं सर्वैव यथाभाव टपकता रहता है। परन्तु यह सब होते हुए भी उसे मायावी कहना पड़ता है। क्योंकि वह जो कुछ कहता है, दर्शन शास्त्र की तरह गम्भीरतापूर्ण होता है, उपदेश की तरह सुनाई देता है और महाशक्तिशाली मन्त्र की तरह कार्य करता है। इसके प्रभाव से लंकाशायर की घोर गर्जन करने वाली बड़ी-बड़ी मिलें मानों शक्तिहीन सी हो रही हैं। उनका घोर गर्जन मानों एक दिन मामूली घनघनाहट की शक्ल में परिणत हो जाने वाला है। शीघ्र ही हज़ारों कर्महीन और शक्तिहीन व्यक्ति स्वच्छापूर्वक उस कष्टकर व्रती होकर अपने स्वदेशी भावों में बढ़ते जायेंगे। यह अवश्य ही होगा। क्योंकि इस ताम्रवर्ण मनुष्य के समुत्सुक चेले उसके मुँह से निकलते ही उसकी वाणी का प्रचार देश के कोने २ में कर देते हैं। असंख्य मनुष्यों में महात्मा गान्धी के नाम से विख्यात यह छोटे कदका, ताम्र वर्ण मनुष्य कहा करता है—"स्वराज तुम्हारे अभ्यन्तर

से ही प्राप्त होगा। भारत को अगर जीवित रहना है तो उसे अवश्य ही स्वराज्य प्राप्त करना होगा। भाई लोग, तुम लड़ाई मत करना। हत्या करने से महा पाप होता है, इस के सिवा संख्या में बहुत होने पर भी तुम कमज़ोर और अक्षहीन हो। तुम केवल काम करते रहो और अपने देशवासियों को समझाते रहो। ग्रेट ब्रिटेन अपने स्वार्थों के लिये जब तक भारतवर्ष को पीछे की ओर खींचता रहेगा तब तक वह तुम्हें स्वराज ( होमरूल ) नहीं देगा। हम जितने दिन ब्रिटेन की चीज़ें खरीदते रहेंगे उतने दिन तक भारत को पराधीन रखने के लिये ब्रिटन के हाथों को मज़बूत बनाते रहेंगे।"

हज़ारों उत्साही प्रचारक उसकी यह वाणी जन साधारण तक पहुँचाया करते हैं। अगणित शताब्दियों से बेख़बर सोया हुआ विशाल भारत उस महापुरुष की वाणी सुनकर जागरण के लिये लगबगाने लगा है। वह कहता है—"हमें स्वराज्य क्या है? इसके लिये अधिक माथापची करने की आवश्यकता नहीं। महात्मा गाँधी की यही आज्ञा है। वह एक साधु पुरुष हैं। बस, उनकी आज्ञा है कि हम लोग विदेशी वस्त्र न ख़रीदें। यह दुःख की बात है, परन्तु उस से हमारी भलाई होगी। महात्मा गाँधी कह रहे हैं, इसलिये हम अवश्य ही उनकी आज्ञा का पालन करेंगे।"

महात्मा गाँधी ब्राह्मण नहीं, वैश्य हैं—दूकानदारों की

श्रेणी का आदमी है। इस लिये भारतीय जाति भेद की प्रथा के अनुसार उसकी गणना तृतीय श्रेणी के हिन्दुओं में है। और सब से कुत्सित व्यापार यह है कि उस ने शूद्रों और पारिया आदि अछूतों को अपना कर अपने को जाति-च्युत कर डाला है। परन्तु इस से लज्जित होना तो दूर रहा वह अपने को गौरवान्वित ख़याल करता है और अपने को झाड़ूदार (भारत वर्ष में रास्तों पर झाड़ू देने वाले पारिया या जाति च्युतों से भी नीच समझे जाते हैं। ) कहा करता है। मानों यह उस के बड़े सम्मान का परिचय है। मुझे याद है, एक बार सन् १९१९ में, मद्रास की एक सभा में गाँधी ने कहा था,—"मुझे झाड़ूदार कहा गया है। यह नाम ग्रहण करके मैं गर्वका अनुभव करता हूँ। क्योंकि झाड़ू देने वाले का काम है साफ़ करना और साफ़ करने से बढ़ कर महत्वपूर्ण कार्य और क्या हो सकता है, यह मैं नहीं जानता। मैं भारत-वर्ष का कूड़ा साफ़ करने की कोशिश करता हूँ।"

महात्मा गांधी में जो सांघातिक शक्ति है, उसका अनुभव हमें अवश्य ही करना पड़ेगा, उसकी आकृति कम से कम पश्चात्य आदर्शके अनुसार प्रशंसनीय नहीं कही जा सकती। उसका धीर स्वभाव और वक्तृता, वर्तमान राजनीति से प्रत्यक्ष रूपमें अलग रहना आदि उसका बाहरी ढोंग मात्र है। वह अपने वास्तविक भावों को छिपा कर रखना ही पसन्द करता है।

संवाद पत्रों की सहायता से अन्यान्य व्यक्ति भी प्रसिद्धि प्राप्त कर रहे हैं, राजनीतिक नेता बनते आ रहे हैं। महात्मा गाँधी सब सन्देहों से अलग रहकर और साक्षात् तौर पर राजनीति के पीछे रह कर शक्ति सञ्चय कर रहा है। और दृढ़ता से किन्तु निश्चित रूप से अपने उद्देश्यों की ओर अग्रसर होता जा रहा है।



# चौथा अध्याय ।

## देश का वातावरण

——:०:——

गत ४० वर्ष से हम यह अनुभव कर रहे हैं कि अन्धकार में डूबी हुई जाति के भीतर ही भीतर एक नवीन जाति उत्पन्न हो रही है। प्राचीन हिन्दु जाति धर्मग्लानि के फेर में पड़ कर क्षुद्राशय हो गई थी। बीच में अनेक महान् आत्मायें आईं और अपनी शक्ति और प्रतिभा को खर्च करके जाति के विषम विपत्त काल में सहायता दे गए। उन्हीं के अमोघ प्रभाव से आज नवीन जातीयता के बीज उगते दीख रहे हैं। यह नवीन जातीयता साहसी, तेजस्वी, उच्चाशय, उदार, स्वार्थ त्यागी परोपकार और देशहित साधने के लिये उत्साही तथा उच्चाकाँक्षाओं से परिपूर्ण है। आज जो वृद्ध और युवकों के विचारों में अनैक्य तथा कार्य क्रम में विरोध दीख रहा है, वह इसी उत्थान का कारण है। कलियुग अन्धकार का युग था—वह अब समाप्त हो रहा प्रतीत होता है। देश का तरुण मण्डल अग्निस्फुलिंग के समान पुराने झोंपड़े को ढहा कर नवीन महल का निर्माण किया चाहता है। इस नवीन सन्तति

जिस कार्य को प्रारम्भ किया है उसे बिना पूर्ण किये उस का शान्त होना सम्भव नहीं प्रतीत होता। इस नवीनता के भीतर भी प्राचीनता का प्रभाव है, यह बिना कहे नहीं रहा जा सकता। और जब कभी भी भारत स्वाधीन होगा—यही विशेषता उसे संसार के राष्ट्रों में स्वतन्त्र स्थान देगी।

ब्रिटेन सत्ता ने भारत के इस उत्थान को सदैव ही विद्वेष कह कर परिचय दिया है, विद्वेष मानवीय हृदय की अति निकृष्ट भावना है। परन्तु जो कुछ देश में हो रहा है वह ब्रिटेन सत्ता के लिये चाहे भी कितनी हानि कर हो निकृष्ट भावना तो कदापि नहीं है।

यह तो कहा ही नहीं जा सकता कि इस भावना के बीच में कहीं भी विद्वेष है ही नहीं, परन्तु यदि कहीं घृणा और विद्वेष है। तो बदले के भाव से है। जो सर्वथा स्वाभाविक है।

गोरे और अर्ध गोरे पत्रों ने समय २ पर देश का इस उत्थान भावना को जिस उपेक्षा, घृणा, और तिरस्कार तथा विद्वेष से प्रकट किया है, तथा समय २ पर गोरे तथा आधे गोरे-मनुष्यों द्वारा रेल, बाज़ार-क्लब तथा अन्य स्थलों में जैसे अपमान जनक तथा कमीने आक्रमण हुए हैं उसे सहन करना बड़े से सहिष्णु मनुष्य के लिये सम्भव नहीं। क्रोध एक स्वाभाविक वस्तु है जो प्राणी के साथ रहता है, सच्चा और सतोगुणी क्रोध जिस मनुष्य की भृकुटी में नहीं

यह मनुष्य क्या हुआ ! स्वार्थ पर आघात होवे, अथवा अप्रिय आचरण पर—प्राणीमात्र के हृदय में क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो उठती है उस के अधिक बढ़ जाने पर विप्लव का आरम्भ होता है । भारतवासियों के हृदयों में बहुत काल से अंग्रेज़ व्यक्ति विशेषों के अन्यायाचरण अथवा नौकर शाही की स्वेच्छा चारिता से भीतर ही भीतर क्रोध तथा असन्तोष का संचय हो रहा था—पीछे जब नौकर शाही ने उस उदीय मान भावना को दमन नीति से दबाना चाहा तब उस असन्तोष ने तीव्र भाव धारण कर लिया । और षड्यन्त्रों की सृष्टि हुई।

जिस समय देश को अंग्रेज़ों ने अधिकृत किया था उस समय देश दुर्बल न था। अंग्रेज़ों का भारत को अधिकृत करना संसार के इतिहास में अद्भुत घटना है । यह देश दुर्बल, अज्ञानी और जंगली जातियों का निवास स्थान न था । प्रत्युत राजपूत, मराठा, सिख, पठान, मुगल, आदि योद्धा जातियों का वास स्थान था ।

जिस समय देश को अंग्रेज़ों ने विजय किया उस समय नाना फड़नवीस के समान विचक्षण राजनीति के प्रकाण्ड पण्डित, माधो जी सिंधिया जैसे रण पण्डित, सेनापति, हैदर अली और रणजीतसिंह जैसे तेजस्वी और प्रतिभाशाली राज्य निर्माता भारत के भिन्न २ प्रान्तों में जन्म ले चुके थे । यह बात हम साहस पूर्वक कह सकते हैं कि १८ वीं शताब्दि के भारत-

वासी संसार की किसी भी जाति की अपेक्षा कम शौर्य शाली और तेजस्वी एवं बुद्धिमान न थे।

१८ वीं शताब्दि का भारत धर्म विद्या का—लक्ष्मी का और राज्य शक्ति का केन्द्र था, फिर भी देश को अनायास ही अंग्रेज़ों ने कब्ज़े में कर लिया, जिस देश को प्रबल योद्धा, और कट्टर यवन शील मुसलमान ७०० वर्षों में—कभी निर्विघ्न शासन न कर सके उसे अंग्रेज़ों ने ५० ही वर्ष के अन्दर अनायास मुट्ठी भरे तुच्छ और पाजी व्यक्तियों के द्वारा अधिकृत कर लिया और १०० वर्षों में,एकछत्र छाया,के जादू से मोहित करके मोह निद्रा में सुला दिया। यदि इसे जादू भरा काम कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।

क्या इन के कारणों पर विचार किया जा सकता है? आप कह सकते हैं कि एकता का अभाव ही इस का कारण है, एकता का अभाव इस का कारण हो सकता है परन्तु यही केवल कारण नहीं। क्या महाभारत के युद्ध के समय एकता का अभाव न था? चन्द्रगुप्त और अशोक के समय भी एकता थी? इतिहास बताता है एकता भारत में कभी न थी यह मुगल राज्य का और १८ वीं शताब्दि में भी न थी।

आप दूसरा उत्तर यह दे सकते हैं कि अंग्रेज़ों के गुण भी इस सफलता का मूल कारण है। परन्तु क्या क्लाइव और वारन हेस्टिंग जैसे नर पशु डाकू गुणों के बल पर भारत में

है कि—"यह अपनी स्वतन्त्रता का निर्माण सोशालिष्ट आधार पर करे।

इसके सिवा—हबशी अधिकार रक्षणी सभा पैरिस, अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक बन्दी समिति, काबुल, जापान—कॉंग्रेस कमेटी, ब्रिटिश इण्डिया ऐसोसियेशन ओन्सवग, अमेरिका कॉंग्रेस कमेटी न्यूयार्क की भारतीय राष्ट्र समिति, केपटाउन के साउथ अफ्रीकन भारतीय संघ, सीलोन के युवक परिषद् ब्रिटिश मजूर नेताओं, साउथ अफ्रीकन भारतीय समिति, और ईस्ट अफ्रीकन भारतीय कॉंग्रेस के सहानुभूति के सन्देश आये हैं।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने जेनेवा से, तथा शैलेन्द्र घोष ने न्यूयार्क से सन्देश भेजे हैं, राजा महेन्द्र प्रताप का भी सन्देश प्राप्त हुआ है। मार्के की बात यह थी कि पण्डाल में जब शैलेन्द्र घोष और राजा महेन्द्र प्रताप के नाम लिये गये तब पण्डाल तालियों की प्रचण्ड गड़गड़ाहट से गूंज गया।

सार्वराष्ट्रीय ख्याति लाभ किये हुए, दीन दुखियों का पक्ष करने वाले मि० ए० एम० ब्रेलसफोर्ड अपने "न्यूलीडर" पत्र में लिखते हैं कि, "कॉंग्रेस की नीति खूब समझ में आती है, यद्यपि

उसको इतना तो करना ही चाहिये कि वह ऐसा मार्ग बनादे जिस से कुछ निश्चित समय के अन्दर हिन्दुस्थान को डोमिनियन स्वराज्य मिल जाय और इस विषय में किसी को कुछ भी शंका करने का अवसर न रह जाय। पुराने कट्टरों के सिवाय और कोई भी यह नहीं समझता कि हिन्दुस्थान को स्वराज्य दे डालना अभी बहुत वर्ष तक रोका जा सकता है और विचार शील हिन्दुस्थानियों में भी ऐसे लोग नहीं के बराबर होंगे जो यह समझते हों कि बीच में कुछ काल प्रगति के साथ बिताये, पूर्ण स्वराज्य लेने का और भी कोई रास्ता है।" मि० ब्रेल्सफोर्ड ने श्रीसुभाषचन्द्र बोस को हिन्दुस्थान का डीवेलेरा कह कर आगे कहा है कि, "इन के लिये सभी साधन उत्तम हैं और इन का लक्ष्य निश्चय ही स्वाधीनता है। जब एक बार करबन्दी के रूप में गदर आरंभ हो जायगा तब हिन्दुस्थान के इस रुप से उन्नत और लोक संख्या में सब से बड़े प्रान्त से हिंसावादी पक्ष उठेगा, आगे बढ़ेगा और स्वराज्य संग्राम की नीति निर्धारित करेगा। इस लिये मजूर गवर्नमेंट को चाहिये कि अभी से ऐसा रास्ता बना दे कि एक निश्चित अवधि के अन्दर हिन्दुस्थान को स्वराज्य मिल जाय। और यह काम ब्रिटिश गवर्मेंट को माडरेट नेताओं के मुंह बन्द होने और उनकी साख नष्ट होने के पूर्व करना चाहिये।" परन्तु यदि दोनों परस्पर विरोधी पक्ष इस नीति

है कि—"वह अपनी स्वतन्त्रता का निर्माण सोशलिष्ट आधार पर करे।

इसके सिवा—हबशी अधिकार रक्षणी सभा पैरिस, अन्तर्जातीय राजनैतिक बन्दी समिति, काबुल, जापान—काँग्रेस कमेटी, ब्रिटिश इण्डिया ऐसोसियेशन ओम्सवर्ग, अमेरिका काँग्रेस कमेटी न्यूयार्क की भारतीय राष्ट्र समिति, केपटाउन के साउथ अफ्रीकन भारतीय संघ, सीलोन के युवक परिषद्, ब्रिटिश मजूर नेताओं, साउथ अफ्रीकन भारतीय समिति, और ईस्ट अफ्रीकन भारतीय काँग्रेस के सहानुभूति के सन्देश आये हैं।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने जेनेवा से, तथा शैलेन्द्र घोष ने न्यूयार्क से सन्देश भेजे हैं, राजा महेन्द्र प्रताप का भी सन्देश प्राप्त हुआ है। मार्के की बात यह थी कि पण्डाल में जब शैलेन्द्र घोष और राजा महेन्द्र प्रताप के नाम लिये गये तब पण्डाल तालियों की प्रचण्ड गड़गड़ाहट से गूंज गया।

सार्वराष्ट्रीय ख्याति लाभ किये हुए, दीन-दुखियों का पक्ष करने वाले मि० एच० एन० ब्रेल्सफोर्ड अपने "न्यूलीडर" पत्र में लिखते हैं कि, "काँग्रेस की नीति खूब समझ में आती है, यद्यपि यह नीति संकट से खाली नहीं है। मजूर-गवर्नमेंट न तो स्वाधीनता दे सकती है, न उसके बारे में हिन्दुस्थान के नेताओं से बात कर सकती है, न उसके लिये तैयार हो सकती है, पर

उसको इतना तो करना ही चाहिये कि वह ऐसा मार्ग बनादे जिस से कुछ निश्चित समय के अन्दर हिन्दुस्थान को औपनिवेशिक स्वराज्य मिल जाय और इस विषय में किसी को कुछ भी शंका करने का अवसर न रह जाय। पुराने कट्टरों के सिवाय और कोई भी यह नहीं समझता कि हिन्दुस्थान को स्वराज्य दे डालना अभी बहुत वर्ष तक रोका जा सकता है और विचार शील हिन्दुस्थानियों में भी ऐसे लोग नहीं के बराबर होंगे जो यह समझते हों कि बीच में कुछ काल प्रगति के साथ बिताये, पूर्ण स्वराज्य लेने का और भी कोई रास्ता है।" मि० ब्रेल्सफोर्ड ने श्रीसुभासचन्द्र बोस को हिन्दुस्थान का डीवेलेरा कह कर आगे कहा है कि, "इन के लिये सभी साधन उत्तम हैं और इन का लक्ष्य निश्चय ही स्वाधीनता है। जब एक बार करबन्दी के रूप में गदर आरम्भ हो जायगा तब हिन्दुस्थान के इस सब से उन्नत और लोक संख्या में सब से बड़े प्रान्त मे हिंसावादी पक्ष उठेगा, आगे बढ़ेगा और स्वराज्य संग्राम की नीति निर्धारित करेगा। इस लिये मजूर गवर्नमेंट को चाहिये कि अभी से ऐसा रास्ता बना दे कि एक निश्चित अवधि के अन्दर हिन्दुस्थान को स्वराज्य मिल जाय। और यह काम ब्रिटिश गवर्नमेंट को माडरेट नेताओं के मुंह बन्द होने और उनकी साख नष्ट होने के पूर्व करना चाहिये।" परन्तु यदि दोनों परस्पर विरोधी पक्ष इस नीति

का चलाया जाना असंभव करदे, तो मि० ब्रेल्सफोर्ड कहते हैं कि, मजूरदल को हिन्दुस्थान का शासन करना छोड़ देना चाहिये। हमारा यह काम नहीं कि हिन्दुस्थान के विरुद्ध हम अन्य पार्टियों से मेल करें और हिन्दुस्थान का दमन करें। ऐसा करना मजूर संगठन को ही तोड़ डालना है।

गत ४ जनवरी को मजूरदलकी एक सभा में व्याख्यान देते हुए भारत के उपसचिव अर्ल रसेल ने हिन्दुस्थान के सम्बन्ध में कहा, "और लोग इतना क्या जानेंगे जितना स्वयं हिन्दुस्थानी ही इस बात को जानते हैं कि पूर्ण स्वाधीनता की बात कितनी मूर्खता पूर्ण है। औपनिवेशिक स्वराज्य भी अभी नहीं मिल सकता और उसके मिलने में अभी बहुत समय है। ग्रेट ब्रिटेन हिन्दुस्थान को प्रजा सत्तात्मक राज्य की ओर ले जारहा है, बीच में ही यदि एका एक इसे वह छोड़ दे तो हिन्दुस्थान की बड़ी दुर्गति होगी। ऐसे मूर्खता-पूर्ण प्रस्तावों या अन्य प्रकार के प्रापेगैंडा से मजदूर दल अपने लक्ष्य की ओर जाना नहीं छोड़ देगा। हम लोग जो यह कहते हैं कि हिन्दुस्थान में स्वराज्य ही हमारा लक्ष्य है इस में कोई धोखा धड़ी नहीं है, यह पूर्ण प्रामाणिक वचन है। इसी के लिये हम लोग यत्नवान हैं पर इन मूर्खता पूर्ण प्रस्तावों से जिन से हिन्दुस्थान के सभी ब्रिटिश मित्रों को दुःख हुआ है, हमारा मार्ग रुद्ध होता है।"

—मजूर दल के कुछ लोग अर्ल रसेल को इन बातों को भूतपूर्व कान्ज़रवेटिव गवर्नमेंट के भारत-उपसचिव अर्ल विन्टर्टन के ढंग की बातें समझते हैं और इस वक्तृता को "खुराफात से भरी हुई" कहते हैं। इस वक्तृता पर कामन्स सभा में भारतसचिव मि० वेजवुड बेनसे प्रश्न किये जाने वाले हैं। खास कर यह पूछा जाने वाला है कि अर्ल रसल ने ये बातें किस अधिकार से कही हैं।

स्वाधीन भारत भारत का नव ऋण बिना सोचे समझे नहीं अदा करेगा, इस आशय के भारतीय राष्ट्र महासभा (कांग्रेस) के प्रस्ताव से लन्दन स्टाक एक्सचेंज के बाज़ार में हिन्दुस्तानी सिक्यूरिटी-कागज़ों का भाव एकदम उतर गया। इस से बम्बई के शेयर बाजार वालों को बड़ा आश्चर्य हुआ है। "इण्डियन डेली मेल" के प्रतिनिधि ने बाम्बे स्टाक एक्सचेंज के प्रेसिडेंट श्री सराफ सेमेंट से भेंट की। उन्होंने कहा कि हिन्दुस्तानी सिक्यूरिटी का भाव तो बहुत उतरा है, पर एकाएक ऐसा क्यों हुआ यह कुछ ठीक समझ में नहीं आता। सम्भव है किसी ने लाहौर का क्रांतिकारक बातें सुनकर, घबरा कर अपने कागज़ बेच देने को निकाले हों और इसी से घबराहट के कारण बाज़ार में दर गिर गई हो। बम्बई स्टाक एक्सचेंज पर इस का कोई असर न पड़ा है, न आगा कल में पड़ने वाला है। हिन्दुस्तान स्वाधीन होगा तब अपना देना नहीं अदा

करेगा, इस बात में कुछ सार नहीं है। पहले तो हिन्दुस्तान स्वाधीन होता नहीं है, और फिर अब कभी होगा भी तब ऐसा करना हिन्दुस्तान के ही हक में अच्छा नहीं है; क्योंकि ऐसा करने से हिन्दुस्तान पर कौन विश्वास करेगा? इस से विदेशों के बाज़ारों में उसको क्या साख रह जायगी? कांग्रेस का यह प्रस्ताव केवल धमकी है जो कभी अमल में नहीं लाई जायगी। एक दूसरे शेयर-दलाल ने कहा कि इंगलैण्ड के व्यापारी घबरा गये हैं, समझते हैं कि मजूर-गवर्नमेंट बहुत दुर्बल है, वह कुछ कांग्रेसी नेताओं के क्रांतिकारी प्रयत्न को रोक न सकेगा, और हिन्दुस्तान जब स्वाधीन होगा तब वह अपना ऋण नहीं शोध करेगा। इन नेताओं की कार्रवाइयों का असर यहां के और विलायत के भी सिक्यूरिटी मारकेट पर पड़ेगा, हमारी सिक्यूरिटी-कागजों का भाव अभी और भी उतरेगा। इस लिये सरकार को चाहिये कि कांग्रेस के चरम पन्थी दल के क्रान्तिकारी उद्योग का दमन करे।

अमेरिका-युनाइटेड स्टेट्स की सिनेट सभा के सेनेटर ब्लेन ने यह विज्ञापित किया है कि मैं एक ऐसा प्रस्ताव तैयार कर रहा हूँ जिस में प्रेसिडेण्ट हूवर को "यह अधिकार होगा कि वह हिन्दुस्तान की नवीन गवर्नमेंट को मानें।" अमेरिका की कांग्रेस (पार्लिमेंट) का जब फिर से अधिवेशन होगा तब सेनेटर ब्लेन यह प्रस्ताव सिनेट सभा में उपस्थित करेंगे।

सेनेटर ब्लेन का यह कहना है कि सब राष्ट्र हिन्दुस्तान की स्वाधीनता को मानें और इस में अमेरिका अग्रसर होकर इसे सब से पहले माने।

" स्पेक्टेटर " पत्र कहता है कि हिन्दुस्तान की पूर्ण या अपूर्ण स्वाधीनता की कोई स्कीम कांग्रेस के पास नहीं, और ब्रिटिश गवनमेंट को यही चाहिये कि अपने मिजाज को ठीक रख कर न्याय और निर्भयता के साथ अपने रास्ते पर चली जाय। ' न्यूस्टेट्समैन " कहता है कि बहिष्कार करने वालों का बहिष्कार करो और सहयोग करने वालों से सहयोग करो। सप्रू से बात चीत करने से कुछ लाभ होगा, नेहरू से बात चीत करना उन्हें और सिर चढ़ाना है । " नेशन " कहता है कि वाइसराय उपद्रव का दमन करने या उपद्रव न होने देने के लिये जो कुछ करें उस में होम गवर्नमेंट को उन्हें पूरा सहारा देना चाहिये। " मैंचेस्टर गार्जियन " कहता है कि हिन्दुस्तान और ब्रिटेन के बीच जो अन्तिम समझौता होगा उस में औपनिवेशिक स्वराज्य का नाम न रहना ही दोनों के लिये हितकर होगा । पं० जवाहरलाल नेहरू के साम्यवाद-विचारों का आदर करते हुए "मैंचेस्टर गार्जियन" ने लिखा है कि कांग्रेस ने चाहे जो प्रस्ताव पास किया हो, इस में कोई सन्देह नहीं कि हिन्दुस्तान को जो भी स्थिर स्थायी गवर्नमेंट होगी वह अपनी पूर्व-सरकार का ऋण अदा करना अपना फर्ज समझेगी। "टाइम्स"

पत्र को इस बात की बड़ी खुशी है कि लिबरल और ... संघटित होकर अब कुछ करेंगे।

मजूर दल का मुखपत्र "डेलीहेराल्ड" कहता है ... कॉंग्रेस का लक्ष्य अब स्वाधीनता हो गया इससे ... कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, महात्मा गान्धी को चाहिये कि गवर्नमेंट के साथ सहयोग करें—"हम खेल नहीं खेलेंगे" यह कहने से काम नहीं चलेगा। मजूर गवर्नमेंट हिन्दुस्तान को स्वराज्य दिलाने के ही प्रयत्न में लगी हुई है, पर मजूर-गवर्नमेंट की इस नीति के सम्बन्ध में ब्रिटेन के कुछ सार्वजनिक कार्यकर्ताओं ने जैसे उत्तेजक और निन्दाई भाषण किये हैं उनसे इस प्रयत्न के सामने बड़ा ही कठिन समय उपस्थित हुआ है। "डेली हेराल्ड" को खास तौर पर लार्ड रोदरमियर के अखबारों से शिकायत है जो वाइसराय को भलाबुरा कह रहे हैं। यह वायसराय चरमपन्थियों के बीच में खड़े हैं जो यहाँ से हट जायँ तो हिन्दुस्तान पारस्परिक युद्ध से तहसनहस हो जाय।

"लिबर्टी" का लन्दनस्थ स वाददाता कहता है कि लाहौर कांग्रेस की कार्रवाई का स सार पर विलक्षण परिणाम हुआ है और हिन्दुस्तान के सम्बन्ध में यहाँ के समाचार पत्रों का दृष्टिकोण बदल गया है। अब यहाँ इस प्रश्न की चर्चा नहीं है कि हिंदुस्तान स्वराज्य के योग्य है या स्वाधीनता के, बल्कि यह चर्चा है कि कॉंग्रेस ने जो धमकी दी है उसे अमल में ला

सकती है या नहीं। और जनता कांग्रेस का कहां तक साथ देगी। ब्रिटेन ने हिन्दुस्तान के लिये या हिन्दुस्तान के नाम पर जो कुछ कर्ज-वर्ज ले रक्खा है उसकी अदाई का क्या उपाय होगा? और शान्ति के साथ हिन्दुस्तान को खाली कर देने के लिये अब कितना समय लेना चाहिये?

कैनाडा की राजधानी में व्याख्यान देते हुए दक्षिण अफ्रीका के जनरल स्मट्स ने कहा कि ब्रिटिश साम्राज्य ने सब उपनिवेशों को पूर्ण औपनिवेशिक स्वराज्य मान लिया इस से आयर्लैंड की "स्वाधीनता" का प्रश्न हल हो गया, इसी तरह हिन्दुस्तान के मामले में हमें करना यह होगा कि जहां हिन्दुस्तान अधीर हो उठे वहाँ हम धैर्य से काम लें और इस तरह पूर्ण औपनिवेशिक स्वराज्य का सिद्धान्त बढ़ाकर अन्त में सुखद समझौता सिद्ध करें।

यह खबर है कि भारत-सचिव मि० वेजवुडबेन साइमन-कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित होते ही तुरन्त हिन्दुस्तान में आवेंगे।

'डेलीएक्सप्रेस' का कहना है कि भारतीय अधिकारियों को कड़ाई की नीति अख़्तियार करनी चाहिये। कड़ाई ही भारत को उससे बचा सकती है जो नाज़ुक मौके पर सम्भव है भारत को उन्नति के पंथ पर बीस वर्ष पीछे हटा दे।

हम भारत के लिये क्रमशः औपनिवेशिक स्वराज्य की कल्पना कर सकते हैं परन्तु पूर्ण स्वतन्त्रता का लक्ष्य तो गैर अमली ही नहीं कल्पना तीत है।

मार्निग पोस्ट ने कहा है—कि जिस शक्ति ने पिछली दिसम्बर को वायसराय के स्पेशल के नीचे बम फेंका है, वही कॉंग्रेस के इस प्रस्ताव की पीठ पर थी। सरकार ने कॉंग्रेस का यह विद्रोही अधिवेशन होने की आज्ञा कैसे दी? पंजाब सरकार ने कॉंग्रेस के लिये ज़मीन दी और उस की रक्षा के लिये एक लाख रुपया खर्च किया। पञ्जाब सरकार ने यहां तक ही आत्म समर्पण नहीं किया वरन सच पूछो तो उस ने लठ बन्द बदमाशों को जिन्होंने प्रजा पर लाठियाँ चलाई अपना रक्षक बनाने की आज्ञा कांग्रेस को देकर अपने अधिकार को त्याग दिया।

"सण्डे टाईमस" ने लिखा—कि "हर एक आदमी इस बात को मानेगा कि स्वराजिस्ट लोग शक्ती शाली हो गये हैं, और सरकार से अनुरोध करेंगे कि वह गरम दल वालों के साथ बिना रोक टोक और बिना अधिक सोचे विचारे शक्ति का व्योहार करे।"

"डेलीमेलने लार्ड इरविन और मि० वाजवुड बेन को लताड़ते हुये उन्हें मुट्ठी भर गरम दल वालों से दब जाने का दोष दिया

है, और यम्य दुर्घटना के निन्दात्मक प्रस्ताव सम्बन्धी विरोध को तरफ़ इशारा करते हुये लिखा है कि कांग्रेस वालों का एक बड़ा भाग ऐसी यम्य-दुर्घटनाओं के पक्ष में है।

'डेली टेलीग्राफ़' ने सर फ़िरोज़ सेठना के भाषण पर टिप्पणी करते हुये लिखा है "माडरेट भी सभी स्वप्न सन्सार में विचर रहे हैं।

'डेली टेलीग्राफ" के विशेष सम्वाददाता ने एक तार में लिखा है कि पंडित जवाहर लाल के भाषण में अनेक राज-द्रोहात्मक वाक्य हैं, परन्तु अधिकारी वर्ग उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई करने को प्रस्तुत नहीं दिखाई देते, क्योंकि कांग्रेस भूमि अत्यन्त पवित्र और आदरणीय सी मानी जा रही है।

"मार्निंग पोस्ट" का नई दिल्ली का सम्वाददाता इस पत्र को तार देता है—कि जांच करने पर मालूम हुआ है कि भारत सरकार निश्चय कर चुकी है कि महात्मा गाँधी देश को अराजकता की तरफ़ लेजाने से रोके जायँगे।'

"सा० सटर्डे रिव्यू" ने ब्रिटेन को आगे बढ़ने की सम्मति दी है और भारतीय सहयोग का स्वागत और सहयोग से इन्कारियों की उपेक्षा करने को कहा है।

"नेशन" यह विचार प्रगट करता है कि "चूंकि लार्ड इरविन् को मोती नरम और मिला रहने की है तो कोई कारण

नहीं कि उसका राज्य सम्बन्धी प्रबन्ध शिथिल और कायरता पूर्ण होगा उसे पूर्ण विश्वास मिलना चाहिये कि प्रत्येक अवस्था में उसे इंगलैण्ड से पूरा सहयोग मिलेगा, चाहे वह यथार्थ अशान्ति को दबाये, अथवा पहले से ही वैसा मौका न आने देने की कोशिश करें।"

अल विण्टरटन पिछले दिनों भारत के उपमन्त्री थे। आपका कहना है कि महात्मा गान्धी और दूसरे नेताओं को पकड़ लेना चाहिये। लार्ड रीडिंग निपुण वाइसराय थे और लार्ड लायड चतुर गवरनर, जिन्होंने असहयोग के दिनों में महात्मा गान्धी को पकड़ा था। यही अब होना चाहिये। मुझे याद है कि जब असहयोग का ज़ोर था और बड़े धैर्य और साहस के साथ अंग्रेज अफ़सरों ने महात्मा गान्धी को पकड़ लिया था तो हिन्दुस्तान में एक कुत्ता भी न भूंका था इसके साथ ही असहयोग का प्रचार एक दम ठण्डा पड़ गया। वर्तमान सरकार के सामने वही सुनहरा अवसर उपस्थित हुआ है और वही नीति उसे भी काम में लानी चाहिये।

"लन्डन 'रेफरी' ने अपने सम्पादकीय लेख में महात्मा गान्धी की जबरदस्त समालोचना की है और कहा है कि महात्मा गांधी जी का भारत के नाम पर कुछ भी कहना ठगी करना है। अख़बार का कहना है कि कोई भी नेता उन करोड़ों

आदमियों का नेता कैसे बन सकता है जिनके साथ उठने बैठने व खाने पीने तक की वह हिम्मत नहीं दिखा सकता।

लेबर पार्टीके लाइट मि०लायडजार्जने लिखा है कि "मजदूर सरकार की नर्म नीति का ही यह परिणाम है कि भारतवासी इतने उद्दण्ड हो गये हैं सरकार को चाहिये कि नर्मी छोड़ दे और भारतवासियों को बतला दे कि कानून भंग कभी बरदाश्त न किया जायगा।

लार्ड बर्कनहेड ने भी इसी प्रकार की गुर्राहट प्रकट की है लायड जार्ज ने अपनी धूर्तता, और चालाकी से गत यूरोप युद्ध में अपने देश की बड़ी सेवा की थी। इस से उन्हें ख्याति प्रतिष्ठा और पद भी खूब मिले। परन्तु ऐसे लोगों की प्रतिष्ठा देर तक कायम नहीं रह सकती। आज उन्हें कोई भी आदमी उत्तर दायित्व पूर्ण व्यक्ति नहीं मानता, महायुद्ध के बाद इन्हों ने तत्कालीन स्थिति से लाभ उठा कर अमरीकन अखबारों में कुछ लेख लिखे थे। और उन से आप को असाधारण धनराशि प्राप्त हुई थी। इस के ज़रिये आप ने लिबरल पार्टी का एक ट्रस्ट बना लिया है जिस के कर्ता धर्ता आप स्वयं हैं। तब से आप को लिबरल पार्टी का लीडर समझा जाता है। युद्धकाल में तत्कालीन युद्ध मन्त्री मि० आस्क्विथ की जो परले दर्जे के नीति परक व्यक्ति थे—धकेल कर जिस तरह लायडजार्ज युद्ध में लिप्त हुये थे। उसे इस कठिन अवसर पर जनता ने नहीं

देखा था। परन्तु सुभीतेवादी चाहे भी जितनी सेवा देश की करें वे आदर्शवादी के बराबर प्रतिष्ठा के योग्य, नहीं बन सकते। हाल ही में आर्ल ग्रे मे में एक भाषण में आप का धनबल द्वारा नेता बनने का भण्डा फोड़ किया है और कहा है कि अगले चुनाव में हमारी पार्टी अपने फण्ड और विचारों से काम लेगी।

यही दशा लार्ड बर्कन हेड की है वे बड़े भारी धनी व्यक्ति हैं और इसी लिये जब वे कुछ कहते हैं तो यह एक बड़े आदमी की बात समझ कर कदर की जाती है। पर वे कोई लीडर नहीं। अनुदार दल में किसी तरह उन्हें भारत मन्त्री का पद प्राप्त हो गया था और तब से वे अपने को भारतीय मामलों का विशेषज्ञ ही समझने लगे हैं और अब जो मन में आता है उगल देते हैं। इसी लिये वर्तमान भारतमन्त्री वेज्वुडवेन और मजदूर पूर्व उपमन्त्री डॉ० ड्रमोन्ड शील्स ने कईबार पार्लिमेंट में स्पष्ट कह दिया है कि लार्ड बर्कनहेड भारतीय मामलों में बिल्कुल मूर्ख है और उन का बकवाद का कुछ भी मूल्य नहीं है। इन अधिकार हीन वक्ताओं की राय की क्या कीमत की जाय—यह पाठक स्वयं सोच सकते हैं।

पं० मोतीलाल नेहरू और महात्मा गान्धी ने वाइसराय के साथ की मुलाकात को असफल बना कर और बाद को कांग्रेस में अत्यन्त भ्रमोत्पादक अव्यवहारिक, मूर्खता, पूर्ण और

नीति विरुद्ध प्रस्ताव पास कराकर अपने ऊपर बड़ी संगीन जिम्मेवारी ली है, इन प्रस्तावों से देश के हितों को बहुत नुकसान पहुँचेगा।

मुसलमान भारत में ९ करोड़ हैं। वे अपने को पिछड़ी हुई जाति में समझते हैं और अल्प संख्यक होने के कारण विशेष अधिकार भी चाहते हैं। इस आन्दोलन में कितनी सत्यता है यह नहीं कहा जा सकता। यथार्थ तो यह है कि वे कांग्रेस तथा सरकार से अपना वस्तु सौदा करना चाहते हैं। जब वे यह देखते हैं कि सरकार हमारी नहीं सुनती तो वे कांग्रेस के साथ होजाते हैं। कांग्रेस में रहते हुए जब उनको अनुभव होता है कि हमारी अनुचित मांगोंको कांग्रेस कभी स्वीकार न करेगी तो वे कांग्रेस से निकल भागते हैं। बड़े बड़े मुसलमानों का यही हाल है। जो थोड़े बहुत मुसलमान राष्ट्रीय विचारों के हैं, उनका मुसलमानों पर प्रभाव नहीं है। मुसलमान नेहरू रिपोर्ट से असन्तुष्ट थे। लाहौर कांग्रेस ने नेहरू रिपोर्ट को रद्द कर दिया। आशा यह की जाती थी कि इससे मुसलमानोंका रोष कम हो जायेगा और वह आशापन से पुनः कांग्रेस में भाग लेने लगेंगे। किन्तु पटना से शफी दाऊदी, वदरुज्जमान तथा सरफराजखां इन तीन एसेम्बली के सदस्यों के नेतृत्व में जो घोषणा प्रकाशित हुई है उस से स्पष्ट है कि मुसलमान अब भी कांग्रेस से सन्तुष्ट नहीं और वे स्वतन्त्रताके प्रस्तावको भी दूसरे शब्दों

में नेहरू रिपोर्ट का समर्थक बताते हैं। कांग्रेस की ओर से कई मुसलमान सदस्य एसेम्बली में थे। समाचारों से पता लगता है कि जहाँ बीसियों हिन्दुओं ने एसेम्बली को छोड़ दिया है वहाँ केवल एक मुसलमान ने ही एसेम्बली की कुर्सी को खाली किया है। ये मुसलमान सज्जन श्री पण्डित मोती-लाल नेहरू के मन्त्री हैं। मुसलमानों में जितना अपने जातिगत भावों से प्रेम है उतना या उस से कुछ कम राष्ट्रीय भावना से स्नेह होता तो गनीमत थी। वर्तमान काल में तो मुसल मानों का खुदा ही हाफिज़ मालूम देता है। हैरानी तो यह है कि दूसरे देशों के मुसलमानों की दुर्गति को देख कर भी मुसलमानों के होश ठिकाने नहीं होते।

गत २९-३० दिसम्बर को मद्रास में लिबरल फेडरेशन का बाहरवां अधिवेशन सर फिरोज सेठना के सभापतित्व में हुआ था। लगभग २०० प्रतिनिधि उपस्थित थे जिनमें श्री श्री-निवास शास्त्री, सर चिमन लाल सीतलवाड़ सर तेजबहादुर सप्रू, श्री सी० वाई० चिन्तामणि तथा डा० एनी बीसेन्ट के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। स्वागताध्यक्ष सर रामस्वामी ऐय्यर के भाषण के बाद सभापति ने अपना आसन ग्रहण करते हुए अपने भाषण में कहा कि आज से ९ वर्ष पूर्व, १९११ में कनाट के ड्यूकने सम्राट् जार्ज पंचम का जो सन्देश सुनाया था, उसमें सम्राट् ने साम्राज्य के अन्य भागों में भारत को

भी रखने की आशा दिलायी थी, और हमें आशा है कि साम्राट् के प्रभाव से हमें स्वराज्य प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। जब तक यह निर्णय नहीं हो जाता कि भविष्य में भारत में किस प्रकार का शासन होगा तब तक भारत या इङ्गलैण्ड कहीं भी शान्ति नहीं रह सकती। सरकार ने साइमन कमीशन की नियुक्ति में जो भारी भूल की थी, उसीके परिणाम स्वरूप लिबरलदल ने भी उसके बहिष्कार में अन्य दलों का साथ दिया था, और उसी के फल स्वरूप आज राउण्ड टेबल कानफ्रेन्स की चर्चा चल रही है। इससे यह प्रकट है कि जब तक भारत इंगलैण्ड के साथ सहयोग नहीं करेगा तब तक यहाँ का काम अच्छी तरह नहीं चल सकता। राष्ट्रीय कांग्रेस ने मद्रास और कलकत्ते के गत अधिवेशनों में स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में जो निश्चय किये थे हमारे दल को पसन्द नहीं। हम औपनिवेशिक स्वराज्य के पक्षपाती हैं। यदि भारत को शीघ्र औपनिवेशिक स्वराज्य दे दिया गया तो ब्रिटिश सम्बन्ध तोड़ने का कोई कारण नहीं। किन्तु हमें या सरकार को स्वतन्त्रता-आन्दोलन को कम महत्व नहीं देना चाहिये। आपने ब्रिटिश सरकार के प्रस्ताव को स्वीकृत कर समझौता-सभा के प्रस्ताव को मंजूर करने की राय दी। आगे समझौता-सभा के सम्बन्ध में आपने कहा था कि यदि सभा के विचारक्षेत्र से तत्काल पूर्ण जिम्मेदार सरकार स्थापित करने या औपनिवेशिक

पद प्राप्त करने का प्रश्न निकाल दिया गया तो सभा से कोई लाभ नहीं और ऐसी अवस्था में ब्रिटिश सरकार का प्रस्ताव अस्वीकृत करना होगा। देशी नरेशों ने समझौता सभा का स्वागत किया है, इस बात पर सन्तोष प्रकट करते हुए आपने आशा प्रकट की कि आगे देशी नरेश भी अपने राज्यों में जिम्मेदार सरकार कायम करेंगे। आपने सरकार की मुद्रा नीति की निन्दा की।

सम्मेलन में कई महत्व पूर्ण प्रस्ताव पास हुए। एक प्रस्ताव में वाइसराय की ट्रेन पर वम्ब फेंकने की चेष्टा की निन्दा की गयी। दूसरे में वाईसराय की घोषणा का स्वागत करते हुए यह निश्चय किया गया कि घोषणा के अनुसार किये जाने वाले सम्मेलन में शामिल होना चाहिये। और इस बात पर जोर दिया गया कि १६३० में एक सर्वदल सम्मेलन किया जाय जिसमें भारत के उन्नतिशील दलों क प्रतिनिधि अधिक स ख्या में रहें। एक प्रस्ताव द्वारा अनुरोध किया गया कि आवश्यक शर्तों के साथ औपनिवेशिक स्वराज्य विधान बनवाने के लिये सब दल मिल जाँय। एक प्रस्ताव में कहा गया कि सरकार केनिया में सुधार करते समय यह ध्यान रखे कि उससे वहाँ के सब निवासी लाभ उठा सकें।

फेडरेशन को एक सज्जन ने १३ हजार का दान दिया। अगले साल यह सम्मेलन कलकत्ते में होगा।

कांग्रेस और लिबरल फिडरेशन की नीतियों में बड़ा भेद यह है कि कांग्रेस की नीति का आधार ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश राजनीतिज्ञों की प्रतिज्ञाओं पर अविश्वास है और वह भारतीय स्वराज्य के लिये इतनी बेचैन है कि भारत का ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर रहना अनिवार्य रूप से अवश्यक नहीं समझती। दूसरी तरफ लिबरलों की नीति का आधार ब्रिटिश सरकार की प्रतिज्ञाएं, एलान कानून और इशारे हैं। लिबरल लोगों को बिना ब्रिटिश साम्राज्य के भारत का कोई अंश ही नज़र नहीं आता। वे भारत की ऐसी कोई स्थिति अपनी कल्पना में भी नहीं ला सकते जब वह ब्रिटिश साम्राज्य से अलग हो जायगा। अथवा ब्रिटिश सरकार का हाथ उनके सिर पर न होगा।

पं० जवाहरलाल नेहरू और सर सेठना के भाषणों में यह भेद बहुत स्पष्ट हो गया है। दोनों में वर्तमान परिस्थिति पर पूरा विचार किया गया है। दोनों भाषण उत्तम युक्तिवाद का नमूना हैं। परन्तु जवाहरलाल नेहरू देश का वर्तमान अधोगति का कारण ब्रिटिश साम्राज्य को बताते हैं और उनका ख्याल है जब तक ब्रिटिश साम्राज्य से हमारा सम्बन्ध है तब तक वह दूर नहीं हो सकती, इस लिये उनके विषय में ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्त होना ही कर्त्तव्य है।

यह सच है कि पं० जवाहरलाल के पास कोई उपाय इसे

समय नहीं। उपाय उन्होंने फिर के लिये रख छोड़ा है- पर स
सेठना की दृष्टि तो यहाँ तक जाती ही नहीं वे अपनी वर्तमान
अवस्था में असन्तुष्ट भी नहीं। उनका लक्ष्य ऐसी स्थिति में
पहुँचना है जिसमें भारत और ब्रिटन परस्पर के सहयोग
हों। इस लिये उनका भाषण ब्रिटिश सरकार के एक वर्ष के
पहले की अवस्था से प्रारम्भ होकर वर्तमान अवस्था पर
खतम हो जाता है। वे मजूर सरकार से बड़ी आशा रखते हैं
ये आशाएं उन्हें बहुत अधिक हैं। यह अब भविष्य पर निर्भर
है, कि इन दोनों प्रमुख दलों में कौन भारत का सच्चा
हितैषी है।

कांग्रेस के स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास करने देने के
कारण भारतीय उदार दल ने मद्रास में यह निश्चय किया था
कि जो लोग गोल मेज कान्फ्रेंस में शामिल होने में लाभ
समझते हैं और औपनिवेशिक स्वराज्य को अपना ध्येय मानते
हैं ऐसे लोगों की सभा फरवरी मास में बुलाई जाय। सर तेज
बहादुर सप्रू इस सम्मेलन को दिल्ली में शीघ्र से शीघ्र बुलाने
के लिये प्रयत्न कर रहे हैं। कल समाचारपत्रों में यह छपा था
कि सप्रू साहब को इस में सफलता नहीं मिल रही है सर
सप्रू ने इस समाचार का खण्डन किया है और कहा है कि
औपनिवेशिक स्वराज्य में विश्वास करने वाले हिन्दू मुसलमान
और सिक्खों का सर्व-दल सम्मेलन शीघ्र ही होगा। मुझे इस

में शामिल होने के लिये भिन्न २ स्थानों से बहुत से सन्देश मिले हैं। इन में से कई तो ऐसे हैं जिन को मुझे उम्मीद कम थी। अभी मैं इतना ही कह सकता हूँ कि मुझे भविष्य में पूर्ण सफलता की आशा है।

डाक्टर बिसेन्ट ने एसोसियटेड प्रेस से बात चीत में कहा है कि सब से पहले यह आवश्यक है कि देश के वे सब दल जो औपनिवेशिक स्वराज्य में विश्वास रखते हैं एक स्थान पर एकत्र हों। इन दलों को यह सम्मेलन स्वराज्य का समविदा बनाने के लिये एक कमिटी नियत करे इस सम्मेलन की ओर से कुछ लोग नियत किये जायें जो इस स्वराज्य स्कीम के पक्ष में अख-बारों में लेख लिखें, इस स्वराज्य स्कीम के बारे में परचे जनता में मुफ्त बांटे जावें। दूसरे देशों को औपनिवेशिक स्वराज्य से क्या लाभ हुआ है और भारत भी इस से क्या लाभ उठा सकता है इस विषय की छोटी २ पुस्तकें थोड़े दामों में बेचा जावे। यह सर्वदल सम्मेलन फरवरी में हो जाना चाहिये। यह सम्मेलन रिक्त स्थानों के चुनाव के लिये चुनाव बोर्ड बनावे। और इस के उम्मेदवारों को आर्थिक सहायता दी जावे। इस सवदल सम्मेलन की योजना के लिये भारतीय उदार दल की ओर से कमेटी नियत हो चुकी है।

देश के व्यापारी आज कल विलायत के बड़े भारी दलाल हैं। ये देश के शत्रु हो साबित होंगे। विदेश से सहयोग हा

उनका जीवन है, इस का अनुमान कोटा (राज पूताना) के ज़मींदार और महाजन, दीवान बहादुर केसरी सिंह हाफना के एक बयान से चलेगा, आपने प्रेस को यह वक्तव्य दिया है।

"लाहौर कांग्रेस के सभापति के भाषण से उन व्यापारियों और ज़मीदारों की आँखे खुल जायेंगी। जो अब तक कांग्रेस की सहायता करते आये हैं। यदि भविष्य में कांग्रेस देश का ऐसा ही नेतृत्व करना चाहती है तो जिस किसी के पास जायदाद या धन या निजी स्वार्थ हो उसे कांग्रेस के झगड़े से सदा के लिये हट जाना चाहिये। पं० जवाहर लाल नहरू ने जिन राजनैतिक या आर्थिक सिद्धान्तों पर प्रचार किया है संगठित रूप से उनका विरोध करना हमारा प्रधान कर्तव्य होगया है। लार्ड इरविन ने भारत को उसके न्याय सिद्ध अधिकार दिलाने के अनुकूल वातावरण पैदा करने के लिये जो कुछ किया उतना किसी भी जीवित राजनीतिज्ञ ने नहीं किया है। मुझे पक्का भरोसा है कि जिन सिद्धान्तों का प्रचार किया जा रहा है यदि उनके वास्तविक अर्थ का पता चल जाय तो कांग्रेस को कुछ अस्थिर चित्त, पथभ्रष्ट और उन्मादी युवकों के सिवा कोई न मानेगा।

वर्तमान ब्रिटिश गवर्नमेंट मज़दूर दल पर भारत की उदारता की बड़ी श्रद्धा है और आशा भी है। इस लिये उसका कुछ इतिहास दे देना आवश्यक है।

अब ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल मि० रामजेमेकडानल्ड के हाथ में आ गया और मि० बाल्डविन ने सर्वेल पर्ल ब्रिटिश सम्राट को मोहर दे दी। ब्रिटिश साम्राज्यवादी दल गिर गया और लिबरल दल बीच में लटक कर मि० लायड जार्ज की कूटनीति पर गर्व करता रहा। मि० रामजेमेकडानल्ड ने उक्त दोनों दलों को हरा कर मन्त्रिमण्डल पर कब्जा तो कर लिया, पर यह नोट करने के लायक बात थी कि यदि "टोरी" दल और "लिबरल" दल कहीं मिल गये तो मजूर दल को हार खानी पड़ेगी। इस समय किसी एक दल के मुकाबले में मजूर दल का बहुमत भले हो हो, पर उसको हार की आशंका तो बनी हीं रही है। हाँ, इतना हम अवश्य ही कहेंगे कि वर्तमान ब्रिटिश प्रधान मन्त्री ने बड़ी ही मुस्तैदी और बुद्धिमत्ता से मन्त्रिमण्डल बनाया। ब्रिटेन की खास समस्या को लेकर इङ्गलैंड के प्रायः सभी दल एक हैं, आपस में मिलकर इस आशय का समझौता किया था कि सब कुछ हो पर भारत की चर्चा न उठायो जाय। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि घरेलू समस्या को हल करने के लिये प्रधान मन्त्री साहब ने जिन सज्जनों को पदाधिकारी बनाया था वे बड़ी ही सुगमता से अपना काम करते रहेंगे। कठिनाई थी केवल भारत सचिव के पद नियुक्ति करने की बात पर, मि० रामजेमेकडानल्ड ने इस पद पर कैप्टेन बेजवुड की (कर्नल वेजवुड नहीं) नियुक्त कर

आन्दोलन करने वालों का मुंह एक दम बन्द कर दिया। इतना तो अवश्य तय था कि इस पद पर आपके ही दल का कोई व्यक्ति नियुक्त किया जायगा, क्योंकि किसी अन्य दल के सदस्य को इस पद पर नियुक्त करना झमेले में पड़ना था। इस पद पर जिन सदस्यों का नियुक्त करने का अटकल लगाया था लार्ड ओलिवर लार्ड चैम्सफोर्ड, मि० हार्टशार्न, सर मेनार्ड एवम् मि० आन्सटन थे। पर इन सज्जनों के बारे में जिन्हें कुछ भी ज्ञात है वे मि० रामजे मेक्डानल्ड की बुद्धिमत्ता की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। लार्ड ओलिवर भूत पूर्व भारत सचिव थे आपने भारत के लिये क्या किया एवं आपके कार्य्यों से भारत कहां तक प्रसन्न है स्वतः स्पष्ट है। लार्ड चैम्सफोर्ड के विषय में कुछ कहने की आवश्यकता ही नहीं है। भारत के आप भूतपूर्व वायसराय थे आपके ही शासन काल में भारत को भाग्यवश अथवा अभाग्यवश "भारत सुधार" मिला था और "पञ्जाब मार्शल ला" का मज़ा चखना पड़ा था। प्रधान मन्त्री ने सोचा कि आपको भारत मन्त्री बनाना भारत में भावी शासन सुधार को "माण्टफर्ड सुधार" की ही कसौटी पर कसना है। साइमन कमीशन की रिपोर्ट विलायत में पेश थी। इस पर वाइसराय साहब के पहुंचने पर महत्वपूर्ण विचार होने की सम्भावना थी विलायत के कई समाचार पत्रों की राय में भारत को

औपनिवेशिक स्वायत्तशासन देना ठीक ज्ञात होता था'हिन्दू' पत्र के लन्दन स्थित संवाददाता ने भी इसी आशय का विचार प्रकट किया था। ऐसी स्थिति में यदि लार्ड चेम्सफोर्ड भारत सचिव बनाये गये होते तो कहां तक उचित होता मि० हार्टशार्न साइमन कमीशन के एक मेम्बर थे। अतएव इनके बारे में अधिक कहने की आवश्यकता ही नहीं। मि० मेनार्ड इण्डियन सिविल सर्विस में रह चुके थे। भारत सचिव के पद पर इन्हें बैठाना पुराने विचारों को दुहराना था। पुरानी बोतल में नई शराब नहीं रखी जा सकती। मि० आन्सटन उस पद पर नियुक्त किये जा सकते थे, पर इनके लिये प्रधान मन्त्री ने दूसरा ही कार्य देना तय कर लिया था। अतएव पार्लमेंट के एक अनुभवी मेम्बर कैप्टन विलियम वेजवुड को ही आप ने भारत सचिव बनाया। इस समय इङ्गलैंड के सामने बड़ी ही विकट राजनीतिक समस्या है भारत और इङ्गलैंड में सद्भाव स्थापित किये बिना कल्याण नहीं है। इस समस्या को ये भारत मन्त्री कहाँ तक हल कर सकेंगे समय ही बतायेगा।

बंगविच्छेद के समय भारत में घोर राजनीतिक अशान्ति फैली हुई थी मि० रामजे मेकडानल्ड भारत का तत्कालीन परिस्थितिका अध्ययन करने के लिये भारत आये थे। भारत में रहकर उन्होंने यहां के सभी गण्यमान्य व्यक्तियों का परिचय प्राप्त किया और भिन्न २ समस्याओं को ध्यान पूर्वक हृदयङ्गम

किया। यहा से इंगलैंड वापस आकर उन्होंने १६१० ई० में "भारत में जागृति" नामक एक पुस्तक प्रकाशित की थी जो वास्तव में पढ़ने योग्य है। इस पुस्तक में उन्होंने भारतीय जीवन के कई अंगों पर प्रकाश डाला जिस का उन पर भारत भ्रमण में काफी प्रभाव पड़ा था। अब उस पुस्तक का मिलना कठिन प्राय हो रहा है इस लिये उस पुस्तक के कुछ अंश पाठकों को जानकारी के लिये प्रकाशित किये जाते हैं इंगलैंड जाते समय वे जिस समय बम्बई में थे उस समय उन्हों ने स्पष्ट शब्दों में भारत सरकार के सम्बन्ध में अपने विचारों को प्रकट किया था जिस के फल स्वरूप एक ऐंग्लो इण्डियन समाचार पत्र ने आपकी तीव्रालोचना की थी।

भारतीय राष्ट्रीयता की कठिनाइयों के सम्बन्ध में अपने विचारों को प्रकट करते हुए मि० मेकडानल्ड ने अपनी पुस्तक में लिखा था कि सब से बड़ी भयङ्कर कठिनाई ( बाधा ) ऐंग्लो इण्डियन जाति है। सर्विस ( नौकरी ) से ऐसी आशा नहीं की जा सकती कि वह राष्ट्रीय भावों का स्वागत करेगी वह राष्ट्रीयता के साधारण शब्दों को राजद्रोहात्मक बतला कर निन्दा करती है और जो उसके कार्यों की आलोचना करते हैं उन्हें ( ऐंग्लो इण्डियन ) क्रान्तिकारी बतलाती है। इसने राजद्रोह के क्षेत्र को चौड़ा बना रखा है। सब से बड़ी बात यह है कि यह जाति बिना विचार किये ही अभियुक्तों को

निर्वासन दण्ड दे देती है उन्हें यह भी नहीं बतलाती, कि उन्हों ने अमुक अपराध किया है। उसका अत्याचार यहां तक बढ़ गया है।

शासन का फिजूल खर्चों ने तो उनका विशेष रुप से ध्यान आकृष्ट किया क्योंकि वे खुद ही निधन मजदूरों के प्रतिनिधि थे आपने लिखा है कि कोई भी व्यक्ति जो भारत देख चुका है, और भारत सरकार की जड़ों को जानता है, इस बात को त्रिकाल में अस्वीकार नहीं कर सकता है कि शासन में फिजूल खर्ची नहीं है योरोपियनों के लिये धन व्यर्थ खर्च किया जाता है। शिमला उटकमंड आदि पहाड़ी स्टेशनों में फिजूल खर्ची पाई जाती है।

सरकारी अफसरों के निवासस्थानों के लिये जो व्यय होता है उस में फिजूल खर्ची है।

सेंट्रल तथा प्रान्तीय सरकारों के बजट के एस्टिमेट में जनता को और मांगों के साथ कितना थोड़ा व्यय किया जाता है और उनके हितों पर किस प्रकार कुठाराघात किया जाता है, इस सम्बन्ध में भारत मन्त्री ने लिखा कि भारत की आमदनी का बहुत बड़ा भाग साम्राज्य के काम में खर्च होता है और उसका बहुत थोड़ा भाग भारतीय काम के लिये व्यय होता है। आगे चलकर आपने लिखा है कि सेना पर भारत

सरकार जो धन व्यय करती है उसमें साउथ अफ्रीका कनाडा आस्ट्रेलिया आदि का भी हिस्सा होना चाहिये। क्योंकि सेना समस्त साम्राज्य की रक्षा के लिये है। भारत ही अकेले सब के लिये क्यों धमदे। भारत पर सेना के व्यय का कुल बोझ लादना घोर अन्याय है। कारण कि कुल सैनिक व्यय का दसवाँ हिस्सा भारत को ही देना पड़ता है भारत के शासन की और अफसरों की व्यक्तिगत फिजूल खर्ची आँखों से देखी जा सकती है।

सरकार पर आक्षेप करते हुए मि० मेकडानल्डने लिखा था कि मुख्यतः हमारे ऊपर दो अभियोग लगाये जा सकते हैं। एक तो हमारी सरकार फिजूल खर्च है और दूसरे हमने भारत के साथ कमीने पनका व्यवहार किया है।

राजद्रोह सम्बन्धी कानून जिस प्रकार भारत वर्ष में लगाये जाते हैं उस सम्बन्ध में प्रधान मन्त्री लिखते हैं कि राज विद्रोह के प्रति भारत सरकार का जैसा रुख है उससे सरकार की निर्बलता स्पष्टतया झलकती है। भारत के सपूतों के ही बारे में घोर आपत्ति जनक और क्रोधोत्पादक लेखों के लिखने के लिये सरकार एंग्लो इण्डियन समाचार पत्रों को आज्ञा देती है। लेकिन ऐसा गुस्ताखीके तौर पर किया जाता है। और इन लेखों के जो भारतीयों द्वारा उत्तर दिये जाते है। वे सरकार

द्वारा विद्रोहात्मक जातियों मे वैमनस्य फैलाने वाले और सरकार को नीचा दिखाने वाले समझे जाते हैं। इसी के निमित्त भारत मे प्रेस ऐक्ट को जन्म दिया गया है।

आगे चलकर मजूर प्रधान मन्त्री लिखते हैं कि नौकर शाही को यह बड़ी भारी भूल है जो वह "अमृत बाजार पत्रिका" "बंगाली" और 'पञ्जाबी" जैसे समाचार पत्रों को आपत्तिजनक और विद्रोही समझती है। इन पत्रों ने जो कुछ लिखा है क्रोध के वशीभूत होकर लिखा है। कभी २ उन्होंने हमारे प्रति आ कड़े शब्द लिखे हैं वह इस लिये लिखे हैं क्योंकि वह हमें भली भांति पहचान नहीं सके हैं, किन्तु इन पत्रों ने हमारी उतनी बुराई नहीं की है जितनी इगलिशमन और सिविल मिलिटरी गजट ने की है। इन्होंने जिनको नौकर शाही समर्थक और पृष्ठ पोषक समझती है हमारे हितों पर घोर कुठाराघात किया है।

मि० रामजे मेकडानल्ड को पुस्तक के उपयुक्त अवतरणों से पाठक भली भांति समझ गये होंगे कि उस समय भारत के सम्बन्ध में उनके क्या विचार थे और इस समय जब कि उन्होंने शासन की बागडोर अपने हाथ में ली है, क्या हैं। क्या अब के मि० रामजे मेकडानल्ड आज मि० रामजे मेकडानल्ड

हैं ? कहना न होगा कि एक ही मि० रामजे मेकडानल्ड के दोनों समय के विचारों में जमीन आसमान का अन्तर हो गया है।

निश्चय यह सच है कि सरकार चाहे मजदूरों की हो या लाट लोगों की भारत को, उससे कुछ भी आशा नहीं है। परन्तु हमें यह जानलेना चाहिये कि ब्रिटिश गवर्नमेंन्ट ही ब्रिटेन नहीं है—इंगलैण्ड के दो रूप हैं—इस बात का दिग्दर्शन अमेरिका के प्रख्यात लेखक डा० जे० टी० सदरलैन्ड ने इस प्रकार किया है।

इंगलैंड दो हैं, यह बात गुलामी में पड़े हुए भारत को दुःख के साथ स्पष्ट दिखाई पड़ी है। एक इंगलैण्ड तो वह है जो न्याय और स्वतन्त्रता में विश्वास रखता है और उस का यह विश्वास केवल स्वदेश ही के लिये नहीं बल्कि सर्वत्र के लिये है जिस से भारत भी बाहर नहीं है। यह मेगनाकार्टा, मिलटन पिम और हैम्पन का इंगलैंड है और १७७६ ई० में अमेरिकन उपनिवेशों के लिये न्याय की मांग करने वाले बर्क पिट, और फाक्स का इंगलैंड है तथा भारत के लिये वारेन हेस्टिंग्स के मुकद्दमों के सम्बन्ध में न्याय की माँग करने वाले बर्क और शेरिडन का इंगलैंड है। यह इंगलैंड है जिस ने १८०७ ई० में अपने यहा गुलामी का व्यापार बन्द किया

८३३ ई०में कुल ब्रिटिश उपनिवेशों से गुलामी को अन्त कर या था। यह रिफ़ार्म बिल्स का इंगलैंड है। यह कोबडेन, ाइट, लार्ड रिपन,मेरी कार्पेन्टर,प्रो० फासेट, चार्ल्स, ब्रे डला, ग्रुसर विलियम वेडरबर्न, सर हेनरी काटन आदि का इंगलैंड जो सब के सब भारत के मित्र थे। यह आज भी कितने ही ारतवासियों का इंगलैंड है जो पार्लिमेंट में और उसके बाहर ै हैं और जिनका सम्बन्ध मुख्यतः मजूरदलके साथ है। इस गलैंड को मैं प्रतिष्ठा और प्यार करता हूँ। इस इंगलैंड की ारत प्रेम और प्रतिष्ठा करता है। यही इंगलैण्ड है जिसने ब्रेटेन का नाम महान् किया है। अगर इस इंगलैंड के हाथ में अधिकार होता तो भारत कभी जीतकरके गुलाम न बनायाजाता ाया होता बल्कि उस के साथ न्याय और मित्रता का बर्ताव कया गया होता और जापान के समान उस की भी उन्नति रने में सहायता की गई होती, यह विश्वास करने का बहुत ारण है कि अगर आज भी इस इंगलैंड के हाथ में अधिकार आये तो यह तुरन्त ही उदारता, ईमानदारी और बिल्कुल ही सद्भाव से प्रेरित हो भारत को कनाडा और आस्ट्रेलिया के समान औपनिवेशिक स्वराज्य देकर भारत को सन्तुष्ट करके साम्राज्य के भीतर बनाये रख सकता है और तभी यह कहना ठीक हो सकता है कि ब्रिटिश साम्राज्य कामनवेल्थ या स्वतन्त्र राज्यों का संघ है।

दुर्भाग्य वश एक दूसरा इंगलैंड भी है। चाहे कोई बात स्वीकार करने का अनिच्छुक हो और चाहे दूसरा इंगलैंड न होता तो अच्छा था, किन्तु एक इं जिस के आदर्श और राजनीतिक सिद्धान्त ऊपर कहे इंगलैंड के आदर्शों के प्राय ठीक उलटे हैं। यह वह इं है जो मैगनाकार्टा के विरुद्ध खड़ा था और जिस ने १७७६ में अमेरिकन उपनिवेशों को स्वतन्त्रता देने और उन के साथ न्याय करने से इनकार किया था। यह वह इंगलैंड है जो कई बार सैनिकता और साम्राज्यवादिता का साथ दे चुका है जिस ने चीन को जबरदस्ती अफीम खिलाने के लिये दो युद्ध किये हैं, जिसने आयर्लैण्ड को बहुत काल तक गुलामी में रखा था। जिसने गुलामी और गुलामों के व्यापार को उठा देने के प्रयत्नों का विरोध किया था, जिसने इंगलैंड में प्राय सभी प्रकार के राजनीतिक और सामाजिक सुधारों का विरोध किया था और जो आज भारत को बड़ा २ आशाएं दिलाता हुआ भी भारत के उन नेताओं को जेलों में बन्द करता है जो स्वतन्त्रता के लिये आन्दोलन करते हैं और यह विश्वास नहीं दिलाता कि वह भारतीय साम्राज्य के ऊपर से अपना फौलादी पञ्जा ढीला करने का कभी भी वास्तविक विचार करता है। इस इंगलैंड को भारत न तो प्यार ही करता है और न प्रतिष्ठा ही, च सार का न्याय और स्वतन्त्रता का प्रेमी कोई भी

पकि इस इंगलैंड का सम्मान नहीं कर सकता मेरी समझ
। तो यदि इस इंगलैंड का नियन्त्रण न किया गया तो यह
ारतवासियों और ब्रिटेन के बीच ऐसा द्वेष भाव पैदा कर
गा जो मिट नहीं सकेगा और इस तरह भारत को अशांति
ा ऐसा भयंकर ज्वालामुखी बना देगा जो निश्चय ही बहुत
ग्न भयंकर रूप में फूट पड़ेगा।

दूसरे शब्दों में मैं विश्वास करता हूँ कि जिस की
ाठी उसकी भैंस का सिद्धान्त वाला यह साम्राज्य लोलुप
गलैण्ड यदि अधिकार सम्पन्न रहा तो निश्चय ही ब्रिटेन
ारत को खो बैठेगा। यह उतना ही निश्चय है जितना सूर्यका
िकलना। इस इंगलैण्ड के अध्यक्ष हमारे समय के लार्ड नार्थ
ी कोटि के पुरुष हैं जो भारत को क्रान्ति करने के लिये उसी
रह लाचार कर रहे हैं जैसे १७७६ ई० मे लार्ड नार्थ और
ूसरे जार्ज ने अमेरिकन उपनिवेशों को क्रान्ति के लिये बाध्य
िया था। भारत मे जो क्रान्ति होगी उस के साथ कुल
शिया तथा समस्त संसार के समझदार स्वतन्त्रता
्रेमियों की सहानुभूति होगी। उस क्रान्ति का दबाना
सम्भव न होगा उसके फल स्वरूप भारत स्वतन्त्र
वाधीन और महान् राष्ट्र बनेगा जो ब्रिटेन से बिल्कुल
ी स्वतन्त्र होगा।

अंग्रेज सरकार न औपनिवेशिक स्वराज्य देने की बात

स्वीकार की है औपनिवेशिक स्वराज्य ही इस समय लिबरल फिडरेशन के माँगों की चरम-सीमा है। गत वर्ष यही भारत ने माँगा भी था जिस के विषय में सरकार। कोई निश्चित वचन देने को तैयार नहीं। पर यह औपनिवेशिक स्वराज्य क्या है। इस पर देश भक्त राजा महेन्द्र प्रताप की राय सुनिये।

मैं उपनिवेश शब्द से ही घृणा करता हूँ। स्वयं शब्द उतना बुरा नहीं है। कई परिस्थितियों में यह एक स्वाभाविक दशा का ज्ञान कराता है। किन्तु, उपनिवेशों के सम्बन्ध में विचार करते समय अत्याचारी जातियों तथा राष्ट्रों के याद आते ही 'उपनिवेश' शब्द से ही हम चौंक उठते हैं। जब तक वे अत्याचारी केवल बोलने के लिये ही नहीं किन्तु उपनिवेशों के सम्बन्ध में कतिपय अभिमान भी रखते हैं, इस असुखकर विचार को बिल्कुल ही नहीं त्याग सकते। उदाहरण के लिये व्यक्तिगत अपराधों में हत्या से बुरा नहीं है, पर जब तक यह होती रहेगी, हम इसको बात करने से बाज नहीं आ सकते।

—फिर, क्या उपनिवेश स्थापित करना किसी दल विशेष की सामाजिक हत्या तो नहीं है। मैं तो ऐसा नहीं समझता जिस तरह आजकल उपनिवेश स्थापन किया जाता है वा

ीक उसी तरह है जैसा समाज की असंगठित अवस्था में
कसी के साथ जबरदस्ती विवाह कर लेते या विवाहिता स्त्री
ो ही छीन लेनेके लिये उसके पति की हत्या तक कर डालते
। मेरी तो यही धारणा है कि यह भी दल विशेष की स्वा
ार्थिक बुद्धि का द्योतक है जब यह भी उस व्यक्ति के समान
िसी खास अवस्था के प्राप्त होने पर अपना सहयोगी ढूंढने
गता है। किसी दल का दल समूह के ऊपर आधिपत्य जमाना
सा ही है जैसा कई दास बालिकाओं के ऊपर किसी व्यक्ति
वशेष का प्रभुत्व जमाना। मैं तो यह मानता हूँ कि हमारे
ानिय समाज का वर्तमान दल अपने कार्यों में व्यक्तियों से
हीं अधिक अत्याचारी है और यदि वास्तव में देखा जाय तो
ेसा कोई भी लिखित या अलिखित कानून नहीं है जिससे
ल की मनोवृति या उसकी कार्रवाईयों को ठीक रास्ते पर
ाया जा सके। यही कारण है कि हमें ऐसी अनेक घटनाओं
ा सामना करना पड़ रहा है जिनमें दलों ने ऐसे ऐसे अपराध
िये हैं कि यदि वे ही व्यक्तियों द्वारा हुए होते तो उन्हें
ण्डित होना पड़ता।

भारत के सीमान्त में रहने वाले एक स्वाधीन आदमी
े मुंह से मैंने एक बार सुना था कि उसके देश में न अदालत
ै न राजा और न कोई सभापति ही है। सभी अपने अपने
ाम्तों में रहते हैं और प्रत्येक स्वतन्त्र व्यक्ति अपने अपने क्षेत्र

का सरदार है। वहाँ भी ऐसे मामले हुए हैं कि मौरस तथा थोड़ी सी जमीन को नुकसानी पर बदला चुकाने के लिये एक दूसरे की जान लेने तक को तैयार बैठे रहते थे। मुझे उनके जीवन पर विस्मय हुआ। पर क्या हमारा वर्तमान समाज उससे भिन्न जीवन व्यतीत करता है? क्या आज राष्ट्र बदला लेने के लिये वर्षों तक तैयार नहीं बैठे रहते? क्या राष्ट्र के समूह आज अपने नफे के लिये दूसरों को धक्के देते? वर्तमान संसार तो हमारा ऐसा है और इसे ही हम सभ्य कहते हैं? जनताने इस तरह की उपनिवेश स्थापना, युद्ध एवं क्रांति की बातें नहीं समझी हैं। वे एक दूसरे से डरते रहते तथा ऐसी बातों के लिए आँख मूंद कर दौड़ते हैं जिनका कुछ भी अर्थ नहीं समझते। इतने पर भी हमें यह घमण्ड है कि हम सभ्य हैं।

अब जब भारत स्वाधीन होने आ रहा है तो उस देश में उत्पन्न हुए मनुष्यों की हैसियत से हमारा यह कर्तव्य हो गया है कि मानव समाज को इन बातों को ठीक से समझ दें। यदि सारा संसार एक ऊंचे चट्टान की ओर जा रहा हो तो कोई कारण नहीं है कि हम भी उनका ही पीछा करें। यदि दूसरे सभ्यता की डींग हांकते हुए भी जंगलीपन का व्यवहार करें तो कोई कारण नहीं है कि हम भी उन्हीं के जैसा करलें।

हम मनुष्यों के लिये मानव संसार चाहते हैं । हम ऐसा
ानव समाज चाहते हैं जिस का हृदय मानवायता का अनुभव
र । हम चाहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति उच्चतम मानव आदर्शों के
ाकाश की चेष्टा करे । हमारी धारणा है कि प्रत्येक मानव
समाज को सत्य आदेशों के लिये चेष्टा करनी चाहिये । व्यक्तियों
था समाजों को चाहिये कि वे मिल कर मानव समाज के
त्याचारों को प्रकाश में लाने की चेष्टा करें ।

इधर जिस ढंग से आज उपनिवेश स्थापन हो रहा है हमारे
र्तमान संसार के दल समूह के लिये सब से अमानुषिक है ।
आज कल उपनिवेशों का स्थापन क्या हो रहा है राष्ट्रों की
त्या करने पर देशों को लूटने का साधन निकल आया है ।
मारे मानव समाज के सब से बुरे युग के सब से निकृष्ट
ालियों के शायद यह संशोधित ढंग हैं ।

उच्च संस्कृति वाली जातियों ने कभी इस ढंग से काम नहीं
लाया था । आज से हजारों वर्ष पूर्व के आदर्श नरपति राम ने
ीता को छुड़ाने के लिये लंका का विजय किया पर विजय के
ाड़ी ही देर बाद उन्होंने फिर उस देश को वहीं के निवा
सियों को सुपुर्द कर दिया ।

अत्यन्त निकृष्ट बुरी आत्माओं ने मनुष्यता की कुछ भी
परवा न करते हुए इंगलैंड से आकर इस अफ्रीका पर

अधिकार जमा लिया है । वे उस देश की आदिम जनता पर अत्याचार कर रहे हैं । वे भारतीयों के साथ भी दुर्व्यवहार करते हैं जो वहाँ रोटी कमाने गये हैं । जिस तरह लंका से सीता को मुक्ति की गई उसी तरह हमें भी ईष्ट अफ्रीका के अपने भाइयों को मुक्त करना अपना आवश्यक कर्तव्य चाहिये । और वहा का शासन उस देश के निवासी भाइयों के हाथों सौंप देना चाहिये । आज की उपनिवेश विरोधी नीति स्वाधीन भारत की औपनिवेशिक नीति होनी चाहिये । फिर भी कई तरह के उपनिवेश स्थापन को हम स्वाभाविक मानते हैं। मैं यह मानवोचित नहीं समझता, दल के दल दूसरे देशों में जाकर वहाँ के वास्तविक अधिकारियों को वहाँ से अधिकार च्युत कर दें । और स्वयं उन के स्थान में हो जायें यह तो वैसा ही हुआ जैसा चूहे के बिलों में सांपों के घुसने से होता है। यदि जन संख्या की अधिकता के कारण हमें दूसरे देशों को ही जाना पड़े तो वैसा देश ढूंढना चाहिये जिस में पहले का कोई निवासी न हो, और वहीं जाकर अपना घर बनाना चाहिये । यदि किसी बसे हुए देश में ही जाने को बाध्य होना पड़े तो मैं समझता हूँ कि हमें उस देश के निवासियों के साथ बिलकुल मिल जाना चाहिये । मैं इसे एक अपराध समझता हूँ कि किसी राष्ट्र को उलटने के लिये दूसरी जातियाँ वहाँ जांय । मैं तो यहाँ तक कहता हूँ कि भविष्य में

ा भारतीय अफ्रीका जाय वे वहाँ के निवासी से ही विवाह ८ से मैं तो एक ऐसे कानून बनाने की भी सलाह देता हूँ : कुटुम्ब वाला कोई व्यक्ति दूसरे देशों को न भेजा जाय। वल मात्र अविवाहित या विधुर ही वहाँ जाँय और यदि वे वाह करें तो उन्हें उसी देश की निवासो स्त्री से करना पड़े। इस बात का भी कट्टर पक्षपाती हूँ कि हमारे बालक, धुर, बालिकाएं एवं विधवाएं अफ्रीका लाखों की संख्या जायें और वहाँ के हबशियों से विवाह सम्बन्ध करलें। ही स्वभाविक मानवोचित कार्य होगा। यदि हमें इस में फलता मिल गई तो वर्तमान अत्याचारी ढंगों के दूर करने ा हमें विजय सेहरा मिलेगा। ऐ स्वाधीन भारत के नागरिक इयो! जागो और पूर्वजों के समान अपने कर्तव्य को करो। न्हें जीवन के प्रत्येक पग में मानव भाव लाने हैं। इस उप-वेश स्थापन की नीति में तुम्हारे मानुषिक हाथों की आव श्यकता है। जहां तुम अभी नहीं प्रेम और न्याय के भाव न्हें लाने हैं। तुम्हें अपने सुन्दर आदर्शों से अन्यों का दृत्य करना है।

यह निश्चय है भीतरी और बाहरी बाधाओं के होते हुए ी भारत की स्वाधीनता का कार्य खूब बढ़े। कारण कि जो वतंत्रता लेने का संकल्प कर चुके हैं उन्हें वह निराश नहीं करती । १६२७ की मद्रास कांग्रेस ने भारत की पूर्ण "स्वाधीनता"

मिश्र की स्वाधीनता के समर्थन और चीनकी राष्ट्रीयता के समर्थन के प्रस्ताव पास किये थे। साम्राज्यवाद को कोई सहायता न देने तथा अन्य राष्ट्रों के साथ भारत का अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करने के प्रस्ताव भी पास किये थे। यदि इन प्रस्तावों की तुलना सन १९०७ की काँग्रेस द्वारा पास किये हुए प्रस्तावों के साथ का जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि भारतवर्ष मजबूत पौधा हो गया है। सन १९२७ की मद्रास कांग्रेस की सब से आशा जनक बात यह थी कि भारत के बहुत से राष्ट्रवादियों ने (जिन में काँग्रेस के सदस्य तथा अन्य दलों के लोग भी थे) अपना एक प्रजातंत्रवादी संघ बनाया था कांग्रेस के अवसर पर उन्हों ने अपनी भारतीय प्रजातंत्रवादी महासभाका अधिवेशन किया और उसमें कई उन्नति मूलक प्रस्ताव पास किये। मद्रास की यह काँग्रेस भारत के स्वाधीनता संग्राम में नवयुगका आरम्भ करने वाली हुई था। स्वतंत्रता के लक्ष्यको पाने के लिये आगे बढ़ने के लिये लालायित सच्चे और आदर्श के पक्के नौजवानों के नेतृत्व का युग आरम्भ हुआ, यह उल्लेखनीय है।

तब कुछ पुराने भारतीय नेता और महात्मा गान्धी तक भी पं० जवाहर लाल नेहरू, श्री सुभासचन्द्र बोस आदि अन्य नेताओं की ढिठाई से विचलित होगये थे वास्तव में इन्हों ने स्वतंत्रता के प्रस्ताव के प्रति अपनी नापसन्दगी जाहिर करते

हुए कहा था कि "इस से ब्रिटिश साम्राज्य के साथ भारत के सम्बन्ध में नुक्सान पहुँचेगा । और इस समय भारत वासियों में स्वाधीनता लेनेकी शक्ति भी नहीं है।" पं० जवाहर लाल नेहरू प्रभृति ने उनकी बातों का जो जवाब दिया था वह अब पुरानी बात नहीं है । जो नेता भारत का लक्ष्य ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर औपनिवेशिक स्वराज्य समझते हैं वे दक्षिण अफ्रिका के संघ के प्रधान मंत्री जनरल हर्टजा । द्वारा जनसभा में दिये हुए भाषण पर ध्यान दें जिस में उन्हों ने कहा था कि "दक्षिण अफ्रिका या और कोई उपनिवेश पूर्णतया स्वाधीन होकर ही ब्रिटिश साम्राज्य से सहयोग करने को तैयार होगा । यदि वे (ब्रिटिश सरकार) साम्राज्य का वास्तव में साम्राज्य सरकार होना चाहते हैं तो सब से पहले तो साम्राज्य के सब देशों के स्वतंत्र लोगों का सहयोग होना चाहिये यह सहयोग केवल स्वाधीनता के ही आधार पर मिल सकता है।"

२० मार्च के "स्काटसमेन" (एडिनबरा) पत्र ने लिखा है ' यह बिलकुल स्पष्ट है कि औपनिवेशिक स्वराज्य का अर्थ पूर्ण स्वतंत्रता है। अपने भीतरी मामलों में पूर्ण शासन होना राष्ट्रीय रक्षा में पूर्ण अधिकार होना और उपनिवेश का विदेशों के साथ सम्बन्ध रखने में उपनिवेश के प्रधिवासियों को अपने चुने हुए प्रतिनिधि द्वारा सम्बन्ध रखने का पूरा

अधिकार होना है। उपनिवेशों को इच्छा होने
सरकार से अलग होने का पूर्ण अधिकार है।
स्वतंत्रता है।"

पचीस वर्ष पूर्व तक जनरल हर्ट जोग के आदमी '
ग्रेट ब्रिटेन द्वारा विजित पराधीन लोग थे आज वे
और स्वाधीन हैं। यह स्वतंत्रता उन्हों ने केवल विध
उपासना से नहीं पायी बल्कि स्वतंत्रता के लक्ष्य को पा
वास्ते कई उद्योग कर के प्राप्त की। अपने अधिकार द्व
शक्ति बढ़ाने के लिये उन्हों ने अंग्रेजों से सहयोग
राष्ट्रीय रक्षा में अधिक भाग पाने के लिये अंग्रेजों
लड़ाई की। उन्हों ने अपने हकों को छोड़ने से इनकार।
और स्वाधीनता पाने के लिये ब्रिटिश अधिकारियों की
हेलना की। 'बोर' लोग अपने हकों के लिये अंग्रेजों के
व्यवस्था परिषद् में, एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में लड़े
में। अपने देश को शिक्षित करते हुए वे बिना किसी
पूर्ण सर्वथा अनियन्त्रित स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ रहे
भारतीय राष्ट्रवादियों को, जो बहुत आगे बढ़े हुए प्रजात
वादी होने की बात करते हैं। यह बात जानने योग्य
कि ब्रिटिश सरकार अंग्रेज जनता को भारत
ब्रिटेन के लोकमत की अपेक्षा राष्ट्र संघ का ज्यादा

और इसी लिये सभा में 'भारतीय प्रतिनिधि न भेजे' जाये इसकी चेष्टा ब्रिटिश गवर्नमेंट ने की थी।

यह राष्ट्र सभा क्या बला है इसे यूरोप के प्रसिद्ध आदर्श वादी लेखक बर्नार्डशा के शब्दों में सुनिये—

"हमारे राजनीतिज्ञ, प्रेसिडण्ट विल्सन को आदर्शवाद की ओट में पदानुसरण कर वास्तव में स्वयं आदर्शवाद को ही बदनाम कर रहे हैं। क्या तुम यह समझते हो कि इन निरस्त्रीकरण कानफ्रेन्सों से कभी भी मानव समाज की भलाई हो सकती है? मैं तो कहता हूँ हरगिज़ नहीं। यह तो एक निरा अभिनय है जो धूर्त अपने स्वार्थों के लिये कर रहे हैं। यह उनकी धूर्तता का एक ढोंग मात्र है।

इससे यह कभी न समझो कि वास्तविक निरस्त्रीकरण का मार्ग कभी भी परिष्कृत होगा। क्योंकि वास्तविक निरस्त्रीकरण एकदम असम्भव है। जब जब तुम निरस्त्रीकरण का निश्चय करोगे तुम्हारा शस्त्रबल अधिक व्यापक होगा। यदि चाहे तो भी राष्ट्र वास्तव में कभी भी निरस्त्र नहीं हो सकते यही कारण है कि राष्ट्र निरस्त्रीकरण कानफ्रेन्सों के लिये इतने उत्सुक हैं। शस्त्रीकरण तो कभी पूर्ण होता ही नहीं। कोई भी राष्ट्र वास्तव में युद्ध के लिये कभी भी तैयार नहीं कहा जा सकता। बेचारा जर्मनी तो कभी तैयार ही न था,

इ गलैंड भी पूर्णतया नहीं तैयार था जो हर-साल अमेरिका से कहीं अधिक व्यय अपनी स्थल और जल-सेनाओं में किया करता है। यही हालत फ्रांस की भी है। पर शस्त्र और सेनाओं की आवश्यकता पड़ने पर जल्दी में स गठन किया जा सकता है। इ गलैंड की सेनायें नहीं थीं और न अमेरीका की थी, पर धामों धा ने रातों ही रात इसकी तैयारी करली। तलवार बन्दूकों के अभाव में लाठियों से ही लड़े। अतः लड़ने के लिये सभी कोई हर समय तैयार किया जा सकता है और गोला एवं अन्य साधन तैयार किये जा सकते हैं।

## स्वय राजा ही निपट लें।

वास्तव में यही सबसे अच्छा होता कि हम नंगे हाथों लड़ लेते। उससे भी अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण यह बात होती कि स्वय राजा और शासक ही परस्पर मुक्केबाजी कर इसका निबटारा कर लेते। इससे भी अन्तिम परिणाम में कोई भेद नहीं होता और असंख्य बहुमूल्य जानें बच जातीं। यह कैसर ही था रूजवेल्ट ने तो नहीं कहा था, कि मनुष्य तब तक लड़ा करेंगे जब तक परमात्मा मनुष्यों के बदले पशु या सर्व श्रेष्ठ देवदूत नहीं पैदा करेगा। अभी ऐसी भी कई बातें हैं जो अब तक प्रकाशित नहीं की गई। उनमें एक तो उस समय की है जब उन दिनों का बड़ा परशार्म। के बाद अमेरिकना ने अपना सनाओं को अपने अधिकार में कर पाया था। इतने में हा अमेरिकनों को तो यह भी नहीं मालूम है कि पेरिस के आधीन अमेरिकन सेनायें ऐसा थीं कि यदि शत्रु सामने से हट न जाते तो सारा अमेरिकन समाओं को जर्मनी अपने अधिकार में कर लेता, और, ये बातें तो समय आने पर स्वय ही प्रकाश में आजायेंगी। पर अब जो यह सांसारिक युद्ध होगा वह अत्यन्त विवेक रहित होगा जैसा अब तक नहीं लड़ा गया है। सभी अपने अपने मन्तव्य लिये रहे हैं। जो कोई जितना जानता है वह उतना लिख रहा है। यह साधारण अविवेक का युद्ध है।

पर केंद्री अभी जोश में ही है और सच्ची बात खुल रही है।
आश्चर्य की बात है कि सभी बातों की जानकारी होने में दो
तीन सौ वर्ष लग जाते हैं। पर सत्य का भूत तो आज सिर
पर चढ़ कर बोल रहा है। जितनी जल्दी लोग कह देते हैं।
उतनी जल्दी यदि करने लग जायें तो शीघ्र ही हम लोग रूस
और अमेरिका दोनों ही में आश्चर्य जनक परिवर्तन देखेंगे।
पर क्या इस संसार व्यापी युद्ध जनित परिवर्तनों से संसार
सुखी होगा? मुझे तो इसमें सन्देह है। एक साम्यवादी की
हैसियत से साम्राज्यों के पतन का मैं स्वागत करता हूँ, पर
इसे भी स्वीकार करता हूँ कि, आजका जीवन १९१४ के
जीवन से कहीं दुःखकर हो रहा है। लैंस डाउन ने ठीक ही कहा
था। वह उस समय को जानता था जब हम संसार की खून
ख़राबी का अन्त कर सकते। पर उनके मरने के बाद उनकी
बातों का किसी ने जिक्र तक नहीं किया। केन्द्रीय शक्तियों के
नाश से न तो संसार को ही कुछ लाभ हो सका और न ग्रेट
ब्रिटेन को ही। यदि हम लोग लैंसडाउन की शर्तों पर ही सन्धि
कर लिये होते तो हम भी असीम शक्तिशाली हो गये होते
लार्ड सिसल के उद्योग तो सभ्यता एवं इंगलैंड के विरुद्ध
भीषण अपराध थे।

यह पूछने पर कि "क्या आप समझते हैं कि जर्मनी में
प्रजातन्त्र की सुदृढ़ स्थापना हो गयी उन्होंने कहा कि "अभी

कुछ ही वर्षों पहले जर्मनी का कोई भी प्रतिष्ठित व्यक्ति यह स्वीकार नहीं करता था कि यह एक प्रजातन्त्री है। हिण्डबर्ग के अधिकार ग्रहण करने के बाद हो उसका महत्व बढ़ा है। साथ ही कैसर विलियम की भी मेरे हृदय में इज्जत मौजूद है।

कैसर के प्रति लुडविग के कथ का हवाला देते हुए मि० शा ने कहा कि ईश्वर ही हमें मित्रों से बचाये। मित्र प्रशसक सभी सफल व्यक्तियों को पागल बना देते हैं। प्रत्येक राजा और कैसर पागल ही तो हैं?

क्या आप भी पागल हैं?

"अवश्य"।

आप कैसे पागल हुए?

"अपनी साहित्यक महत्ता के कारण" शाह ने नम्रता-पूर्वक कहा?

"आपके सम्बन्ध में मैं और भी जानता हूँ" मैंने कहा— मैं कैसर को भी व्यक्तिगत रूप से जानता हूं। अभी तो हाल में ही डूर्न से लौटा हूँ। कई राजा एवं रानियों से भेंट भी की है जिस में भूतपूर्व कैसर की स्त्री एम्मेज हर्मिन भी है। आपके सम्बन्ध में तो एक रानी ने मुझ से कहा था कि जीवितों में उनकी योग्यता का तो कोई है ही नहीं। मरे हुओं में भी इने गिने ही हैं।"

"बड़ी ख़ुशी की बात है" शाह ने कहा "कि उस राज-महिषी ने मेरी स्थिति का ठीक ठीक अनुभव कर लिया है। मालूम पड़ता है राजकुल की बुद्धि भी बढ़ रही है।"

"क्या इंगलैण्ड की भी" मैंने निर्दोष भाव से पूछा।

"अंग्रेजी घरानों में" शाह ने जवाब दिया "मेरी किताबें नहीं पढ़ी जातीं।

फिर कैसर विलियम का जिक्र करते हुए मि० शा ने पूछा— "वे फिर गद्दी पर आने की आशा रखते हैं?"

"क्या गद्दी से उतारे हुए सम्राट्" मैं ने जवाब दिया "फिर वापिस आने की आशा नहीं रख सकते?"

"मुझे सन्देह है" मि० शाह ने जवाब दिया "कैसर विधानिक सम्राट होकर फिर आना चाहेंगे। वे अपने शत्रुओं का नाश करने के लिये विजेता बन कर शायद फिर आने की इच्छा कर सकते हैं। पर स्ट्रेसमन से मिलने के लिये नहीं। यदि कैसर की स्थिति में मैं होता तो निश्चय ही ऐसा करता। साम्राज्य के उत्तरदायित्व से, मुक्त होने से बढ़कर और उनके लिये खुशी की क्या बात हो सकती है।"

"क्रिमेटीका हो सकता है, पर लायड जार्ज का क्यों ?" मि० शाने जवाब दिया। 'लायड तो निरा अभिनेता के सिवा कुछ नहीं है। आथेलो बनने के लिये यदि आज वह मुंह में कालीं लगा सकता है तो वही कल हैमलेट बनने के लिये मुंह में सफेदी भी पोत सकता है। अवसर आने पर वह सम्राट भक्त भी बन सकता है। उसकी ऐतिहासिक योग्यता आश्चर्यजनक है।

केवल प्रजातन्त्रवादी दल बनाने और इसके अधिवेशन कर लेने से भारत की स्वतन्त्रता पाने में कोई अग्रगति न होगी। उनका काम करना होगा यदि इसके लिये उनको कष्ट सहन पड़े तो सदा तैयार रहना होगा। उन्हें यह सदा ध्यान में रखना होगा कि इन २० वर्ष में बहुत से भारतीय देश भक्त फाँसी पर लटक चुके हैं, बहुत से घुल २ कर एकान्तवास में मर चुके या मर रहे हैं, बहुत से मज़ूर कैद हैं, बहुत से देश निकाले में अज्ञातवास कर भीषण यन्त्रणायें भोग रहे हैं। तथा बहुतों की जायदादें ज़ब्त हो चुकीं और हज़ारों कैद भोग चुके हैं। यह सब कष्ट स्वतन्त्रता के आदर्श को पाने के वास्ते झेले गये हैं। दमन एवं अत्याचार सहते हुए भी यह कार्य जारी रहा, इसी से भारतीय राष्ट्र जागृत हुआ है और इसी से आज भारतमें प्रजा तन्त्रवादी हैं जो यह कह सकते हैं कि राष्ट्रीय कांग्रेस को भारतीय स्वतन्त्रता का प्रोग्राम ध्येय की भांति स्वीकार करना चाहिये।

"बड़ी खुशी की बात है" शाह ने कहा "कि उस राज-महिषी ने मेरी स्थिति का ठीक ठीक अनुभव कर लिया है। मालूम पड़ता है राजकुल की बुद्धि भी बढ़ रही है।"

"क्या इंगलैण्ड की भी" मैंने निर्दोष भाव से पूछा।

"अंग्रेजी घरानों में" शाह ने जवाब दिया "मेरी किताबें नहीं पढ़ी जातीं।

फिर कैसर विलियम का जिक्र करते हुए मि० शा ने पूछा—"वे फिर गद्दी पर आने की आशा रखते हैं?"

"क्या गद्दी से उतारे हुए सम्राट्" मैं ने जवाब दिया "फिर वापिस आने की आशा नहीं रख सकते?"

"मुझे सन्देह है" मि० शाहने जवाब दिया "कैसर विधानिक सम्राट होकर फिर आना चाहेंगे। वे अपने शत्रुओं का नाश करने के लिये विजेता बन कर शायद फिर आने की इच्छा कर सकते हैं। पर स्ट्रेसमन से मिलने के लिये नहीं। यदि कैसर की स्थिति में मैं होता तो निश्चय ही ऐसा करता। साम्राज्य के उत्तरदायित्व से, मुक्त होने से बढ़कर और उनके लिये खुशी की क्या बात हो सकती है।"

शायद क्लिमेंशों या लायड जार्ज का अन्त करने की नियत से तो उनको ऐसी इच्छा न हुई हो" मैंने कहा।

प्रगतिशील जगत् को रण के रक्तमय जीवन से हटा कर केवल अर्थ युद्ध में लगने को विवश करेंगे।

तुर्किस्तान और रूस इन दो देशों की परिस्थिति पृथ्वी भर के देशों से विचित्र है। दोनों देश आधे योरोप और आधे एशिया में हैं परन्तु तुर्क मुसलमान संस्कृति के कारण योरोपियन राष्ट्र बन रहा था—इस के सिवा ये दोनों ही राष्ट्र शायद पृथ्वी भर में सब से अधिक देर तक स्वेच्छाचारी शासन के नीचे दबे पड़े रहे। परन्तु इस नवीन युग में दो बातें अभूतपूर्व एवं कल्पनातीत हुई हैं। एक तो तुर्क का योरोपियन-सभ्यता स्वीकार कर लेना, दूसरे रूस का एशियाई सभ्यता की ओर झुकना। दोनों ही बातें अनहोनी होने के कारण ऐसी प्रबल घटनायें हैं जो युग परिवर्तन के समय भी बहुत कम दीखी आती हैं। तुर्क स्वाभाविक रीति पर आधा योरोप और आधा एशिया में समान रूप से घुसा हुआ है। यह तुर्कों का दम था कि वह यूरोप में इतना घुस कर भी इतने दिन तक कट्टर मुसलमान बना रहा। जहाँ ईसाई मत ने समस्त पृथ्वी को और उन प्राचीन जातियों को जिन में एक तुर्क भी थी अनायास ही ईसाई बना लिया वहाँ तुर्क ने आश्चर्य जनक सफलता से सैंकड़ों जर्मन, फ्रेंच अंग्रेज़ और अन्य योरोपियन विशिष्ठ पुरुषों को इसलाम के नीचे खड़ा किया। केवल यही नहीं—यह समस्त इसलामी जगत का

के कारण पृथ्वी भर के विद्वानों के लिये कौतूहल-चमत्कार और रहस्य पूर्ण बना हुआ था परन्तु-जा अब जागृत होकर फिर अपना प्रबल संगठन करता और गर्वित योरोप और उन्नत अमेरिका के बराबर खड़ा होने का साहस करता है। उसके अब तक के उद्योग और चेष्टा को देख कर योरोप और अमेरिका भयभीत हो रहे हैं। और उस आसन्न विपत्ति से परित्राण के अर्थ से भयानक उपाय सोच रहे हैं।

चीन और भारतवर्ष ये दो महान और प्राचीन सभ्यता के शक्तिशाली देश एशिया की जान हैं—येही दोनों समस्त एशिया भर में सर्वाधिक संख्या सम्पन्न और सर्वाधिक निर्जीव हैं—परन्तु दोनों ही देश अब अद्भुत रीति से उत्थान पाने को अग्रसर हो रहे हैं, चीन की जन संख्या ४० करोड़ और भारत की ३२ करोड़ है, इस प्रकार ये दोनों देश मिलकर ७२ करोड़ मनुष्यों से भरपूर देश हैं। जिस दिन भी ये जागृत होंगे उस दिन ४ करोड़ प्रबल योद्धा स्थाई रीति से सदैव बनाई रख सकेंगे, जो समस्त आधुनिक युद्ध सज्जा से प्रथम दर्जे के शस्त्रास्त्रों और युद्ध सामग्रियों से सज्जित रखे रह सकेंगे। प्रकृति ने इन दोनों देशों को ऐसा नैसर्गिक बल प्रदान किया है—कि ये देश अपनी उर्वराभूमि, खनिज द्रव्यों की बहुतायत और महान अगस धन की बदौलत न एक स्थाई प्रचण्ड सेना ही रख सकेंगे—प्रत्युत एक प्रचण्ड पृथ्वी विजई सर्वशक्ति का केन्द्र होंगी। जो

है यह अब तक के पृथ्वी भर के राजनैतिक मरखरों के लिये पागल कर देने को काफी हैं। राजनीति यदि कहीं इन बुद्धि हुई है तो रूस के वर्तमान विप्लव ओघम को देख कर हुई। राष्ट्र का इस प्रकार जागरण साधारण नहीं। और यूरोप भर इसे भय की दृष्टि से देख रहा है। यदि आज साम्राज्य वाद को कहीं खतरा है तो रूस की इस जागृति से है। तुर्क को योरोप की संस्कृति में मिलने में बहुत कुछ सहायता वस्तु स्थिति ने की। जो योरोप के सहवास से पैदा होगई थी और जिसे बिकुल ठीक कमाल पाशा ने समझ लिया था।

परन्तु रूस का अपने को एशिया का मित्र कहना परम आवश्यक था। उसे योरोप के उस सत्तावाद को नष्ट करना है जिस ने पृथ्वी पर अन्धेर मचा रखा है और जो अपने अर्थवाद के नाम पर नीतिवाद की ज़रा भी परवाह नहीं करता। इस के सिवा उसे एशिया की कोट्यावधि प्रजा को उन्नत जागृत करना है। इस प्रकार जहां तुर्क ने आत्मोद्धार के लिये योरोप की सभ्यता का आश्रय लिया है—वहां रूसने एशिया के उद्धार के उदार संकल्प से अपने को एशिया का मित्र घोषित किया है। परन्तु निकट भविष्य में इस अद्भुत विप्रतियोगी सहयोग का यह फल होगा कि पृथ्वी पर से सत्ता के नष्ट होते ही योरोप और एशिया समान सहयोग में जुटेंगे। एवं अमेरिका दलित होगा। इसके कारण हम आगे पेश करेंगे।

धार्मिक खलीफ़ा, धर्म का नेता, गुरु और सर्वे सर्वा बना रहा। यह खिलाफत और कट्टरता किस जादू के जोर से गत दो वर्षों में तुर्क के जीवन से हटी और सर्वथा नष्ट भ्रष्ट कर दी गई इस की मिसाल इतिहास में ढूंढे नहीं मिल सकती अब केवल एक गम्भीर बात यह रह गई है-कि इस्लामी मत की कट्टर धार्मिकता और रूढ़ियाँ इस तरह छिन्न भिन्न करके और उस पर पूर्णतया योरोपियन सभ्यता का रंग चढ़ाने पर भी तुर्क अपने को मुसलिम राष्ट्र घोषित कर रहा है और यदि वह मुसलिम राष्ट्र ही बना रहा तो दिखाव में कितना भी योरोपियन क्यों न बन जाय-वह राजनीतिके नाते योरोप का कट्टर शत्रु और एशिया का मित्र ही बना रहेगा-इस में सन्देह नहीं।

अब रही रूस की बात। रूस का भालू जिन लोगों की जबान पर था वे अभी भारत में जीवित हैं-उस रूस के भाग ने जितनी आसानी से सफल क्रान्ति की है और न केवल प्रजातन्त्र किन्तु एक पूर्ण विकसित प्रजातंत्र जैसा कि प्राचीन रोमन और ग्रीस के उन्नत राजनीतिज्ञ एवं भारत के प्राचीन गणतंत्रो भी न कर सके थे स्थापित कर लिया है। यह यूरोपियन राष्ट्र होते हुये भी एशियाई स्वभाव का प्रकाण्ड आलसी और प्रसुप्त देश था। जो स्वेच्छाचारी राजा के नीचे किसी एशिया के देश की तरह ही सुप्त पड़ा था। परन्तु कुछ ही वर्षों में उसने जो स्वाधीनता की जागृत चेष्टा की

को गत ५० वर्षों से प्रति वर्ष लगभग १२ करोड़ रुपया दिया जाता रहा है।

इस समय व्यापार द्वारा सिर्फ इंगलैंड को भारत से ६० करोड़ रु० वार्षिक आय है। इस के सिवा अंग्रेज अधिकारियों और गोरी फौजों को वेतन स्वरूप जिनकी संख्या एक लाख के लगभग है ५० करोड़ रुपया प्रतिवर्ष मिलता रहता है।

ब्रिटिश गवर्नमेंट को भारत से वार्षिक आय सब मिलाकर लगभग पौने दो अरब रुपया है। इस प्रकार इंगलैंड को इस समय सब मिला कर भारतवर्ष से ३२७ करोड़ रु० वार्षिक आय है। सवा चार अरब रु० भारत पर जो कर्जा है—वह है ही—उपरोक्त २० अरब रु० इंगलैण्ड में जो पहुँच चुका उस का कोई खाता नहीं।

इंगलैण्ड की आबादी सवा चार करोड़ आदमियों की है। [illegible] देश को भारत से ३२७ करोड़ अर्थात् तीन अरब [illegible] करोड़ रुपया प्रतिवर्ष प्राप्त हो रहा है जिसके फल स्वरूप [illegible]गण्य और मगरूरों का देश ग्रेट ब्रिटेन बना हुआ है।

परन्तु भारत से इतनी बड़ी मोटी आमदनी ही केवल [illegible]ड को नहीं है। और भी बड़ी भारी सहायताएं प्राप्त हैं [illegible]से बड़ी सहायता तो भारतीय सैनिकों की है। जिनके बल [illegible]समे सम्पूर्ण भारत को ही जेर किया है और गत१०० वर्षों से [illegible]चीन, मिस्र, रूस, जर्मन, मेसोपोटामियां अरब और पृथ्वी

# सातवां अध्याय

## ब्रिटिश साम्राज्य में भारत का राजनैतिक और आर्थिक महत्व

पलासी युद्ध के बाद से बीसवीं शताब्दि के अन्त तक इंगलैंड में भारत वर्ष से २० हजार करोड़ अर्थात् २० अरब रुपया नकद (इकानोमिस्ट, पत्र के सम्पादक के लेखानुसार) पहुँच चुका है। जिस का स्थिर ब्याज ५) सैकड़े की दर से अब तक १० अरब रुपया होना चाहिये।

इस से प्रथम या इस के काल में कम्पनी के कर्मचारियों ने धूर्तता और भयानक अत्याचारों से जो बड़ी रकम यहां के राजाओं, नवाबों और रईसों से वसूल की हैं, तथा अब तक भेंट और रिश्वतों में मिलती रही है उस का कोई हिसाब नहीं पेश किया जा सकता। उसका अनुमान उस भयानक कर्ज के भार को सहन करने से लगाया जा सकता है जो भारत है-स्टिंग्स या क्लाइव पर्व कर्लकी इम्फे ने अपनी सफाई में इंगलैंड में खर्च किया था।

इसके सिवा भारत के नाम इंगलैंड का लगभग सवा सौ अरब रु० कर्जा है—जिस का सूद प्रति वर्ष भारत से इंगलैं

को गत ५० वर्षों से प्रति वर्ष लगभग १२ करोड़ रुपया लिया जाता रहा है।

इस समय व्यापार द्वारा सिर्फ इंगलैंड को भारत से ९० करोड़ रु० वार्षिक आय है। इस के सिवा अंग्रेज़ अधिकारियों और गोरी फ़ौजों को वेतन स्वरूप जिनकी संख्या एक लाख के लगभग है ५० करोड़ रुपया प्रतिवर्ष मिलता रहता है।

ब्रिटिश गवर्नमेंट को भारत से वार्षिक आय सब मिलाकर लगभग पौने दो अरब रुपया है। इस प्रकार इंगलैंड को इस समय सब मिला कर भारतवर्ष से ३७७ करोड़ रु० वार्षिक आय है। सवा चार अरब रु० भारत पर जो कर्ज़ा है—यह है ही—उपरोक्त २० अरब रु० इंगलैंड में जो पहुँच चुका उस का कोई लेखा नहीं।

इंगलैण्ड की आबादी सवा चार करोड़ ... इस तुच्छ देश को भारत से ३२७ करोड़ अर्थात् २७ करोड़ रुपया प्रतिवर्ष प्राप्त हो रहा है ... यह नगण्य और मज़दूरों का देश ग्रेट ब्रिटेन बना

परन्तु भारत से इतनी महा मोटी इंगलैंड को नहीं है। और भी बड़ी भारी ... सब से बड़ी सहायता जो भारतीय सैनिकों ... पर उसने खुद भारत को ही ... किया है और यह चीन, मिश्र, रूस, जर्मन, ...

भर की शक्तियों को करता रहा है तथा एशिया में अपना मज़बूत साम्राज्य स्थापित करने में मदद लेता रहा है, इस समय इंगलैंड के सैनिक विभाग में स्थाई साढ़े तीन लाख से अधिक भारतीय पुरुष हैं जो चुने हुए नवयुवक हैं और जिन्हें पेट भरने मात्र वेतन मिलता है। तथा जिन्हें आज्ञापालन के सिवा कोई कर्तव्य नहीं है और जो किसी आत्मीयता के भाव से नहीं—नमक हलाली के लिये चाहे जब बिना विचारे प्राण देने को बाध्य हैं।

इंगलैंड एक गन्दी जलवायु वाला छोटा द्वीप है। जहाँ सदा वर्षा कुहरा छाया रहता है। और इंगलैंड भारत वर्ष से सम्बन्ध होने के समय एक मैला और दरिद्र देश था। उस समय के इंगलैंड की दशा का वर्णन बर्किंघम नगर निवासी वर्नडिन्स-कालेज केरेक्टर मि० जोजेफ मेकेब अपनी 'विद्रुथय—पव्राउट से फ्यूचर एज्युकेशन, नामक पुस्तक में लिखते हैं—

"आज से १०० वर्ष प्रथम लण्डन की ६ लाख की जनसंख्या में ५० हज़ार वेश्या और कितनी ही खानगी व्यभिचारिणी स्त्रियां थीं। अब ६० लाख की आबादी में २० लाख वेश्यायें हैं। उस समय जुए का बड़ा प्रचार था। धनवानों के जुये के अड्डे थे। और प्रत्येक मुहल्ले के कोने पर जुआ हुआ करता था। प्रत्येक गली कूचे में चबूतरों पर शराब बेची जाती थी, उस समय शराब का लण्डन में ऐसा प्रचार था कि शराब वालों

के मालिक खुल्लम खुल्ला अपनी दूकान की खिड़कियों में नीचे लिखे ढंग का विज्ञापन लटका दिया करते थे —

साधारण शराब मूल्य एक पैन्स, बेहोश कर देने वाली शराब २ पैन्स, साफ सुथरी चटाई मुफ्त। अर्थात बेहोश होने पर लेटने के लिये चटाई के पैसे नहीं लिये जाते थे।

उस समय भारत के नगर कैसे थे। कासिम बाज़ार का वर्णन करती बार स्वर्गीय बाबू अक्षय सेन ने लिखा है। 'रात दिन मनुष्यों से भराभरी बंगाल की प्रधान वाणिज्य भागीरथी की गंगा एवम् जलंगी नाम की दो नदियों से परिवाष्ठित, उस समय का कासिम बाज़ार नगरी का यथार्थ गौरव आज कल्पना को भी परास्त करता है, दूर २ देशों के नाना वेशधारी असंख्य अंग्रेज़, फ्रान्सीसी, आर्मिनियन, व्यापारियों की आकाश स्पर्शी अट्टालिकाएं, भागीरथी के वक्षस्थल पर भासमान असंख्य जहाज़ स्थान २ पर बिक्री के माल के पहाड़ समान ढेर, नदी के तटों पर जगह २ माल के गुदाम, बहुल व्यापक देश में के कारखाने, देशी जुलाहों की चपड़ों को दूकानों के सामने भिन्न विभिन्न रंग के लटकते हुये रेशमी वस्त्र सर्वदा कासिम बाज़ार की अमूल पूर्व शोभा को बढ़ाते हैं। काम काजो लोगों का कलरव, दलों का तेज़ी से आना जाना, भिन्न २ देशीय विलास प्रिय लोगों के छुआर

परिच्छद, और वेश विलास, अर्थ लोलुप व्यापारियों की अर्थो पार्जनार्थ विविध चेष्टा एवं एक दूसरे के प्रति प्रवञ्चना मूलक व्यवहार मनुष्यों के मनकी घोर विषय शक्ति का परिचय देते थे।

रात्रि में नदी पार्श्वस्थ अट्टालिकाओं में जलती हुई दीपा वली दूर से देखने वालों को तारागण के समान दिखाई पड़ती थी। सन्ध्या होने पर अंग्रेज़ा छावनी में अंग्रेजी बाजे, पार्श्वती ग्रामों में बसने वाले जुलाहों और अन्य वैष्णवों के घरों की नद्दी और करताल ध्वनि, भागीरथी के कल कल शब्द के साथ मिल कर एक अपूर्व सुमधुर संगीत से सर्व स्थान को परिपूर्ण करती थी। और श्रोतओं को मुग्ध करती थी।

यह महा नगरी कैसे विलुप्त हो गई—इसे स्वर्गीय सेन महाशय विषाद में पूर्ण होकर कहते हैं।

"यह मनोहर दृश्य सौ वर्ष पूर्ण होते जल्दी से विलोप हो गया? कुकार्य रत रमणी के यौवन की तरह, कासिम बाजार नगरी का गौरव थोड़े ही काल में नष्ट हो गया।

आज यह नगरी उजाड़ खण्डहरों का करुणा पूर्ण आवा शिष्ट है। इसी प्रकार मुर्शिदाबाद का वर्णन स्वयं नवाब ने किया है—

"यह नगर इतना बड़ा गुलज़ार और धनी है जितना कि लन्दन नगर है, भेद है तो इतना ही कि इस नगर में लन्दन नगर की अपेक्षा कितने ही अपार सम्पत्तिवान् बहुत अधिक हैं।"

किस जादू के बल से यह सारी समृद्धि आज लन्दन में पहुँच गई ? इस समय लन्दन की दशा क्या है सुनिये—

प्रधान लन्दन नगर की जन सख्या ६६ लाख है। शहर के बारह मील के व्यास में खाली ६० रेलवे स्टेशन हैं। रेल की तमाम लम्बाई २॥ सौ मील है, मकानों की सख्या नौ लाख से भी अधिक है। १॥ हज़ार से ऊपर वहां गिरजे हैं। ८ हजार शराब घर और १७ सौ चायघर हैं, जहाँ सल गन में साल में २० लाख क्वार्टर ( १८ सर के बराबर क्वार्टर ) गेहूँ, ५॥ लाख बैल, ४० लाख भेड़, बछड़े और सुअर ६० लाख मुर्गी मछली चौदह करोड़ बोतल शराब, बारह करोड़ बोतल अन्य नशे का पेय, तथा २० करोड़ बोतल डिब्बा खर्च हो जाती है। शहर में रोशनी का खर्च ५ अरब रुपये सालाना है। १ करोड़ बारह लाख टन ( एक टन २८ मन ) कोयला खर्च होता है।

धरती के नीचे ऊपर अधर और बीच में रेल दौड़ती हैं उनका हिसाब बड़ा टेढ़ा है। २ हज़ार से ऊपर बस, और कई हजार टेक्सी और अन्य गाड़ियाँ हैं जिनमें प्रत्येक की औसत

आय २५० रु० प्रति सप्ताह है । नगर पुलिस की संख्या १६ हजार है, ६० बड़े २ थियेटर, और ४०० से ऊपर संगीत भवन आदि हैं।

इतिहास में जिन प्राचीन ब्रिटेनों के विषय में लिखा है कि वे धरती में गढ़ा खोद कर गीदड़ों की तरह रहते थे, नंगे शरीर का कोयला मिट्टी आदि से रंगते थे, तथा मनुष्यों तक का शिकार करते थे। ये असभ्य पत्थरों से पशुओं को मार पीट लाते और आग पर भून कर खा जाते थे। यही उनका आहार था।

वे अंग्रेज़ किस जादू के ज़ोर से ऐसे महत्वशाली बन गये। पाठक समझ सकेंगे केवल भारत का रक्तपान करके। और भारत चूस हो गया। आज नहीं—तभी प्लासी की लड़ाई के बाद भारत हा हा कार करने लगा था, बंगाल की उस परिस्थिति का हाल—स्वर्गीय श्यामीचरण की कलम से सुनिये—

'घोर दुर्भिक्ष समुपस्थित है दुर्भिक्ष प्रपीड़ित नर नारियों से कलकत्ते का रास्ता परिपूर्ण है गंगा के उस पार सहस्त्रों सैंकड़ों नर नारी अन्न के लिये हा हा कार कर रहे हैं उस आर्तनाद को सुनकर मानो भगवती माता गंगा कल कल शब्द करके कह रही है—'हमारी गोद में तुम्हारे लिये श्मशान

तैयार है दुःख सन्ताप छोड़ । आज तुम्हारी सब यन्त्रणा और दुःख दूर हो जायेंगे । मैं तुम्हें अपनी गोद में स्थान दूंगी, अन्न बिना सहस्रों नर नारी मृत्यु का ग्रास बन चुके हैं । भगवती गंगा अपने तीव्र प्रवाह से बंग देश की अन्नाहार विवर्जित प्रजा के मृतवत शरीरों को गंगा सागर की ओर बहा के लिये जा रहा है । छाती से बच्चों को लगाये सैंकड़ों स्त्रियाँ गंगा पार अचेतन अवस्था में पड़ी हैं । किन्तु पापी प्राण अब भी शरीर का मोह छोड़ बाहर नहीं निकलते । आ मुर्दों को टाँग पकड़ गंगा की ओर उन्हें घसीट ले जाते और गंगा में उन्हें फेंक रहे हैं । वह देखो १०१५ आदमी हिताहित शून्य हो वृक्षों के पत्तों को खा रहे हैं । गंगा किनारे के वृक्षों पर नाम को पत्ते नहीं रह गये हैं ।

"कलकत्ता नगर के भीतर एक मुट्ठी नाज के लिये दुर्भिक्ष पीड़ित रमणी गोद में बालकों को बेचने के लिये इधर उधर घूम रही है इस ओर दुर्भिक्ष ने माता के हृदय को स्नेह शून्य कर दिया है । नर नारी पैशाचिक प्रवृत्ति के हो गये हैं ।

पाठकों के हृदय को हिलाने के लिये यह वर्णन काफी है । शेष में हमें इतना ही कहना है कि इस वर्ष इस अकाल में १ करोड़ बंगाली भूखों मर गये थे । परन्तु कलकत्ते के गवर्नर, कारटियर साहेब ने इस अकाल की सूचना कोर्ट आफ डाइ-

रेक्टर का देते हुए लिखा था 'चिन्ता न कीजिये अनावृष्टि के कारण धान की उपज अधिक न होने पर भी कम्पनी की माल गुज़ारी के रुपये वसूल होने में कोई विघ्न न उपस्थित होगा। और इस साल लगभग ५ करोड़ रुपया माल गुज़ारी इस मरती प्रजा से वसूल किये गये थे—जो इस समय १० वर्ष के भीतर वसूल हुये रुपयों में सब से अधिक थे।

पाठक इसी एक नमूने से समझ जायँगे कि इंग्लेण्ड के घर में जो यह अटूट सम्पदा गई है वह किस फसाले से गई है। रानी एलिज़ाबेथ के शासन के बाद तीन शताब्दियों में इंग्लेण्ड ने अपना साम्राज्य स्थापित किया है। यदि इंग्लेण्ड के साथ नई दुनिया का सम्बन्ध न हुआ होता, स्पेनके जहाज़ी बेड़े से यदि ड्रेक और हाकिन्स ने प्रबल टक्कर न ली होती, तो अंग्रेज़ों की इतनी बड़ी प्रबल जल सेना होना सम्भव न था। क्लैव ने वान ट्रोम्प और रुटियर के युद्ध न किये होते, दूसरे चार्ल्स को हालैण्ड से और क्रामवेल की स्पेन से लड़ाई न होती। भू सम्पत्ति के स्थान पर बड़ी २ व्यापारिक संस्थायें न स्थापित हुई होतीं तो रानी एन के शासन काल का प्रबल राष्ट्र इंग्लेण्ड बन नहीं सकता था। भारत का इंग्लेण्ड के हाथ लगना एक आकस्मिक आश्चर्य जनक घटना है, पर उसने इंग्लैण्ड को कितना जीवन दिया है, यह ऊपर बता चुके हैं। परन्तु यदि इंग्लेण्ड का भारत से तथा अन्य उपनिवेशों से

सम्बन्ध छूट जाय और वह शेक्सपियर के समय का, एक बड़े भारी जलाशय में एक हंस, के समान रह जाय तो क्या यह वर्तमान ग्रेट ब्रिटेन सहन कर सकेगा ? परन्तु यह घटना सम्भव नहीं है, यह बात तो सोची ही नहीं जा सकती। यहाँ राज नीति और इतिहास का मेल करना पड़ता है। इंग्लैण्ड ने अपने उपनिवेश खोये और नये बसाये या जीते भी हैं। महान् अमेरिका ज्यों ही उसके हाथ से गया—महान् भारत उसकी गोद में प्रारब्धवाद की तरह कूद पड़ा। परन्तु आज पृथ्वी के राष्ट्रों में जैसा भाव पैदा होगया है ब्रिटेन का भारत का खो कर फिर से कोई राष्ट्र बनाना सर्वथा दुरूह है।

ग्रेट ब्रिटेन के भारत को साम्राज्य में मिला लेने पर यदि पूर्व और पश्चिम में वह स्वाभाविक मेल हो गया होता जो उनके राजनैतिक स्वार्थों एवं आर्थिक समस्याओं को मित्र भाव से एक करता तो आशा होती कि यह ग्रेट ब्रिटेन का साम्राज्य अमेरिका के संयुक्त राज्यों जैसा एक प्रकार साम्राज्यान्तर्गत संघ बन जाता। परन्तु अंग्रेजों की स्वार्थ नीति और भूठी नगरूरी ने ऐसा न होने दिया। अब ऐसा प्रतीत होता है कि शताब्दि बाद ही हैस्टिंग्स और क्लाइव की यह अग्राह्य राजनैतिक चेष्टा नष्ट होने वाली है जैसे कि प्राचीन स्पेन का क्षण भंगुर व्यापार साम्राज्य गिर गया था।

समय सब का शिक्षक है पर इतिहास वह गुरु है जो पतन

होने से प्रथम ही उसका रहस्य खोल देता है। १६ वीं शताब्दि के अन्तिम भाग में इगलैण्ड ने साम्राज्य विस्तार की ओर कदम उठाया था । १७ वीं शताब्दि भर वह उसी मार्ग पर अनथक चलता रहा। १८ वीं शताब्दि में उसे जो महान पुरस्कार मिले। उसे जगत जानता है । दूसरे और तीसरे जार्ज का काल उस सामान का गुदाम है जिस से यह प्रबल साम्राज्य स्थापित हुआ है परन्तु यह साम्राज्य—क्या आकर पुष्ट हो रहा है तथा किस आधार पर जीवित है और उस का स्वभाव और गति क्या है । इस पर विचार करना है। ग्रेट ब्रिटेन के साम्राज्य के दो मुख्य विभाग हैं। एक भारत दूसरे अन्य उपनिवेश । और यह बात तो स्पष्ट है कि ब्रिटेन का साम्राज्य बहुत कुछ इन से पल रहा है । परन्तु इन के सिवा जिन देशों को प्रजा सत्तात्मक राज्य प्राप्त हैं उन के भीतरी जीवन का बहुत कुछ निर्भर अंग्रेजी साम्राज्य के ऊपर अवलम्बित है, यदि अमेरिका के संयुक्त राज्य से युद्ध छिड़े तो उसका प्रभाव कनेडा और रूस से छिड़े तो अफगानिस्तान तिब्बत और नैपाल पर पड़ेगा। यद्यपि इन पर साम्राज्य का दूर का ही प्रभाव है। परन्तु एक बड़ी कठिनाई जो शुरू से ब्रिटेन के सम्मुख है वह साम्राज्यान्तर्गत प्रत्येक देश को नैतिक ऐक्य में बद्ध करने की है। यह कठिनाई भारत में भी बढ़ जाती है, जो अनेक जातियों और समुदायों का मिश्र

हो रहा है, यह इंगलैण्ड जो एक हाथ से पृथ्वी भर के भविष्य भारतको दृढ़ता से पकड़ना चाहता है यह दूसरे हाथ से उस भारत को सदाके लिये पकड़ रखना चाहता है और अत्यन्त प्राचीनता की ओर अपनी तमाम शक्तियों से आरुढ़ है। उसके सामने यह प्रश्न है कि वह एशिया में स्वेच्छाचारी रहे और आस्ट्रेलिया में प्रजा सत्ता का समर्थक। पूर्व में मुस्लिम अन्ध विश्वासों और मन्दिरों का संरक्षक और पश्चिम में स्वायत्त शासन का प्रशंसक, ऐसी दशा में वह तभी सफल हो सकता है कि या तो वह पूरा सहिष्णु और दूरदर्शी—या परले दर्जे का धूर्त हो खेद है कि इंगलैंड में प्रथम के गुण नहीं।

भारत को अंग्रेजी साम्राज्य प्राप्त करना किसी भी तरह उचित नहीं, क्योंकि इंगलैंड ने कभी भी भारत में उपनिवेश स्थापित नहीं किया। वे वरजीनिया और न्यूइंगलैण्ड में उपनिवेश कायम करने ही गये थे। पर वे आज स्वतन्त्र प्रजा सत्तात्मक प्रबल राज्य है, पर भारत से तो वे व्यापार करने आये थे और अकस्मात ही उस महादेश को साम्राज्य की आधीनता में ले आये। लार्ड मेकाले ने एक बार कहा था—

'जो अंग्रेज़ इतिहास में रुचि रखते हैं उनमें से प्रत्येक यह जानने को उत्सुक होगा किस प्रकार मुट्ठी भर अंग्रेज़ों ने संसार के एक सब से बड़े साम्राज्य को कुछ ही वर्षों में अपने अधिकार में कर लिया। जब कि वे अपने घर से अति दूर थे।

योरोप इंग्लैंड फ्रान्स, जर्मनी, आस्ट्रिया, इटली, स्पेन और और ग्रीस इन सात प्रबल राज्यों का समूह है—और इन राज्यों की राजनैतिक सत्ता ने ही योरोप को समर्थ नाम दिया है, परन्तु भारतवर्ष तमाम योरोप के लगभग प्रमाण है—तथा जनसंख्या में रूस को छोड़कर योरोप भर से तथा अमेरिका से भी बढ़कर है, बंगाल का क्षेत्रफल फ्रान्स से कम है तो भी इसकी जन संख्या वास्तव में ७ करोड़ के लगभग है—युक्त प्रान्त का क्षेत्रफल ग्रेटब्रिटेन से कुछ ही कम किन्तु जन संख्या अधिक है। मद्रास अहाता आयर्लैण्ड सहित ग्रेटब्रिटेन के बराबर क्षेत्रफल में है जन संख्या भी कुछ ही कम है। पर इटली के बराबर जन संख्या रखता है। पञ्जाब की जन संख्या स्पेन से कुछ अधिक और बम्बई की ग्रेटब्रिटेन और आयर्लैण्ड से कुछ कम है। मध्यप्रदेश बेलजियम और हालैंड से कुछ बड़ा है। इसके सिवा और भी कुछ प्रदेश हैं, जिन पर अंग्रेजी सरकार का प्रत्यक्ष अधिकार है, देशी राज्य बर्मा और सीलोन इनसे पृथक हैं। यह योरोप के बराबर घना बसा हुआ, राजाओं, सेनाओं, व्यापारियों और नगरों से भरा हुआ देश कैसे ब्रिटेन का उपनिवेश बन सकता है, उसका ब्रिटेन साम्राज्य में औपनिवेशिक अधिकार अधिकार ही कैसे हो सकता है।

तब क्या भारतवर्ष ग्रेटब्रिटेन का करद या जीता हुआ

पेश है। इसका उत्तर सर जानसीली के इस भाषण से मिल जाता है—

"इङ्गलैण्ड ने वास्तविक अर्थ में भारत पर विजय प्राप्त नहीं की। बल्कि संयोग वश जो कुछ अंग्रेज मुगल साम्राज्य के पतन के समय भारत में रहते थे उनका भाग्य हैदर अली या रणजीत सिंह की भाँति चमका और वे वहाँ के अधिकारी बन बैठे।"

इस भारत को आधीन बनाये रखना कठिन है, इस प्रसंग पर सीली महाशय कहते हैं—

"इङ्गलैंड को जो वास्तव में सैनिक राज्य नहीं है—सैनिक शक्ति के बल पर २० करोड़ की जनता को वश में रखना पड़े तो कहना होगा यह भार हमारा नाश कर देगा।"

"यह एक गम्भीर सत्य है जो एक राजनीतिज्ञ अंग्रेज़ के मुख से निकल गया है। सरजान सीली का कहना है कि जिस समय हम अमेरिकन युद्ध में भारी अयोग्यता दिखाकर ३० लाख मनुष्यों के प्रदेश से हाथ धो बैठे-उसी समय हम क्या भारत में दुर्दमनीय विजेता बन सकते थे? जब विजय प्रारम्भ हुई, तब १ करोड़ बीस लाख से अधिक अंग्रेज़ न थे। विजय भी ऐसे समय हुई जब इङ्गलैण्ड युद्धों में फंसा था। क्लाइव जब प्लासी और दक्खिन में युद्ध कर रहा

था, तब अमेरीका में सातवर्ष का युद्ध चल रहा था और नेपोलियन से जब इंग्लैण्ड त्रस्त हो रहा था तब लार्ड वेलजली ने बहुत सी भूमि अंग्रेजी राज्य में मिलाई थी उस समय किसी भारी युद्ध के योग्य हम सेना संग्रह का दावा नहीं कर सकते थे। योरोप के युद्ध में हम बेड़े ही से प्राय लड़ते। और स्थल युद्ध की आवश्यकता होने पर किसी सैनिक मित्र राज्य को रकम देकर उसकी मदद लेते थे। कभी पशिया से कभी आस्ट्रिया से।

"इतना होने पर भी हम १० लाख वर्ग मील का लम्बा चौड़ा प्रदेश जीत तो गये, पर जब कि हम योरोप की लड़ाइयों में ऐसे कर्जदार होगये कि कभी ऋण न चुका सके वहां भारतीय लड़ाइयों ने हमारे ऊपर व्यय भार बिल्कुल नहीं डाला। तब यह धारणा कि इंग्लैण्ड ने सैनिक शक्ति से भारत पर विजय की-गलत है। यदि इंग्लैण्ड ने महान मुगल साम्राज्य को उसी तरह नष्ट करने का बीड़ा उठाया होता जैसे रोम ने यूराप को-तो उसे पूर्ण रूप से सैनिक राज्य बनाना पड़ता। पर सच्ची बात तो यह है कि इंग्लैण्ड केवल उस गद्दी का उत्तराधिकारी बना है जिस की स्थापना भारत में कुछ अंग्रेजों ने की थी जो अराजकता के समय अधिकार जमा बैठे थे।"

"अब यह प्रश्न है कि इग्लैण्ड यदि किसी तरह भारत

पर से अपना राजनैतिक प्रभुत्व त्याग भी सकता है पर आर्थिक प्रभुत्व नहीं त्याग सकता। हम इस अध्याय के प्रारम्भ में ही बता चुके हैं कि यह स्वार्थ साधारण नहीं है।

अंग्रेज़ों ने प्रारम्भ में कभी भारत पर राजनैतिक प्रभुत्व की बात भी न सोची थी, शुरु में फ्रेन्चों से सामना करने या कभी २ कोठियों की रक्षा करने को उन्हों ने शस्त्र बन्द दल बनाये थे, जो उस अराजक और लुटेरों से भरपूर वातावरण में स्वाभाविक था। परन्तु वारन हेस्टिंग्स के कार्यकाल के अन्तिम समय तक भी अंग्रेजों को प्रजा की कल्याण कामना की परवा न थी। यह अवस्था गदर तक रही। रेल तार की व्यवस्था के साथ व्यापार में सुविधायें हुई। व्यापार बहुत बढ़ गया और वह तेज़ी से बढ़ता ही जा रहा है। पन्द्रहवीं शताब्दि में पता लगाये हुये देशों के धन के लिये ही पश्चिमी राज्यों की प्रतिद्वन्दता भी है। अमेरिका और भारत में अंग्रेज़ों के व्यापारिक निवास स्थान थे और दोनों ही जगह फ्राँस उसका प्रतिद्वन्द्वी था। अमेरिका में जैसे इंग्लेन्ड का न्यू इंग्लैन्ड और वर्जीनिया फ्रांस क्यूबेको और कनाडा के विरुद्ध थी इसी प्रकार भारत में मद्रास, बम्बई, कलकत्ता, और बम्बई के मुकाबिले पांडी चेरी, चन्द्रनगर और माही कुछ स्थान थे। दोनों स्थानों में फ्राँस के साथ ही इंग्लेन्ड के युद्ध हुये। दोनों

स्थलों मे अंग्रेज ही जीते पर भारत में जीत कर उन्हों ने साम्राज्य ही स्थापित कर दिया। इस तरह वास्तव में अंग्रेजी साम्राज्यवाद आर्थिक स्वार्थों से परिपूर्ण है। अंग्रेज़ों ने समुद्र तट पर अपनी बस्तियाँ बनाने, उनकी देशी शक्तियाँ और पुर्त्तों से सुरक्षित होने पर अंग्रेज भीतर देश मे घुसे। मरहठा और मैसूर जैसे नये राज्यों ने अंग्रेजों के व्यापार को अस्वीकार कर दिया। फलतः जैसे बना अंग्रेज उन पर सेना ले दौड़े और उनके व्यापारिक स्थान नष्ट कर दिये और उन प्रदेशों को अपने सामानों से भर दिया। और अन्त मे जब कोई प्रतापी मुगल, सुलतान, पेशवा या नवाब महाराज न रहा तो उन्हों ने राज्य व्यवस्था को उलट दिया और सब रुकावट दूर कर व्यापार करने लगे।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी रानी एलिजाबेथ के शासन काल के अन्त मे आर्मेडा की हार के १२ वर्ष बाद बनी। वह व्यापार के लिये स्थापित हुई और १४८ वर्ष तक व्यापार करती रही। दक्षिण के उपद्रवों के बाद धीरे २ उसने शासन और युद्ध के काम भी हाथ मे लिये। उसके बाद ११० वर्ष तक जब ५७ का विद्रोह हुआ उसका अस्तित्व बना रहा। १८८५ मे पार्लिमेंट के एक्ट द्वारा उसका अन्त हुआ। चूकि यह नियम था कि पार्लिमेन्ट चार्टर निश्चित समय पर बदलते

रहते थे और उस समय पार्लिमेंट कम्पनी की स्थिति पर विचार करती रहती थी निदान सँगति में अन्तर आता रहता था। और उसका रूप बदलता रहता था। यह समय ८० वर्ष का था इस कम्पनी के इतिहास मे ५ सन् महत्व पूर्ण है। सन् १७७३। १७९३। १८१३। १८३३। १८५३ ई०। सन् १७७३ में ब्रिटिश भारत की रचना हुई। तभी से गवर्नर जनरलों का क्रम प्रारम्भ हुआ। यद्यपि कुछ काल तक ये भारत के नहीं बंगाल के गवर्नर कहलाये। सुप्रीम कोर्ट की भी कलकत्ते मे उसी समय स्थापना हुई।

१७९३ में जो चार्टर बदला गया। इस काल में पर्मानेन्ट ...मेन्ट या दमामी बन्दो बस्त की व्यवस्था हुई जा शायद ...स सार की राजनीति में असाधारण थो।

१८१३ में जब चार्टर बदल गया तब वारनहेस्टिंग ८० वर्ष ... बुढ़ा हो चुका था—उसी अवस्था में वह गवाही देने कामन ...मा में उपस्थित किया गया। भारत में इस समय हमारा ...ह हो रहा था और ईसाई सभ्यता और विज्ञान भारत में ...स रहा था।

सन् १८३० में हमारा नाता रहा। कम्पनी का प्रभुत्व नष्ट प्रायः हो गया। वह एक संगठन था जिसके द्वारा इगलैंड

भारत का शासन कर रहा था। उसी समय भारत सरकार का व्यवस्था सम्बन्धी कार्य प्रारम्भ हुआ।

८ सन् १८५३ में चुनाव पद्धति जारी हुई। और इंगलैंड का प्रभुत्व भारत पर दृढ़ हुआ। ५७ के विद्रोह के बाद क्रम बद्ध व्यवस्था अन्त होकर प्रबन्ध कर दिया गया और इस समय व्यापार खूब तेजी से विस्तृत हो गया। इसका कारण इजारे का दूर हो जाना था।

जिन अंग्रेज़ों ने भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की नींव डाली उनमें मुख्य है। क्लाइव, वेलेजली, हेस्टिंग्स, और डलहौसी। लार्ड क्लाइव ने पूर्वी तट पर मद्रास से कलकत्ते तक अंग्रेज़ी जड़ जमादी। वेलेज़ली और हेस्टिंग ने मरहटों की शक्ति का अन्त कर दिया और अंग्रेजी सत्ता को देश के मध्य भाग और प्रायः द्वीप के पीछे की ओर का मालिक बना दिया।

डलहौसी ने इन प्रान्तों को दृढ़ किया—एवं पश्चिमोत्तर प्रदेश अंग्रेजों को दिया। जिससे अंग्रेजी राज्य की सीमा हिन्दूकुश तक जा पहुँची।

भारत पर सब से प्रथम विदेशी सिकन्दर का आक्रमण हुआ था, जो ईसा से ३२ शताब्दि प्रथम हुआ, था उसके बाद १३६० तक ८ प्रबल आक्रमण भारत पर हुए। पर ये सब स्थल की

राह स अफगानिस्तान की राह से आये थे। वास्कोडीगामा ने समुद्रीय रास्ता खोल दिया। महमूद ने भारत का सम्बन्ध मध्य ऐशिया और पश्चिमी एशिया से किया था परन्तु वास्कोडिगामा ने इसाई योरप से सम्बन्ध स्थापित किया। परन्तु अन्य विजेताओं या तरह डिगामा विजेता नहीं-नाविक था। १६ वीं शताब्दि तक योरप को जिस नई दुनिया का पता चला उसका आधा एशियाई भाग पोर्चगीज़ों के हाथ था। पर उसी शताब्दि के अन्त में डचों ने सफलता प्राप्त की। १७ वीं शताब्दि में अंग्रेज़ डरत २ डचों के एकाधिपत्य पर हाथ मारते थे। परन्तु इसी शताब्दि के अन्त में फ्रेन्च और अंग्रेज स्पर्धा करके आगे बढ़े, फलतः १८ वीं शताब्दि इन दोनों राष्ट्रों क उस युद्ध से भरी है जो दोनों के प्राधान्य के निर्णय के लिये हुये। तुम समझ लेना है यह युद्ध राजनैतिक हैं व्यापारिक नहीं, और इसका मूल्य कम से कम भारत का सिंहासन है। उस समय भी अफ़गानिस्तान के आक्रमण जारी ही थे।

सन १७५८ में ब्रिटिश साम्राज्य स्थापित हुआ, और इसके १३ वर्ष बाद अहमद शाह अब्दाली का आक्रमण हुआ। इससे ९ वर्ष प्रथम नादिरशाह का आक्रमण हुआ था।

१८ वीं शताब्दि में अंग्रेजों को पंजाब की चिन्ता न थी। वे मद्रास में फ्रेन्चों की जड़ मूड़ से हटे चाहते थे। परन्तु

नैपोलियन की मिश्र पर चढ़ाई के बाद अंग्रजों के वैदेशिक सम्बन्ध का रूप ही बदल गया। और अफ़गानिस्तान पर अंग्रेजों की दृष्टि पहुँची और सर जान मेलकम को फारस मिशन लेकर भेजा गया। और फारस और अफ़गानिस्तान से सम्बन्ध स्थापित कर लिया। तिब्बत अफ़गानिस्तान और नैपाल के भी साथ इसी तरह सम्बन्ध स्थापित हुये। जिनका ज़िक्र हम आगे चल कर करेंगे। इस प्रकार वह तुच्छ ब्रिटेन का टापू आज ग्रेट ब्रिटेन भारत के धन पर बन गया है। और आर्थिक दृष्टि और राजनैतिक दृष्टि से समस्त यूरोप और एशिया की आँखों का काँटा बन रहा है।

---

# आठवां अध्याय

## भारत से बृटिश गवर्मेण्ट को आमदनी।

——:०——

स अध्याय में पाठकों को—जानकारी के लिये भारत ि सरकार को जो आमद होती है—एवं जो व्यय ती है उसका लगभग—अनुमान इस लिये पेश करते पाठक देखे कि भारत के भीतर क्या हो रहा है।

टिश गवर्मेन्ट को भारत वर्ष से आमदनी के नीचे रिये हैं।

-रेलवे, जंगल, राजकीय भूमि और खान से प्राप्त ी।

—रेलवे, नहर, डाकखाना, एक अधिकारी पदार्थों र तथा और औद्योगिक कार्यों से प्राप्त आमदनी।

—टैक्स (भूमि का और आय का (Income Tax) : मिलित हैं।

८—सामुद्रिक चुंगी, व्यावसायिक टैक्स, स्टाम्प तथा रजिस्ट्री वगैरा २। ब्रिटिश गवर्मेण्ट के आमद और खर्च का खाता इस प्रकार है —

| आमदनी के स्थान | १९१३-१४ | १९१८-१९ |
|---|---|---|
| भूमि से प्राप्त | ३२०८७३६२५ | ३३५३७५०० |
| अफीम | २७७२३१७० | ४७८७७०० |
| नमक | ५१६७९५७५ | ५२३८३००० |
| स्टाम्प | ७९७७४३९५ | ८८९२०००० |
| शराब से प्राप्त आय | १३३४१४५०० | १५५६०५५०० |
| सामुद्रिक चुंगी | ११३३७३३०० | १६०७१६००० |
| जलस्थान | ८२४४२४२५ | १५२७५८५०० |
| कुल | ८०५९३६११९० | ९९३६३७५०० |
| व्याज | २०२८१७८५ | ५३२८१००० |
| डाँक तथा तार | ५०९४७७८५ | ७७१४२००० |
| टकसाल | ५०९७४१५ | ५६४०००० |
| राजकोय आय ( जुर्माना आदि ) | २११२४२९० | २९३४१५०० |

| | | |
|---|---|---|
| क आय | २०५४४७८० | २९६६०५०० |
| | १२७८१०७६२५ | १६२१०००३५ |

## ब्रिटीश गवर्मेण्ट का व्यय

| के स्थान | १९१३-१४ | १९१८-१९ |
|---|---|---|
| कर एकत्रित करने में | १३६११८९५५ | १५६५७४५०० |
| | २२७३४७९५ | ११६७६४५०० |
| तथा तार | ४९०९४७६० | ५८९७२००० |
| ल | १९८९४५० | २५५०००० |
| गहें | २६६०१२९८५ | ३४४४९५००० |
| गधारण खर्च | ८१०५७०६० | ८४६७०५०० |
| तथा बीमा | १५०००००० | १५०००००० |
| | १९२५४१६०५ | २०६९३०००० |
| | ५२९७८००५ | ५८९३०५०० |
| र कार्य | १०५१५५७०० | ९९१८४००० |
| व्यय | ३१८९८६४७५ | ४५७९९०५०० |
| कुल व्यय | १२४७६६४५७० | १५९२२६०५०० |

 हिसाब के सम्बन्ध में दो बात सोचने के काबिल हैं।
निक खर्च और दूसरा राज्य का, जो कि शिर्ग्स साहब
सार इङ्गलैंड से सातगुना है। मालगुजारी और लगान
में जो धन लिया जा रहा है उस पर भी गौर करना
रत है और हम एक स्वतन्त्र अध्याय में इसकी चर्चा

४—सामुद्रिक चुंगी, व्यावसायिक टैक्स, स्टाम्प तथा रजिस्ट्री वगैरा २। ब्रिटिश गवर्मेंण्ट के आमद और खर्च का खाता इस प्रकार है —

| आमदनी के स्थान | १९१३-१४ | १९१८ १९ |
|---|---|---|
| भूमि से प्राप्त | ३२०८७३६२५ | ३३५३७७५०० |
| अफीम | २२७२३१७० | ४७८७७१० |
| नमक | ५१६७९५७५ | ५२३८३००० |
| स्टाम्प | ७९७७४३९५ | ८८९२०००० |
| शराब से प्राप्त आय | १३३४१४५०० | १५५६०५५०० |
| सामुद्रिक चुंगी | ११३३७३३०० | १६०७१६००० |
| जलस्थान | ८२४४२६२५ | १५२७५८५०० |
| कुल | ८०५९३६११० | ९९३६३७५०० |
| ब्याज | २०२८१७८५ | ५३२८१००० |
| डाँक तथा तार | ५०९४७७८५ | ७७१४२००० |
| टकसाल | ५०९७६१५ | ५६४०००० |
| राजकोष आय ( जुर्माना आदि ) | २११२४२९० | २९३४१५०० |
| साधारण आय | ११५८८६८५ | १९४२८००० |
| रेलवे | २६४३८४५१० | ३४४७५५५०० |
| नहर | ७०६९७३८५ | ७९८०६००० |
| राष्ट्रीय कार्य | ४५७९६०० | ४५७३५०० |

| | | |
|---|---|---|
| सैनिक आय | २०५४४७८० | २२६६०५०० |
| | १२७८१०७६२५ | १६२१०००३५ |

## ब्रिटीश गवर्मेंएट का व्यय

| यय के स्थान | १९१३-१४ | १९१८-१९ |
|---|---|---|
| राज्यकर एकत्रित करने में | १३९११८९५५ | १५६५७४५०० |
| पाल | २२७३४७९५ | ११६७६४५०० |
| कि तथा तार | ४९०६४७६० | ५८९७२००० |
| कसाल | १९८९४५० | २५५०००० |
| नखाहें | २६९०१२९८५ | ३४४८८९५००० |
| न्यसाधारण खर्च | ८१०५७०६० | ८४६७०५०० |
| सिंग तथा बीमा | १५०००००० | १५०००००० |
| रेल | १९२५४१६०५ | २०६९३०००० |
| हर | ५२९७८००५ | ५८९३०५०० |
| ष्ट्रीय कार्य | १०५१५५७०० | ९९१८४००० |
| सैनिक व्यय | ३११८९८६४७५ | ४५७९९०५०० |
| कुल व्यय | १२४७६६४५७० | १५९२२६०५०० |

इस हिसाब के सम्बन्ध में दो बात सोचने के काबिल हैं। सैनिक खर्च और दूसरा राज्य का, जो कि शिरबी साहब अनुसार इङ्लैंड से सातगुना है। मालगुजारी और लगान रूप में जो धन लिया जा रहा है उस पर भी गौर करना जरूरत है और हम एक स्वतन्त्र अध्याय में इसकी चर्चा

करेंगे। अफीम गाँजा और दूसरे मादक द्रव्यों के एकाधिकार से भी सरकार को बहुत आमदनी है। जंगलों और खानों के काम से बहुत कुछ आमदनी बढ़ने की आशा है। रेलों का विस्तार भी दिन पर दिन बढ़ रहा है। और उससे सरकार को बहुत अधिक फायदा हो रहा है। भारतीय रेलों पर लगभग ५॥ करोड़ रुपया खर्चा हो चुका है। तमाम रेलों की लम्बाई का ६० फी सदी, सरकार का कब्जा है। इस वक्त रेलों की आमदनी १२ करोड़ रुपया साल है। जो खर्चा निकालने के बाद में है।

नहरों से सरकार को बहुत बड़ी आय है। नहरों पर ५० करोड़ रुपया खर्च हो चुका है। और इस वक्त नहर की शुद्ध आमदनी खर्चा निकालकर ३ करोड़ रुपये से अधिक है। सामुद्रिक चुंगी के सम्बन्ध में यदि ब्रिटिश गवर्नमेण्ट विदेशी माल बेचने वालों का पक्षपात न करे तो बहुत अधिक बढ़ाई जा सकती है। परन्तु जब २ सरकार ने ऐसा किया इंग्लैंड में मार्यकर शोर मच गया। परन्तु नमक जैसे गरीबों के इस्तैमाल की चीज पर लगभग उसकी कीमत से अधिक टैक्स लगाया गया है। और इससे सरकार को प्रतिवर्ष ११ करोड़ रुपये की आय है इनकमटैक्स और सुपर टैक्स इन दोनों से जो आय सरकार को होती है। वह अन्दाज से सरकार की कुल आय का लगभग तृतीय अंश है। इस प्रकार सरकार को भारत वर्ष से प्रति वर्ष १॥ अरब के करीब आय है।

# नवाँ अध्याय

## अंग्रेजों का भारत से सहयोग

—— o: ——

महा मनस्वी ऋषि दयानन्द सरस्वती अपने व्याख्यानों में
ाहुधा कहा करते थे कि "भाई ! पहले मूर्खों से पाला पड़ा
ा—सो छुटकारा पा गये, पर अब की बार बुद्धिमानों से
ाला पड़ा है, छूट न सकोगे—अब तक बुद्धिमान न बनोगे।"
ऋषि दयानन्द का ख्याल सच था कि मुसलमान मूर्ख थे, वे
ारत को अतिथि-सत्कार करने वाला, परिश्रमी, वीर, धनी
ादि देख कर भी इस पर मोहित नहीं हुए—अपनी धुन में
न्धे होकर बराबर मार-काट मचाते रहे—और घोर वैमनस्य
ा बीज बोया - तिस पर यहीं आकर बस गये। अन्त में उन
अधिकार छिन गये। परन्तु अंग्रेज़ ऐसे मूर्ख नहीं हैं। अपने
र में वे अच्छी तरह चारों तरफ़ से किवाड़ बन्द कर बैठे हैं—
ई भय या खतरा उन से बहुत दूर है। यहाँ आकर उन्हों ने
अत्याचारियों का साथ नहीं दिया, पीड़ितों का साथ दिया
इस लिये प्रजा उनकी तरफ़ झुकी। प्रथम कौतूहल से, पीछे

आशा से, फिर भय से। अँग्रेजों ने प्रथम भारत रक्षा का ढोंग दिखाया और दोनों पक्ष से मतलब बना कर बन्दर बट वारा किया—दोनों के भाग में से कतर लिया। वह समय ऐसा था कि अविचारी लोग बढ़ गये थे—सामाजिकता को भूल गये थे। दिल्ली के सम्राट् अपने अत्याचार का फल भोगने लग थे और उन पर और उन की प्रजा पर कठोर दक्षिणियों की बराबर मार पड़ रही थी। राजपूताना और ख़ास कर मेवाड़ जो बराबर मुग़ल शक्ति का सामना करते करते चूर हो गया था, मराठों की मार से व्याकुल हो उठा था, वीरता बूढ़ी हो चुकी थी, ओज मर रहा था, सहन-शक्ति थक चुकी थी, सीसो-दिया कहाँ तक सहते? कोई सहायक न था, पड़ोसियों की दशा यह थी कि बहुर खाये बैठे थे। सब के मन में गुमान था कि हमारी तो नाक कट गई, उदयपुर सूखा कैसे बचा? उदय पुर की श्वेत पगड़ी पर किसी भी स्वार्थी के हाथ का काला छींटा पड़ता कि लोगों के कलेजे ठंढे होते थे। बदला मिला, दोष किसे दे। निरन्तर अपमान और ठोकर खाकर सहने की और सह कर सन्तुष्ट रहने की आदत पड़ ही जाती है। पूर्व के प्रांतों में सूबेदार लोग उच्छृंखल नवाब बन बैठे थे और शराब तथा ऐयाशी में डूबे रहते थे। प्रजा रंजन एक ओर रहा प्रजा पालन भी उन से ठीक ठीक न होता था। बल और स्वेच्छा चारिता थी, पर बैर इतनी थी कि टुकड़े टुकड़े थी। नहीं तो

ारत का यहीं अन्त था। दक्षिण के मराठे अपनी गाँठ भरने
ो धुन में मनुष्यत्व को तिलांजली दे रहे थे। वे कुपित बाद-
ाह पर थे और दण्ड देते थे प्रजा को। दण्ड भी क्या,
ापीड़न करते थे। पंजाब का दशा और भी बुरी थी। पर
ा के ऊपर एक बात थी। प्रजा में इस आपस की अशान्ति
र भय ने कुछ गुण उत्पन्न कर दिये थे—वह वीर, स्वावलम्बी
ौर सहन शक्ति वाली तथा धीट हो गई थी। इस के सिवा
ा के जीवन-निर्वाह की विधियाँ बहुत सरल थीं। व्यापा-
क छलों का सृष्टि नहीं हुई थी। खाने पीने और व्यवहार की
तुएं खाने पीने और व्यवहार के ही काम में मुख्य-रूप में
नी और माना जाती थीं—धन्धे और कमाई के रूप में नहीं।
ाल में प्रख्यात जालिम नवाब शाइस्तखाँ के समय में रुपये
आठ मन चावल बिकते थे। जिस सिपाही की एक रुपये
भी तनखा थी वह आठ आने में परिवार भर को तर पुलाव
ला कर आठ आने बचा लेता था। सम्राट् अकबर के राज्य
मजूर की तनखा दो पैसा रोज़, और उत्तम खाती की सात
ा रोज़ थी। परन्तु खाद्य द्रव्य इतने सस्ते थे कि आज मजूर
रु० रोज़ और कारीगर ४) रु० कमा कर भी उतना सुखी
सकता है।

पाठकों के कौतुक के लये यहाँ सिारणी देना अनुचित न होगा

| वस्तु | ४० पैसे के एक रुपये में कितना अन्न आता था। | | | मज़ूर को दो पैसे में कितना अन्न मिलता | | कारीगर को पैसे में कितना अन्न मिलता | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | मन | सेर | छ० | सेर | छ० | सेर | छटांक |
| गेहूँ | | १७ | २ | ४ | १० | १६ | ४ |
| जौ | ३ | १६ | १० | ६ | १५ | २४ | ४ |
| उत्तम चावल | | १० | ६ | ० | ८ | १ | १२ |
| मामूली ,, | १ | १५ | ८ | २ | १० | ६ | [illegible] |
| मूंग | १ | २८ | ८ | ३ | २ | १० | [illegible] |
| उर्द | १ | २६ | ६ | ३ | ८ | १२ | [illegible] |
| मोठ | २ | १७ | २ | ४ | १० | १६ | [illegible] |
| ज्वार | २ | ३१ | ० | ५ | ६ | १६ | [illegible] |
| खांड | ० | १६ | १० | ० | ७ | १ | [illegible] |
| गुड़ | ० | ८ | १० | १ | ० | ३ | [illegible] |
| घी | ० | ६ | ६॥ | | ५॥ | १ | [illegible] |
| तेल | ० | १४ | ० | ० | ११ | २ | [illegible] |
| नमक | १ | २६ | ६ | ३ | ८ | १२ | [illegible] |

दूध एक रुपये का १ मन से अधिक आता था। क्या
पैसे रोज कमाने वाला मज़ूर अपनी तनखा में पेट भर कर
कर ऐसी दशा में कुछ बचा न सकता था ?

यदि एक आदमी की रोजाना ख़ूराक १ सेर पक्का ग
दाल पाव भर, छटाँक घी, छटाँक तेल, तोला भर नमक मि
आय तो ११ पैसे के गेहूँ, ७॥ पैसे की दाल, ३ के चाव

पैसे का तेल, धेले का नमक—इतने में
गारा हो सकता था। ये सब २४॥ पैसे हुए
के हिसाब से ६० पैसे आमद हुई। ऐसी
ो आदमियोंका पेट मजे में भर सकता था।
। शाक, दूध, शक्कर, कपड़ा ले सकता था।
माम में कुछ बुरी न थी।

देख कर यूरोप के यात्री टेरी ने लिखा है कि
ो थी कि उसका कुछ भाव ही नहीं कहा जा
न रीति से तमाम राज्य में वस्तुएं इतनी
र का प्रत्येक मनुष्य बिना कष्ट के पेट भर

युक्त प्रान्त के गाजीपुर जिले के भाव लिखते
कबर का रुपया आज के रुपये का बनिस्बत
दाम को ले खरीद सकता था और १८७०
-२ में बारह तोला टका भाव बढ़ गया था
व में पाँच गुना फर्क दाम पड़ता है। आज
ाठियावाड़ में बहुत से नगरों में एक रुपये
कता था। बढ़वाण में संवत् १६९० में रुपये
था, १४ सेर दाल और १४ सेर आटा

यही देश आज भूखों मर रहा है। सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ में भारत पर अंगरेज़ों का प्रभाव पड़ा और उसके अन्त तक वह जम गया।

ग्यारहवीं शताब्दी में २, बारहवीं में १ भी नहीं, तेरहवीं में ३, पन्द्रहवीं में २, सोलहवीं में ३, सत्रहवीं में ३, अकाल भारत में पड़े। और अठारहवीं का आधा काल बीतते बीतते अर्थात् १७४५ तक ४-इस तरह लगभग साढ़े सातसौ वर्षों में यहाँ सब मिला कर अठारह अकाल पड़े थे जिन में अनुमान, ५० हज़ार आदमी मरे। लगभग ये सब स्थानीय थे देश व्यापी नहीं। संसार भर में इन सातसौ वर्षों में जितने युद्ध हुए उन में इस से अधिक आदमी नहीं मरे।

इस के पीछे सन् १७६६ से लेकर १८०० तक ३ अकाल पड़े। और इस के बाद १९ वीं शताब्दी में १८०० से १८२५ तक कुल २६ वर्षों में ५ अकाल पड़े जिन में लगभग १० लाख आदमी मरे। १८२६ से १८५० तक २ अकाल पड़े जिन में ५ लाख आदमी मरे। १८५१ से १८७५ तक ६ अकाल पड़े जिन में ५० लाख आदमी मरे और १८७६ से १९०० तक १८ अकाल पड़े जिन में अनुमानतः २ करोड़ ६० लाख आदमी भूखे मर गये!

साधारण आदमी समझते हैं कि अकालों का होना पानी न बरसने के कारण है, पर यह भूल है। अकाल का कारण

किसानों की घोर दरिद्रता है जो अंग्रेजोंका राज्य होने पर घुटने टेक कर उनके घर में घर कर बैठी है। इस बात को बड़े बड़े विद्वान् अंगरेजों ने भी स्वीकार किया है।

एक बार मुझे मेवाड़ के अन्तर्गत शाहपुरे राज्य में जाना पड़ा। इन नवीन दिनों में उस स्थान पर पुरानी झलक थी। मैंने राजत्व और प्राचीन युगों के सम्बन्ध में बहुतसी बातों का पता लगाया। एक बूढ़े राजपूत ने कहा—राजत्व का अब नाश होगा राजा के धन्धे में कुछ तत्त्व नहीं रह गया। राजा का महकमा ही निकम्मा है। प्रजा जवान हो गई, वह अपनी रक्षा में स्वयं समर्थ है। सृष्टि का बाल-काल बीत गया है। पहले लड़ने और रक्षा करने को राजा चाहिए थे, अब उनकी जरूरत ही नहीं है प्रजा उन्हें शीघ्र ही पेन्शन देगी, नहीं तो वे पड़े पड़े माल चोरते चीरते हरामी हुए जाते हैं। उस पुरुष ने और भी कहा—प्रथम राजा किसानों से माल गुजारी में नकद पैसा नहीं लेते थे—उपज का भाग लेते थे। थोड़े में थोड़ा, बहुत में बहुत। कर्मचारियों को वेतन में अनाज ही मिलता था और जो अनाज बच रहता था वह प्रजा को मोल बेचा जाता था। भाव राजा निकालते थे। वह बहुत सस्ता होता था। लोग वहां से खरीदते थे तो बाजार के दुकानदारों को भी उसी भाव माल बेचना पड़ता था। पर अब नया बंदोबस्त होने से नकद रुपया वसूल किया जाने लगा। इस

से एक नुकसान तो यह हुआ कि खर्च बढ़ गया, पटवारी और भाव तोल का महकमा ही अलग बनाना पड़ा और दूसरे—भाव राजा के हाथ से निकल कर दूकान वालों के हाथ में चला गया। अब वे मन माने भाव से बेचेंगे, क्योंकि माल उन्हीं के हाथों में है।

उसी पुरुष ने यह भी कहा कि पहले राजाओं को काम में सरलता थी। कम खर्च था, आय खूब थी और व्यापारियों को परिश्रम, खतरा बहुत था। माल लाद कर वर्षों विदेश के कष्ट भोगने पड़ते थे। न रेल थी, न तार, बहुतेरे मर जाते थे—घर लौटते ही न थे। पर अब राजा के लिये तो सौ कठिनता आगई। खर्च बढ़ गये, आय कम हो गई। और व्यापारियों के सरल सुभीते निकल आये—गद्दे पर पड़े पड़े केवल तार खटका कर लाखों कमाते सोते हैं, तो बाबा! राजत्व कहाँ ठहरेगा—आज या कल राजत्व का विनाश होने वाला है।

देहाती बूढ़े की बातों में जो तत्व है उसे पाठक स्वयं सोचें।

अंगरेजों के भारत में आने से प्रथम भरत का व्यापार और शिल्प इतनी अच्छी दशा में था कि दोनों भरपूर एक दूसरेको उत्तेजन देते थे। मुसलमानी राज्यके स्वेच्छाचारों में,

बल्कि अशान्ति की आग में भी इस में रखो भर भी कमी न होने दो। इस का कारण यह था कि मुसलमान बादशाह बादशाह थे, व्यापारी नहीं थे। उन्हों ने हमारे देश को स्वदेश बना लिया था। उनके जो जुल्म थे वे उनकी धर्मान्धता के कारण थे—उनको शिक्षा और अभ्यास वैसा ही था। उन जुल्मों को हम नोचता पूर्ण नहीं कह सकते क्रूर अवश्य कह सकते हैं। इसी मूर्खता से उनके राजत्व का नाश हुआ।

परन्तु अंगरेजों के जहाँ जहाँ पैर पड़े शिल्प और व्यापार पर वज्राघात हुआ। यद्यपि अंगरेज-जाति कुटिल है, पर व्यापार और शिल्प को नाश करने को इसने क्रूरता का भी अवलंब लिया, इतनी क्रूरता जितनी मुसलमानों में भी न थी। उन की क्रूरता में धर्मविश्वास था—शास्त्राज्ञा की भी गलत समझी थी, पर इन की क्रूरता में नीच स्वार्थ और घृणित उद्देश्य था।

यह माना जायगा कि अंग्रेजों ने अध्यवसाय और सहनशीलता तथा दृढ़ता के उदाहरण दिखाये, पर किस लिये? किसी दीनकी रक्षा के लिये नहीं, किसी धार्मिक मामले में नहीं, दूसरों के छप्पर में तापने के लिये। प्रथम अरब के सौदागर व्यापारियों को मार कर भगाया, स्वयं ग्राहक बने, धोखा मुहरा की और पीछे खरीदी वस्तुओं का नमूना बना कर ले गये और अन्त में बल छल विश्वास और सत्ता के ज़ोर पर देश को आत्म

को दशा को पहुँचाया। सुई विलायत से आती है, धोती जोड़े मलमल, छींट विलायत से आती है।

प्रत्येक वस्तु—लिखने की कलम, दवात, स्याही तक—विलायत से आती है। बरतन भी विलायत से आते हैं। केसर भी विलायत से आती है। सब कुछ विलायत से आता है, स्त्रियां केवल भारत की ही रहती हैं। यदि वे भी विलायत से आने लगें तो हिन्दुत्व समाप्त हो जाय और भारत का अतीत एक कहानी मात्र रह जाय। ईश्वर की दया से अब विलायत से स्त्रियाँ भी आने लगी हैं और अपने काले चमड़े की परवा न कर हम सब साहब तो बन ही गये हैं।

यह बात कही जा सकती है कि प्राचीन फुटकर शिल्प यदि नष्ट हो गया है तो भी नया विलायती ढंग का शिल्प अंग्रेजों के राज्यत्व में बराबर ऊँचा चढ़ रहा है। अब यदि करघे नहीं हैं तो बड़ी २ मिलें कपड़े तैयार कर रही हैं। अब यदि छोटी २ दूकानें छापने, गढ़ने और दूसरे काम करने की नहीं हैं तो बड़े २ कारखाने हैं। बाहरी दृष्टि से देखने पर इसकी परिस्थिति मालूम नहीं पड़ती, पर सच पूछो तो ये मिल सदृश भीमकाय राक्षस गृह कारीगरी को उत्तेजन देने वाले नहीं, कारीगरी का सर्वनाश करने वाले हैं। माना कि कपड़ों की मिलों में कपड़ा यहीं बनता है। पर इससे उत्तेजन विलायती

कारीगर को मिला जिसने मशीन बनाई और आमद उस धनी की हुई जिसने उसे खरीद कर खड़ी किया। बेचारे कारीगरों का यदि इसमें कुछ लाभ हुआ तो इतना कि वे कारीगर से मजूर बन गये—स्वच्छन्द से गुलाम बन गये। पहले प्रत्येक को अपने बुद्धि बल की जरूरत पड़ती थी। अब वे मशीन की पुतला बन गये। कारीगरी भूल गये।

कहा जाता है कि विलायत का एक कारीगर हिन्दुस्तानी ६ या ९ कारीगरों के बराबर काम करता है। लंकाशायर में कपड़े की मिलों में एक "कामदार" अकेला ४ से ६ करघों को चलाता और सम्भालता है। वह भी हफ्ते ५५ घंटे काम करके हर करघे से हर हफ्ते ७५ पौंड ( प्रायः ३८ सेर ) वजनका मोटा कपड़ा तैयार करता है। उसका ६ करघों का काम सब मिला कर हर हफ्ते में ४६८ पौंड वजन में होता है। परन्तु हिन्दुस्तान की मिलों में काम करने वाला कामदार सिर्फ एक करघे को ही सम्भाल सकता है और अधिक से अधिक ६० पौंड मोटा कपड़ा तैयार कर सकता है, यद्यपि लंकाशायर और यहाँ की मेशीनरी एक ही समान है। परिणाम यह होता है कि यद्यपि विलायत की अपेक्षा यहाँ मजूरी बहुत ही सस्ती है, पर तो भी विलायत में कपड़ा बुनने का खर्च बहुत कम पड़ता है। एक पौंड ( आधा सेर ) मोटा कपड़ा बुनने में ( लागत के सिवा ) बुनाई की केवल १४ पाई खर्च होती है। पर उतने ही

काम के लिये मजूरी सस्ती होने पर भी, भारत में १७ पाई खर्च हो जाती है।

पर इसका कारण क्या है? भारत के जो कारीगर बिना आसरे के हाथ के करघों से ऐसे कपड़े बनाते थे जिसकी सात पोशाक पहनने पर भी शरीर दीखता था, जहाँ की बनी मलमल के थान बोतलों में भर कर विलायत भेज जाते थे, जहाँ की चीजें कुस्तुन्तुनिया और रोम के विराट बाजारों में अपनी महक से यूरोप के शौकीनों को लट्टू करती थीं और ऐसे वस्त्र जो इतनी बहुतायत से बनते थे कि तीस करोड़ भारतवासियों के पहन फाड़ने के पीछे यूरोप को भी बेचे जाते थे—उस देश के कारीगरों पर इस उन्नति (?) के जमाने में क्या बिजली पड़ी कि वे बिचारे विलायती कारीगरों से तो होड़ लगा ही नहीं सकते, मजूरों से भी इतने निकृष्ट हो गये कि ६ या ६ के बराबर एक विलायती मजूर!

इसके जिम्मेदार कौन हैं? वे—जिन्होंने इनके स्वातन्त्र्य को छीना, व्यापार को धूल में मिलाया, कारबार को फाँसी दी और उन्हें दरिद्र मजूर बनने पर लाचार किया। उनके रहने के स्थान देखिये बिना घृणा किये न रहा जायगा।

क्या बम्बई अहमदाबाद की कपड़े की मिलें, क्या कलकत्ते का जूट मिलें क्या बंगाल-बिहार की खानें और क्या आसाम

के साथ बागोचे—कहीं भी इनकी आवश्यकताओं पर ध्यान नहीं दिया जाता। ये लोग जिनकी संख्या ५ करोड़ से ऊंचा है और जिनकी कमाई पर समस्त प्रजा वालों का कारबार निर्भर है, अनावश्यक जन्तुओं की तरह से दिन काट रहे हैं। पुतली घरों में काम करने वाले मजूरों को रोज मीलों का सफर तै करना पड़ता है। जब सारा दुनिया सोई होती है तभी वे उठ कर जैसे तैसे दो चार ग्रास भोजन करके अपने निश्चित स्थानों को रवाना हो जाते हैं। कारखाने तक पहुँचते, पहुँचते उन को बहुत सी शक्ति जाना रहता है और वे थक जाते हैं। अमीरों के कुत्ते उन से अधिक सुखी रहते हैं। तब इस में क्या आश्चर्य है कि ये प्लेग, हैजा, विशूचिका, मलेरिया के शिकार बने।

बात यहीं समाप्त नहीं हो जाती। स्वास्थ्य के सिवा इन के चरित्र भी इसी तरह नष्ट हो रहे हैं। मालिकों का धुड़की और गाली खाते खाते इनका आत्मबल नष्ट हो गया है और अनेक स्त्री-पुरुषों को एक साथ खिचपिच रहने से व्यभिचार जुआ, शराब और असभ्यता के अनेक दोष इन में आ गये हैं—इन्हि बेचारे अपने बच्चों को भी चार पैसे के लालच से उसी नर्क कुण्ड में डाल देते हैं।

इस तरह जो काश्तकार छोटे छोटे गाँवों में अपनी छोटी सी दुकान में या झोपड़े में बैठ कर मित्रों से गपशप करते स्वच्छन्द-

भाव से दिन व्यतीत करते थे वे आज अंग्रेजी राज्य में, नव सभ्यता की छत्रछाया में, उन्नति के स्वर्ण-दिनों में, ऐसा सुन्दर जीवन व्यतीत कर रहे हैं !

सत्रहवीं शताब्दि में फिलोमोरने कहा था कि भारत अपने बचे-खुचे माल से औरों का पेट भर सकता है, भारत में अनेक प्रकार की मिट्टी और जल-वायु होने से वह अपनी आवश्यता के लिये सभी पदार्थ पैदा कर सकता है। पूर्व में—आसाम, बंगाल, बिहार और उड़ीसा इन प्रान्तों में रबर, तेलहन, तेल, लाख, नील, जूट, कागज़, चमड़ा, रेशम, अफीम, तम्बाकू, चायपत्ती, चावल, कोयला, लोहा, शोरा, अबरक इत्यादि पाये जाते हैं और उपजते हैं।

दस्तकारी में हाथीदांत का काम, छाता बनाना, सीपशंख का काम, ढाके की मलमल, जरदोजी और चटाई का काम मशहूर है।

- उत्तर में—संयुक्त प्रान्त, मध्य-देश, काश्मीर, राजपूताना, मध्यभारत, पञ्जाब, सीमा प्रान्त शामिल हैं। यहाँ दाल, धूप, लाह, तेलहन, इत्र, साबुन, मोमबत्ती, कत्था हर्रा, बहेड़ा, रुई, रेशम, ऊन, चमड़ा, दरा, गेहूँ, बकाम, चाय, शाशम, देवदारु, जस्ता, ताम्बा, नमक, शोरा, सुहागा इत्यादि द्रव्य पाये जाते हैं। दस्तकारी में टाम के सामान, लाहसे रंगे धातु के सामान

पत्थर खोदने के सामान, ताम्बे पीतल के सामान, और फौलादी सामान, पत्थर खोदने काटने की मिट्टी का काम, लकड़ी, हाथी दाँत, चमड़े का काम, रंगाई, छपाई, रुई, रेशम, उनके कपड़े —शाल, दुशाला, दरी, आसन कालीन इत्यादि मशहूर हैं।

पश्चिम भारत में—बम्बई प्रहाता, बरार और बलोचिस्तान हैं। यहाँ गोंद, तेलहन, रुई, ऊन, चमड़ा, जड़ी-बूटी, नमक, गेहूँ पैदा होता है; सोना चाँदी के सामान, लकड़ी सींग, चमड़े, रुई, ऊन तथा जरदोजी की कारीगरी प्रसिद्ध है। दक्षिण भारत मे—मद्रास मैसूर, निजाम हैदराबाद और कुर्ग हैं। यहाँ तेलहन, घी, चर्बी, नील रुई, नारियल के छिलके का सामान हाथीदाँत, चमड़ा, चाय, मिर्च, दालचीनी, चावल, चन्दन, मोती, सोना, सीसा इत्यादि द्रव्य पाये जाते हैं। दस्तकारी म सोना चाँदी, ताँबा, पीतल की कारीगरी, पत्थर, लकड़, हाथीदाँत का काम, कपड़ा रंगना, छापना, रेशमी कपड़ा बुनना और चिकन तथा कारचोबी का काम मशहूर है।

बर्मा में रबर, वार्निश, लाह, कत्था, चावल, सागवान की लकड़ी, टीन आदि होता है। दस्तकारी में लोहा, सोना, ताँबा, पीतल के सामान, हाथीदाँत, लाह और शीशे के सामान अच्छे बनते हैं।

ऊपर के विवरणों से पता लगेगा कि बंगाल-बिहार में

कृषिजात द्रव्यों की प्रचुरता है पर दस्तकारी की कमी है। पश्चिम भारत में उत्पन्न द्रव्यों तथा कारीगरी दोनों की कमी है। पर दक्षिण भारत में फिर भी प्रचुरता है। वर्मा में हुनर बहुत है। उत्तर भारत में भी कारीगरी की कमी नहीं है। पर सब के प्रथम ईस्ट-इण्डिया कम्पनी ने और उसके पीछे ब्रिटिश गवर्नमेंट ने और अब साम्राज्य वाले व्यापारियों ने इस बात पर बड़ा जोर दिया है कि भारत कच्चा माल सामान तैयार होने के लिये विदेश भेजे और बना हुआ माल साम्राज्य में उत्तम कह कर खरीदे। जैसा मैकाले ने कहा था कि अंग्रेजी उद्योग धन्धों का आश्चर्य जनक विस्तार और भारत की दरिद्रता दोनों सम-सामयिक हैं। औद्योगिक कमीशन के सामने एक गवाह ने कहा था कि भारत को बाहर वालों के लिये पैदावार बढ़ानी चाहिये अर्थात् ईस्ट इण्डिया-कम्पनी के शब्दों मे उसे बाहर भेजने के लिये कच्चा माल पैदा करने का यन्त्र बनना चाहिये।

अभागे भारत ने भी इसी पर सन्तोष किया और उसे विश्वास हो गया कि वह कृषि प्रधान देश है वह कच्चा माल तैयार करने के ही योग्य है। तिस पर भी तुर्रा यह कि कच्चे माल के व्यापार का भी बहुतरा अधिकार विदेशियों के हाथ मे चला गया। पश्चिमी समुद्र तलका नारियल तथा उसके रेशों का कारबार, अवरक की खाने, कुछ कच्चा चमड़ा

जर्मनी के हाथ में था। और भी मजा देखिये कि वैज्ञानिक कृषि के कुछ ऐसे परीक्षणों का फल भारत की माँग नहीं इंगलैण्ड की पूरी करने के लिये प्रयत्न किये जाते हैं। भारत छोटे धागे की कपास 'पैदा' करता है और उसके करघों के लिये वह उपयुक्त है, परन्तु लंका शायर को लम्बे धागों की कपास चाहिए और उसकी यथेष्ट पूर्ति अमेरिका और मिश्र नहीं कर सकता इस लिये भारत में लम्बे धागे की कपास पैदा होने का प्रयत्न किया जा रहा है।

इधर यह हमारी उपज पराई मीम आकाँक्षाओं की पूर्ति के लिये उपयुक्त बनाई जाती है। उधर तैयार माल के बनाने वाले विदेशी सरकार को खुशी की घूस देकर मजे में डाका मार रहे हैं। जब मैं जापान के निकम्मे सामान को हिन्दुस्तान के बाजारों में घरा पाता हूँ तो कलेजे में आग लग जाती है। भगवान् ने आज यह दिन भी दिये कि बचारा जापान भी इस योग्य हुआ कि भारत के बच्चों को वस्त्र और सामान दे।

अब से केवल १००,१५० वर्ष प्रथम भारतवर्ष का व्यवसाय कितना बढ़ा चढ़ा था। रेल उन दिनों नहीं थी, पर भारत का माल अफगानिस्तान, परशिया का राह से होता हुआ कारवान द्वारा यूरोप पहुँचता था। ढाके और चन्देरी की मलमल की सम्पूर्ण संसार में, धूम थी यूरोप के बड़े बड़े वैज्ञानिक जो आजकल अपने ईश्वर होने की डींग मारते हैं।

लिवरपूल और मैंचेस्टर की मिल खुलने से पहले भारतवर्ष के देश-देशियों द्वारा बनी मलमल अथवा वस्त्रों से शरीर को अलंकृत करके अहोभाग्य मानते थे। रोम के बादशाह अगस्टस सीज़र के ज़माने में रोम की रानियों को ढाके की मलमल के आगे कुछ भाता न था। पतन के समय में डाक्टर टेलर ने ढाके में ऐसा बारीक सूत देखा था जो लम्बाई में १३४६ गज था, पर तौल में केवल २२ ग्रेन था। इस हिसाब से १ पौंड रुई में २५० मील लम्बा सूत आज कल के हिसाब से ५२४ नम्बर का होता है। यह सूत बिना मशीन के मामूली सीधे साधे तकुए वाले लकड़ी से चरखों के ही बनाया जाता था। यह सब शिल्प और व्यापार क्या हुआ? इस सत्यानाश के कारण अत्याचार-परि पूर्ण हैं। इंग्लैण्ड पर बड़े बड़े कर लगाये गये और भारतीय वस्त्र पहनने वालों को कड़ा दण्ड देने के लिये कानून बनाये गये। राज-दर्बार में भारती वस्त्र पहन कर जाने की सख्त मुमानियत कर दी गई। इस प्रकार भारत की रक्षा के बहाने आकर अंगरेज़ों ने भारत के शिल्प

का हत्या का। बंगाल के जुलाहों पर इतना अत्याचार हुआ कि वे अपने अंगूठे काट कर देहातों में बस गये। इस कला को नष्ट करने में युक्त और अयुक्त सभी उपायों का अवलम्बन किया गया। परिणाम क्या हुआ कि मैंचेस्टर और लिवरपूल का भाग्य जाग उठा। सरकार ने





लिवरपूल और मैंचेस्टर की मिल खुलने से पहले भारत
के देव-देवियों द्वारा बनी मलमल अथवा वस्त्रों से शरीर को
अलंकृत करके अहोभाग्य मानते थे। रोम के बादशाह आरल
नीरू के जमाने में रोम की रानियों को ढाके की मलमल
आगे कुछ भाता न था। पतन के समय में डाक्टर टेलर
ढाके में ऐसा बारीक सूत देखा था जो लम्बाई में ११४६ ग
था, पर तौल में केवल २२ ग्रेन था। इस हिसाब से १ पौं
रुई में २५० मील लम्बा सूत आज कल के हिसाब से ४२
नम्बर का होता है। यह सूत बिना मशीन के मामूली सां
साधे तकुए वाले लकड़ी से चरखों के ही बनाया जाता था
यह सब शिल्प और व्यापार क्या हुआ? इस सत्यानाश
कारण अत्याचार-परि पूर्ण हैं। इंग्लैण्ड पर बड़े बड़े
लगाये गये और भारतीय वस्त्र पहनने वालों को कड़ा दण्ड
देने के लिये कानून बनाये गये। राज-दर्बार में भारती व
पहन कर आने की सख्त मुमानियत कर दी गई। इस प्र
भारत की रक्षा के बहाने आकर अंगरेजों ने भारत के शि
का हत्या की। बंगाल के जुलाहों पर इत
अत्याचार हुआ कि वे अपने अंगूठे काट कर देहातों
भाग गये। इस कला को नष्ट करने में युक्त और अयुक्त सभी
उपायों का अवलम्बन किया गया। परिणाम क्या हुआ कि
मैंचेस्टर और लिवरपूल का भाग्य जाग उठा। सरकार ने

शिक्षा नहीं पाई। और इनमें १६, ८०, ५३१ तो पढ़ भी नहीं सकते थे। यदि ये आँकड़े याद दे दिये जायँ तो २०, २७, ५५५ ही बच्चे ऐसे बचते हैं जिन्हें कुछ काम की शिक्षा मिल रही है और यह फी सैकड़ा ८३ उतरती है जो अत्यन्त भयानक है।

५५ लाख विद्यार्थियों की शिक्षा के लिये जितना धन खर्च किया जाता है वह समुद्र में फेंक देने के बराबर है। १९१५ के अंत में स्कूल जाने योग्य अवस्था के फी सैकड़े २४ लड़के स्कूलों में पढ़ते थे। १९१३ ई० में भारत-सरकार ने विद्यार्थियों की संख्या ४५ लाख बताई। इतना काम ५९ वर्षों में हुआ था। वर्षों का यह गणना १८५४ ई० से की गई है। जब सर चार्ल्स उड ने शिक्षा-सम्बन्धी खरीता भेजा था और जिसके फल-स्वरूप शिक्षा विभाग बना था। सन् १८७० ई० में ग्रेट ब्रिटेन एजूकेशन एक्ट पास हुआ। उस समय इंगलैंड में शिक्षा की यही अवस्था थी जो आज दिन भारत में है। इंगलैंड में १८३३ से शिक्षा के प्रचार के लिये धन की सहायता मुख्य कर चर्च स्कूलों को दी जाने लगी। १८७० और १८८१ के बीच शिक्षा शुल्क-रहित और अनिवार्य की गई और १२ वर्षों मे ही औसत फी सैकड़ा ४३.२ से बढ़कर प्रायः सौ में १०० हो गया। इस समय इंगलैंड और वेल्स की ४ करोड़ की बस्ती में स्कूलों में जाने वाले बच्चों की संख्या

सरकारी काम से छुट्टी होगी तब तब प्रजा का काम किया जायगा। मानो प्रजा की ज़रूरत कुछ आवश्यक थी ही नहीं। प्रजा के लिये कोई उत्तम सरकार जो काम कर सकती थी वे इस तरह के होते कि वह स्वास्थ्य, शिक्षा तथा कृषि-सम्बन्धी उन्नति के उपायों का अवलम्बन करती, स्थानिक कार्यों में प्रजा का प्राधान्य स्वीकार करती और कौन्सिलों में जिन नीतियों पर विचार होता है हमें स्थान देती।

कहने को यह कहा जा सकता है कि उसने ऐसा किया है—स्वास्थ्य के विभाग और भीमकाय अस्पताल खोले हैं, म्युनिसिपालिटी में स्वाधीन चुनाव का अधिकार दिया और कौंसिलों में हमारे भाइयों को कुर्सी दी है, पर वास्तव में वह सब भुस पर लीपने के समान निस्सार है।

प्रथम शिक्षा की बात पर विचार करें। का सदा २ बच्चों को शिक्षा मिल रही है। शिक्षा-तत्वज्ञों का मत है कि जिन्हें चार चार वर्ष से कम शिक्षा मिलती है वे थोड़े दिनों में सब भूल जाते हैं। ब्रिटिश भारत के १९१४ १५ के एज्युकेशनल स्टेटिस्टिक्स, या शिक्षा-सम्बन्धी आँकड़ों से मालूम होता है कि ६३, ३३,६६८ लड़कों और ११, २८ लड़कियों अर्थात् कुल ७४, ६२, ०३१ बच्चों को शिक्षा मिल रही है। इनमें ५४, ३८, ५६ बच्चों ने लोअर प्राइमरी से अधि

शिक्षा नहीं पाई। और इनमें १६, ८०, ५३१ तो पढ़ भी नहीं सकते थे। यदि ये आँकड़े बाद दे दिये जायं तो २०, २७, ५५५ ही बच्चे ऐसे बचते हैं जिन्हें कुछ काम की शिक्षा मिल रही है और यह फी सैकड़ ८३ उतरती है जो अत्यन्त भयानक है।

५५ लाख विद्यार्थियों की शिक्षा के लिये जितना धन खर्च किया जाता है वह समुद्र में फेंक देने के बराबर है। १६१५ के अंत में स्कूल जाने योग्य अवस्था के फी सैंकड़ें २ ४ लड़के स्कूलों में पढ़ते थे। १६१३ ई० में भारत-सरकार ने विद्यार्थियों की संख्या ४५ लाख बताई। इतना काम ५६ वर्षों में हुआ था। वर्षों का यह गणना १८५४ ई० से की गई है। जब सर चार्ल्स उड ने शिक्षा-सम्बन्धी खरीता भेजा था और जिसके फल स्वरूप शिक्षा विभाग बना था। सन् १८७० ई० में ग्रेट ब्रिटेन एजूकेशन एक्ट पास हुआ। उस समय इंगलैंड में शिक्षा की वही अवस्था थी जो आज दिन भारत में है। इंगलैंड में १८३३ से शिक्षा के प्रचार के लिये धन की सहायता मुख्य कर चर्च स्कूलों को दी जाने लगी। १८७० और १८८१ के बीच शिक्षा शुल्क-रहित और अनिवार्य की गई और १२ वर्षों में ही औसत फी सैकड़ा ४३.२ से बढ़कर प्रायः सौ में १०० हो गया। इस समय इंगलैंड और वेल्स की ४ करोड़ की बस्ती में स्कूलों में आने वाले बच्चों की संख्या

१० लाख है। जापान में १८७२ के पहले स्कूल जाने योग्य बच्चों में फी सैकड़े २८ स्कूलों में पढ़ते थे। जो प्रायः हमारे इस समय के औसत से ८ फी सैकड़े अधिक थे। २९ वर्षों में औसत बढ़कर ९२ हो गई और २८ वर्षों में शिक्षा शुल्क रहित और अनिवार्य की गई।

बड़ौदा राज्य मे शिक्षा शुल्क-रहित और अनेक अंशों में अनिवार्य है। और लड़कों को औसत सौ मे सौ है। ट्रावनकोर मे लड़कों को औसत फी सैकड़ा ८१.१ और लड़कियों की ३३.२ है। मैसूर मे लड़कों की ४५.८ और लड़कियों की ९.७ फी सदी है।

स्कूल जाने योग्य अवस्था के प्रत्येक बच्चे की शिक्षा के लिये बड़ौदा ।≈)॥ खर्च करता है और ब्रिटिश भारत ≠)॥ १८८२ और १९०७ के बीच शिक्षा-व्यय में ५७ लाख की वृद्धि की गई। इतने दिनों मे भूमि-करमे ८ करोड़ सैनिक व्यय मे १३ करोड़, सैनिक व्यय मे ८ करोड़ की अधिकता हुई। और रेलों के लिये पूँजी-रूप से १५ करोड़ रुपये खर्च किये गये। इन आंकड़ों पर स्वर्गीय गोखले ने एक बार व्यंगोक्ति करते हुए हिसाब लगा कर बताया था कि यदि जन-संख्या न बढ़े तो अब से ११५ वर्ष बाद प्रत्येक लड़का और ६६५ वर्ष बाद प्रत्येक लड़की स्कूल में होगी।

अब स्वास्थ्य सुधार की बातों को लीजिये। प्लेग, हैजा और मलेरिया के प्राधान्य से पता चलता है कि शहर और देहात सर्वत्र स्वास्थ्य-सुधार प्रबन्ध का अभाव है। भारत में प्रत्येक मनुष्य की परमायु का औसत बहुत ही कम अर्थात् २३.५ होने के कारणों में यह अभाव भी एक कारण है। इंगलैंड में परमायु ४०, न्यूजीलैण्ड में ६० वर्ष है। रोगी की चिकित्सा के मार्ग में मुख्य कठिनाइयाँ ये हैं कि विदेशी चिकित्सा विशेष प्रणाली को-विशेष कर गाँवों में उत्तेजन दिया जाता है। और भारतीय चिकित्सा पद्धति को कोई सहायता नहीं दी जाती। सरकारी अस्पताल, सरकारी दवाखाने और सरकारी डाक्टर सभी विदेशी चिकित्सा पद्धति वाले होने चाहिये। आयुर्वैदिक और यूनानी दवाएं अस्पताल, दवाखाने तथा वैद्य हकीम मान्य नहीं समझे जाते। और वैद्यक तथा आयुर्वेदिक, यूनानी पद्धतियों के चिकित्सकों की सहायता करना 'निन्द्य' समझा जाता है। ट्रावनकोर राज्य ७२ वैद्य शालाओं को सहायता दे रहा है। इन में १६१४-१५ में पेलोपेथिक अस्पतालों की अपेक्षा २२ हजार अधिक रोगियों की चिकित्सा की गई थी। सरकार यह भली भाँति जानती है कि वह पेलोपैथी दवा और डाक्टरों को अपनी देहाती प्रजा की सहायता के लिये पहुँचाने में पूर्ण असमर्थ है। और यह भी उससे छिपा नहीं है कि उस ही को

सदी १५ प्रजा को वैद्य, हकीम देशी पद्धति से बहुत ही सस्ते मे आरोग्य-दान करते हैं। फिर भी वह उनको योग्य बनाने या और कोई सहायता देने में बराबर लापरवाही दिखाती रही है। वैज्ञानिक संसार बराबर ऐलोपैथी को अप्राकृत, भ्रान्त और स्वास्थ्य-रक्षा मे असमर्थ साबित कर रहा है, पर सरकार उसी पर प्रजा की जान और स्वास्थ्य का उत्तरदायित्व सौंप कर निश्चिन्त बैठी है।

कृषि की बात और भी गम्भीर है। १९११ की मनुष्य गणना में २१ करोड़, ८३ लाख किसान बताये गये हैं। किसानों की भयंकर दरिद्रता की बात सभी पर विदित है। सर दीनशाह वाचा उनके दिनों दिन बढ़ते ऋण-भार पर गत २० वर्षों से बराबर चिल्लाते रहे हैं तो भी ऋण बढ़ने के साथ ही साथ कर में वृद्धि हो रही है। अभी जैसा कहा गया है—२५ वर्षों में माल गुजारी में ८ करोड़ रुपये बढ़े हैं। इसके सिवा स्थानिक कर नमक आदि पर और भी कितने ही कर हैं। नमक का कर गरीब लोगों को बहुत बड़े कष्ट का कारण है। पिछले बजट में ९० लाख रुपये बढ़ाया गया था। इस दरिद्रता का अवश्यम्भावी परिणाम यह हुआ है कि लोगों को बुरे खाद्य खाने पड़ते हैं जिस के कारण उनकी जीवन शक्ति कम होगई है और वे रोगों का सामना नहीं कर सकते। उनकी आयु क्षीण हो गई है और बालकों की मृत्यु-संख्या बहुत बढ़ गई है

सर चारलस ईलियट के कथनानुसार ७ करोड़ और सर विलियम हंटर के कथनानुसार ४ करोड़ मनुष्यों को जीवन भर में एक समय भोजन कर दिन बिताना पड़ता है। यदि अंग्रेज़ों के १०० वर्ष शासन करने के बाद भी यही दशा है तो अंग्रेज़ यह दावा नहीं कर सकते कि भारत में उनका उद्देश्य भारतवासियों का हित करना है।

किसानों के अनेक कष्ट हैं। गांव के निवासियों का कठिनाइयों से अनभिज्ञ कानून बनाने वालों ने जंगल के जो कानून बनाये हैं उन से किसानों को बड़े कष्ट झेलने पड़ते हैं और कुछएक स्थानों पर जंगल-सम्बन्धी पंचायतें बनी हैं। जहां परीक्षा की गई है वहां उनका परिणाम अच्छा हुआ है कहीं कहीं तो बहुत ही अच्छा हुआ है। उनके पशुओं के लिये गोचर-भूमि की कमी, कम उपजाऊ खेतों के लिये हरी खाद का अभाव, जंगलों के चारों ओर बाड़े का न होना जिस के कारण चरते हुए पशुओं के भटक जाने से उनका कांजी-हाउस में पड़ना और फिर उन्हें दाम देकर छुड़ाना, ऐसे अपराधों के लिये दण्ड और जुर्माना भुगतना जिन्हें वे बिल्कुल नहीं समझते हैं, औज़ारों और उनकी मरम्मत के लिये लकड़ी तथा ईंधन का अभाव, पानी का अनिश्चित विभाग—ये ऐसे कष्ट हैं जिन के सम्बन्ध में गांवों और स्थानिक परिषदों में विचार हुआ करते हैं। आर्म्स ऐक्ट के कारण जंगली जानवरों और

जंगली आदमियों से अपनी रक्षा करने के लिये उनके पास शस्त्र न होने से उन्हें बड़े कष्ट उठाने पड़ते हैं। न्याय और शासन-विभागों के एक होने के कारण प्रायः न्याय पाना दुर्लभ होता है। और सदा बहुत अधिक समय और धन की आवश्यकता हुआ करती है। गाँवों के सरकारी कर्मचारी ग्रामवासियों के बदले स्वभावतः-तहसीलदारों तथा कलक्टरों को प्रसन्न करने का प्रयत्न किया करते हैं। क्योंकि वे ग्रामवासियों के सामने किसी तरह उत्तरदाता नहीं हैं। दो पक्षों में कलह बढ़ता है, क्योंकि उन दोनों को एक तीसरे व्यक्ति की शरण लेनी पड़ती है। वह यदि उच्च पद पर है तो उस की ठकुर-सुहाती करके और यदि निम्न पदस्थ है तो घूंस दे कर खातिर की जा सकती है। और दोनों अवस्थाओं में हाथ जोड़ने, दीन वचन कहने तथा उस की प्रशंसा से कृपा प्राप्त की जा सकती है।

सभी समृद्ध देशों में कृषि के साथ ही शिल्पकला का भी स्थान है और एक को दूसरी से परस्पर सहायता मिल सकती है। आयर्लैण्ड की अत्यन्त दरिद्रता, तथा बाहर जा बसने के कारण आधे से अधिक उस की जनता का ह्रास, ग्रेट ब्रिटेन द्वारा उसके ऊनी व्यापार के नाश तथा उस के फल-स्वरूप केवल खेती पर उसके अवलम्बन के प्रत्यक्ष परिणाम थे। वैसे ही कारण से, वैसा ही पर उससे बहुत बड़ा दुष्प

यहाँ भी उपस्थित हुआ है। यहां भारत के लिये एक नया और बड़ा परिवर्तन यह हो रहा है कि भूमि रहित श्रेणी के लोगों का वृद्धि हो रही है जिस से आर्थिक संकट उपस्थित होने का भय है। यह बात इम्पीरियल गजेटियर में १८९१ और १९०१ की जन संख्याओं की रिपोर्टों की तुलना में कही गई है। मेहनत मजूरी करने वाले साधारण मजूर खेतों के काम में केवल फसल के वक्त ही रक्खे जाते हैं और जब खेती के काम का भीड़ नहीं होती तब कुछ लोग व्यापारिक केन्द्रों में अस्थायी रूप से काम करने लगते हैं। फसल कटने के समय आयरिश मजूरों की इंग्लैण्ड में बड़ी भरमार हो जाती है।

एक व्याख्यान में स्वर्गीय गोखले ने कहा था—

“इंगलैंड की वार्षिक आय के औसत का अनुमान फी आदमी ४२ पौण्ड है। हमारे यहां एक मनुष्य की वार्षिक आय का औसत सरकारी अनुमान से २ पौंड और गैर सरकारी अनुमान से १ पाउंड है। इंगलैंड आदमी पीछे गैर देशों से १३ पौंड का माल मँगाता है और हम ५ शिलिंग का। इंगलैंड की सेविंग्स बैंक में कुल १४ करोड़, ८० लाख पौंड, ट्रस्टी सेविंग बैंकों में ५ करोड़ २० लाख पौंड जमा हैं। पर यहाँ से सतगुने आदमी होने पर भी हमारे सेविंग बैंकों में केवल ७० लाख पौंड जमा है। इस में दशांश से कुछ अधिक भाग यूरोपियनों का है। आप के यहाँ ज्वाइंट स्टाक कम्पनियों की

कुल वसूल हुई पूंजी कोई १ करोड़ ६० लाख पौंड है और हमारी पूंजी २ करोड़ ६० लाख पौंड भी नहीं है। और इस में भी अधिकांश यूरोपियनों की हैं। हमारे देश के फी सैकड़े ८० लोग खेती पर बसर करते हैं और कुछ समय से खेती भी धीरे धीरे बर्बाद हो रही है। भारतीय किसान इतने गरीब और ऋणी हैं कि वे खेती की पैदावार बढ़ाने के लिये रुपया नहीं खर्च कर सकते। जिस का फल यह हुआ है कि भारत के एक बड़े भाग में खेती की—जैसा कि सर जेम्स केयर्ड ने ५२ वर्ष से प्रथम कहा था कि वह भूमि के निर्बीज करने का साधन हो रही है—उपज नियमित रूप से घटती जा रही है और जहां इंगलैंड में फी एकड़ कोई ३० बुशल नाज पैदा होता है वहाँ भारत में प्रायः ८-६ बुशल होता है।"

इन कारणों को देखते यह मुक्त कण्ठ से कहा जा सकता है अंग्रेज सरकार प्रजा को शिक्षा, स्वास्थ्य तथा समृद्धि देने में अयोग्य प्रमाणित हुई है। स्थानिक स्वराज्य की बात देखिये। लार्ड मेयोके समय मे (१८६६—७२) अधिकार विभाग के लिये—जिसे कीमने 'होमरूल' (!) कहा है—कुछ चेष्टा की गई। और उस की नीति अर्थ-सम्बन्धी अधिकार विभाग की न थी। लार्ड रिपन के समय भी कुछ प्रयत्न किये गये। और उन के प्रयत्न को कीमने होमरूल का कीटाणु प्रवेश करना 'आन्दोलना' बताया था।

कौंसिलों के सम्बन्ध में एक सदस्य ने कहा कि वे "ग्लारी फाइड डिबेटिंग सोसाइटी" ( गौरव-युक्त वादानुवादकारिणी सभा ) हैं। भारतीय सदस्यों के प्रस्ताव संशोधन की युक्तियों की जो दुर्गति—अवहेलना—लाञ्छना इन कौंसिलों में होती है, उसे देखते ही मैं यह सोचते सोचते हैरान होता हूँ कि कसे निर्लज्ज वे सज्जन हैं जो इतनी दुत्कार तिरस्कार पाने पर वहीं जमे रहते हैं।

पब्लिक सर्विस मे कर्मियों के विषय मे कमीशन की रिपोर्ट ही काफी है। इन सब से अधिक विचारणीय विषय एक और है। वह शासन-व्यय की भयङ्कर वृद्धि है। सन् १९१७ का राजस्व अनुमान ८ करोड़, ९१ लाख, ९९ हजार, ६ सौ पौंड था और खर्च ८ करोड़, ५५ लाख, ७२ हज़ार १०० पौंड था।

यह अंग्रेजी सुगठित शासन की भीतरी दशा है जिस पर गम्भीर विचार करने से प्रत्येक व्यक्ति अच्छी तरह समझ जायगा कि 'अंग्रेजी शासन भारत के लिये श्रेयस्कर नहीं है और भारत का इस से इस ढंग से कभी श्रेय न होगा।'

सरकारी अफसर जिनके हाथ में शासन की पूरी पूरी लगाम है और रिपोर्ट तैयार करने तथा नित्य कामों में वर्षों अभ्यास से पुष्ट हो गए हैं, उन के दिमाग का यही ताना-बाना है, यही उन का धन्धा है। बहुधा उन के लिए विचार कुछ

नाज़ुक विषय पर समाज की रीति और गृहस्थों की परिस्थिति का ख्याल करके कानून बनाने चाहिये थे, पर उस ने वैसा नहीं किया, और यह विषैला दोष अंग्रेज़ों की शासन पद्धति पर अक्षम्य है।

यह कहा जा सकता है कि स्त्रियों की स्वच्छता को हरण करना अत्याचार था। इस लिये बालिग स्त्रियों को पुरुषों ही की तरह उन की इच्छानुकूल स्वातन्त्र्य देना चाहिये। दूसरा बात बचाव में यह कही जा सकती है कि बलात्कार के कठोर दण्ड कानून से है। यहाँ मैं यह कहता हूँ कि बलात्कार अत्याचार या जुर्म है और धोखा, छल, फुसलाहट, व्यभिचार ये पाप हैं। जुर्म से पाप का दर्जा प्रबल है। इसी पाप के लिये सरकारी कानून ने रीतियाँ बना दी हैं। फिर यदि स्त्री किसी पुरुष पर बलात्कार करे तो कानून में उसका कुछ प्रबन्ध नहीं है। हालाँ कि ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है। साथ ही यह बात भी याद रखनी योग्य है कि उत्तराधिकार के बहुत कम अधिकार मृत पति का विधवा को कानूनन दिये गये हैं। मनु और आपस्तम्भ सभी स्त्रियों को पति की और कन्याओं को पिता की सम्पत्ति के अंश का मानते हैं। पर अंगरेजी कानून में ऐसी विधवायें सती साध्वी हैं, मृत पति के नाम पर पवित्र जीवन काटती हैं, अत्याचारी सास, ससुर, देवर पिता

से सुरक्षित रह कर मृत पति की ( जो परिवार में सम्मिलित हो ) सम्पत्तिका कुछ भी उत्तराधिकार नहीं है। आपस्तम्भ माता के स्त्री धन ( आभूषण आदि ) का उत्तराधिकार उसकी कन्या को देता है। मनु ने कुमारी बहनों के लिये प्रत्येक भाई को अपने हिस्से का चौथाई देने का विधान किया है। ( ६. ११८ ) इसके सिवा किसी भी अनाचार से यदि कोई पुरुष किसी को फुसला कर व्यभिचार करे और उस व्यभिचार की सन्तान को असहाया स्त्री के सिर पटके तो ऐसी नाज़ुक स्थितियों के समय मनस्वी आर्य कानून निर्माताओं ने अतिशय क्षमा और उदारता पूर्वक उन निरपराध सन्तानों को पुत्र कह कर उनके अधिकारी मर्यादा बाँधी है—जिसका भोग रेज़ी युग और तामसी कानूनों में कहीं ज़िक्र नहीं है। और केवल जिसके ही कारण व्याभिचार होकर गर्भपात और भ्रूण हत्या के घृणित और रोमांचकारी काण्ड नित्य होते हैं। यहाँ यह बात भी याद रखने योग्य है कि इंग्लैण्ड में जहाँ व्यभिचार को पाप नहीं माना जाता, व्यभिचार की सन्तान के लिये कानून कुछ सुभीते कर दिये गये हैं। और उस दोष का आभास समझ कर यहाँ की जनता ने भी कुछ प्रबन्ध और सुविधाएँ उनके लिये कर दीं।

...पोष जो इस से ऊपर कह है वह मादक द्रव्यों और ... न रूप से प्रचार करने देने के सम्बन्ध में

नाजुक विषय पर समाज की रीति और गृहस्थों की परिस्थिति का ख़याल करके कानून बनाने चाहिये थे, पर उस ने नहीं किया, और यह विषैला दोष अंग्रेजों की शासन पद्धति पर अक्षम्य है।

यह कहा जा सकता है कि स्त्रियों की स्वतन्त्रता को हरण करना अत्याचार था। इस लिये बालिग स्त्रियों को पुरुषों ही की तरह उन की इच्छानुकूल स्वातन्त्र्य देना चाहिये। दूसरी बात बचाव में यह कही जा सकती है कि बलात्कार के कठोर दण्ड कानून से है। यहाँ मैं यह कहता हूँ कि बलात्कार अत्याचार या जुर्म है और धोखा, छल, फुसलाहट, व्यभिचार ये पाप हैं। जुर्म से पाप का दर्जा प्रबल है। इसी पाप के लिये सरकारी कानून ने रीतियाँ बना दी हैं। फिर यदि स्त्री किसी पुरुष पर बलात्कार करे तो कानून में उसका कुछ प्रबन्ध नहीं है। हालाँ कि ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है। साथ ही यह बात भी याद रखनी योग्य है कि उत्तराधिकार के बहुत कम अधिकार मृत पति की विधवा को कानूनन दिये गये हैं। गौतम, वशिष्ट, मनु और आपस्तम्ब सभी स्त्रियों को पति की ... कन्याओं को पिता की सम्पत्ति के अंश का ...े हैं। पर अंगरेजी कानून में ऐसी विधवायें साध्वी हैं, मृत पति के नाम पर पवित्र जीवन करती हैं, अत्याचारी सास ससुर, देवर पिता आदि

आ दिन भर पसीना बहाकर कुछ पैसे पैदा करते हैं और शाम का शराब की दूकान पर मोरी का पानी पी कर छूछे हाथ घर आते हैं। और उनके स्त्री-बच्चे जो दिन भर मेंह का सो आशा लगाये बैठ रहते थे कि बाबा कमा कर पैसे लायेंगे तो रसोई बनेगी, देखते हैं बाबा आये हैं, पर दूसरे ही क्षण में उन की वह हंसी बरसाती धूप की तरह उड़ जाती है, जब वे यह देखते हैं कि बाबा आये तो हैं पर वे होश, पागल और पशु बने हुए हैं—गांठ के पैसे का पिशाच पा आये हैं—मोरी के पानी, वन्टी और मैले में शरीर भरा है। क्या जिस प्रजा के घरों में ऐसे भयंकर दृश्य नित्य हों वह प्रजा किसी सभ्य राजा के शासन के अधीन कहला सकती है ? कदापि नहीं।

कैसी दिल्लगी की बात है कि जहाँ एक तरफ शराब के दूकानदारों को सरकार ने हुक्म दे दिया कि बाजारों में दूकानें खोलो और खुल-खुला यह गन्दा घृणित ज़हर बेचो और तमाम प्रजा को यह स्वातन्त्र्य दे दिया कि जिसका जी चाहे पीओ और जितना जी में आये पीओ।

यहाँ तक तो काम कायदे सिर हुआ, पर इस के आगे एक और काम हुआ कि सरकार ने पुलिसवालों को डंडे लेकर खड़ा कर दिया और उन्हें कह दिया कि डंडा लिये तैयार खड़े रहो ! जब कोई इस भयंकर दूकानमें घुसेतो मत रोको। जब उसे दूकानदार यह भयंकर ज़हर दे तब भी मत रोको। और

है। मादक द्रव्यों के सम्बन्ध में गृहसूत्र, स्मृति औरनीतियों में तिरस्कार-पूर्ण वाक्यलिखे हैं और इन वस्तुओंका बेचना अत्यन्त निन्दनीय था चन्द्रगुप्त के शासनमें मदिरा बेचने का निषेध था इन सब बातों पर विचार न करके मुख्य बात जो बिना किसी संकोच के कही जा सकती है यह है कि मनुष्यत्वके नाते मादक द्रव्यों को बेचाने देना न्यायतः महान् घोर अन्याय है सम्भव है सरकारके पिट्ठू अनेकों दार्शनिक कारण बताकर यह सिद्ध कर दें कि शराबियोंका शराब पीना, अफ़ीमचियों का अफीम खाना भगड़ियों का भंग पीना रोकना उन के स्वातन्त्र्य मे बाधा देना होगा। यहाँ इस लचर दलील के सम्बन्ध में इतना ही कहा जा सकता है कि सरकार कैदियों को ये अनावश्यक द्रव्य नहीं देती है। तब यही एक कारण हो सकता है कि सरकार को महकमे आबकारी से करोड़ों रुपये का फायदा है और सरकार उस के लालच को नहीं रोक सकती। उसे अपने हलवे मांडे से काम है—चाहे वह प्रजा की आबरू को नालियों में सड़ाने से प्राप्त हो या उन्हें भर जवानी में कुत्ते की मौत मरने के उपायों से प्राप्त हो।

धनी ऐयाश लोग मैंने देखे हैं जो गटागट बोतलें उड़ा जाते हैं और उन्मत्त हो कर नौकर-चाकर, बच्चों और स्त्रियों को पशु की तरह मारते और अहमक की तरह निर्लज्ज गाली बकते हैं। पर इन से भी अधिक उन अभागे गरीबों की भयंकर दशा है

सभी निकम्मे और दूसरे व्यवसायों की योग्यता से हीन पुरुष हैं। अवैध रूप से इस मामलों में बड़े २ मगरमच्छ छोटी २ मछलियों को निगल जाते हैं उनकी बात में इस समय नहीं कहूँगा, मैं केवल उस सरकारकी तरफ ऊगली उठाता हूँ जिसने केवल खासी आमद होने के लिये ऐसे कानून बना दिये हैं जिसके कारण कुछ भयंकर दूकीदार या छाकटे चलते पुर्जे खुल्लम-खुल्ला जुआ खेल कर नौ के सौ करते हैं। या सब कर रो बैठते हैं। और यह वस्तु प्रजा को सस्ती और महंगी मिलना हर तरह उन्हीं के आधीन है। गेहूँ, रुई, सोना, चाँदी का तो सट्टा चलता ही है। कपड़े की मिलों का और दूसरे ऐसे कारखानों का,—जिनसे सर्व साधारण के नित्य काम में आने वाली सामग्री तैयार होती है—उनके शेअरों का भी सट्टा इतने ओर से चलता है कि वस्तुओं के दामों में भय कर घट बढ़ होती रहती है। इसका सीधा साधा परिणाम यह है कि जो धोती का जोड़ा मील में ३) रुपये का तैयार होता है उसे ये जुआखोर आपस में झूठ-मूठ ही खरीद बेच कर उस पर ३) नफा कमा लेते हैं और तब वह ६) का गरीब प्रजा को बेचा जाता है जिसे कि उसकी सख्त जरूरत है। अर्थात् ये जुआरी जो लाभ उठाते हैं इसका जुर्माना गरीब भाई देते हैं और सरकार मिल मालिकों से—उसके कच्चे माल के व्यापारी से इन स्वार्थी सट्टेबाजों से—अनेक टेक्सों के बहाने से अपना

कोई धुंआ धार पीये तब भी मत रोको। परन्तु यदि पी-पीकर कोई मतवाला हो जाय तो उसे पकड़कर हमारे पास ले आओ। मानो सरकार को शराब पीने से मतवाले होनेके अवश्यम्भावी परिणाम की खबर ही नहीं है। और मानो सरकार की दृष्टि में शराब पी कर पागल होना कोई आस्मिक घटना है। वाह! कैसा सुन्दर शासन है—कैसी सुन्दर व्यवस्था है! चोर से कहें चोरी कर, साह से कहें पकड़ लो। बलिहारी!

अब लीजिए जुए की बात। इसके अनेक रूप हैं। सट्टा, नीलाम, लाटरी ठेका आदि। इस के सम्बन्ध वाले कानून इतने स्वार्थमय और छल पूर्ण हैं कि वे सभ्यता के नाम पर लाञ्छन लगाते हैं। वे प्रजा से नागरिकता क अधिकारों को छीनते हैं। इन सब पद्धतियों को मैं जुआ इस लिये कहता हूँ कि वस्तु का निश्चित मूल्य एक नहीं रहता। दूसरे घटना या प्रारब्ध वश ही एक व्यक्ति को वह वस्तु बहुत ही कम रुपये में मिल जाती है और वस्तु का स्वामी उसकी पूरी से अधिक ही रकम—जिसके लिये कानून में कोई बन्धन नहीं है—बहुत से ऐसे लोगों से ले लेता है जिन्होंने प्रारब्ध या घटना-वश ही उस वस्तु के उसी अल्प दाम में मिलने की आशा में यह धारणा करके कि पैसा जायगा या माल आयगा, खर्च किया था। दूसरा स्वरूप और भी भयानक है, वह सट्टा है। यह सट्टा प्रायः सभी लाभकारी वस्तुओं का होता है। इसके करनेवाले प्रायः

सभी निकम्मे और दूसरे व्यवसायों की योग्यता से हीन पुरुष हैं। प्रबंध रूप से इन मामलों में बड़े २ मगरमच्छ छोटी २ मछलियों को निगल जाते हैं उनकी बात में इस समय नहीं कहूँगा, मैं केवल उस सरकारकी तरफ उंगली उठाता हूँ जिसने केवल खासी आमद होने के लिये ऐसे कानून बना दिये हैं जिसके कारण कुछ भयंकर पूंजीदार या छाकटे चलते पुर्जे खुल्लम-खुल्ला जुआ खेल कर नौ के सौ करते हैं। या सब कर रो बैठते हैं। और यह वस्तु प्रजा को सस्ती और महंगी मिलना हर तरह उन्हीं के आधीन है। गेहूँ, रुई, सोना, चाँदी का तो सट्टा चलता ही है। कपड़े की मिलों का और दूसरे ऐसे कारखानों का,—जिनसे सर्व साधारण के नित्य काम में आने वाली सामग्री तैयार होती है—उनके शेअरों का भी सट्टा इसी ओर से चलता है कि वस्तुओं के दामों में भय कर बढ़ बढ़ होती रहती है। इसका सीधा साधा परिणाम यह है कि जो धोती का जोड़ा मील में १) रुपये का तैयार होता है उसे ये जुआखोर आपस में झूठ-मूठ ही खरीद बेच कर उस पर ३) नफा कमा लेते हैं और तब यह ४) का गरीब प्रजा को बेचा जाता है जिसे कि उसकी सख्त जरूरत है। अर्थात् ये ज्वारी जो लाभ उठाते हैं इसका जुर्माना गरीब भाई देते हैं और सरकार मिल मालिकों से—उसके कच्चे माल के व्यापारी से इन स्वार्थी सट्टेबाजों से—अनेक टैक्स के बहाने से अपना

भरपूर भाग इस पाप कमाई से वसूल करती है।

गत महायुद्ध में जब समस्त प्रजा आहार और आवश्यक सामग्री के घोर कष्ट में पड़ी और इन आपापन्थियों ने हाहाकार करती हुई प्रजा पर कुछ भी तरस न खाकर खूब अपनी गांठ मोटी की और निर्दयता पूर्वक प्रजा को मनमाना लूटा तब सरकार का जहाँ ऐसे कानून बना कर—जिनसे इनका स्वेच्छाचार रुके—इस अन्धेर को रोकना चाहिये था वहाँ उसने ऐसे कानून बनाये कि इस कमाई का आधा हमें दो। ठीक उसी तरह जैसे किसी ज़माने में असभ्य और मूर्ख राजा चोरों से अपनी चौथ लिया करते थे। मैं नहीं समझता कि किसी राजा के लिये इससे अधिक क्या बदनामी की बात हो सकती है कि उसकी प्रजा के कुछ स्वार्थी लोग उसी प्रजा के गरीबों का खून चूसते हैं और सरकार उसमें पूरा हिस्सा पाकर सन्तुष्ट हो जाती है। छिः। छिः !!

अब मैं व्यापारिक नीति की तरफ पाठकों का ध्यान आकर्षित करता हूँ। जिसमें सरकार का पातक पूर्ण अपराध समझता हूँ। अपने विदेशी यारों को उसने तैयार माल भेजने के पूरे पूरे स्वतन्त्र और अधिकार दिये हैं। उनसे भरपूर टेक्स रूपी रिश्वत पाकर उसने प्रजा-रक्षा का पुण्य कर्त्तव्य मानो बेच दिया है। अकेले जापान ही की बात लीजिये। इसने जैसे धवले के व्यापारी डाके डाले हैं और यह जितना बेईमान,

झूठा और छली है शायद ही कोई होगा। सारे बाजार में जापानी वस्तु कमजोर और निकम्मी होने के कारण बदनाम है, पर इस कंगले देश के मुफ़लिस लोगों ने इतनी सस्ती मजूरी में यह रद्दी माल दिया है कि हमारे अभागे भाई सस्तेपन के सामने उसके रद्दीपन की कुछ परवा नहीं करते। पिछली बातों का जिक्र नहीं करता। असहयोग के आन्दोलन के कारण जो खादी के वस्त्रों का व्यवहार चला बस जापान ने खादी बना कर भेज दी। और उस पर स्वदेश में बना माल लिख दिया! क्या कोई भी स्वाभिमानी गैरत वाला देश खुल्लम-खुल्ला इतना झूठ और बेईमानी कर सकता है।

ग्रामोफोन, हारमोनियम, साइकिल, खिलौने, रंग, वार्निश और प्रत्येक आवश्यकता की वस्तु उसने तत्काल हमारे सामने रख कर हमारे पैसे छीन लिये हैं। छीने क्या ठग लिये हैं, क्योंकि व्यवहार से हम देखते हैं कि प्रत्येक वस्तु रद्दी और वाहियात है। मैं यह पूछता हूँ कि इस धोखे से देश की रक्षा करना क्या सरकार का काम नहीं था? झूठे मालों पर सेन्सर बैठाना, उन्हें जाल के कानून से पकड़ना क्या सरकार का न्याय पूर्ण कर्तव्य न था? पर नहीं, शक्तिशाली और हाकिमी की डींग हाँकने वाले अंग्रेजों को स्वार्थ, लालच और सुद-परस्ती ने अन्धा कर दिया है—वे पैसे के लोभ से अपनी इस बदनामी और पाप व्यवहार को लापरवाही से कर रहे हैं। यही

बास और देशों के सम्बन्ध में कही आ सकती है। साथ ही ये कानून भी नहीं भुलाये जा सकते जो देश के व्यापार, शिल्प और उद्योग-धन्धों को उकसने नहीं देते हैं। भूत ब्रिटिश सरकार ने विलायत में हिन्दुस्तान का कपड़ा पहनना कानूनन जुर्म बताया था। और ८० नम्बर से अधिक का सूत कातना भारत में कानूनन जुर्म करार दिया गया। इसी तरह कोई भी आविष्कार को पेटेन्ट करने के कानून अत्यन्त स्वार्थ और छल-पूर्ण हैं। इन सब के साथ हम शर्तबंधे कुलियों के कानूनों का भी नाम लेना नहीं भूल सकते जिसे हम अपने सिर पर लात मारने के समान अपमानकारक समझते हैं। और जो सरकारी पद्धति का लाञ्छनीय दोष है। कानूनकारों और जमींदारों से सम्बन्ध रखने वाले कानूनों पर बहुत ही गम्भीरता से विचार करने की जरूरत है। जिससे यह पता लगेगा कि ये कानून या तो जान बूझ कर किसी अत्याचारी राजा ने स्वार्थान्ध होकर बनाये हैं या उसे अपनी प्रजा की परिस्थितिका कुछ ज्ञान नहीं है। पर मुझे यह प्रकट करते खेद होता है कि वे कानून ठीक अपने स्वरूप में बड़ी खोज और जाँच के पीछे अच्छी तरह इरादा करके बनाये गये हैं और गरीब किसानों का सत्यानाश अत्यन्त दृढ़ता-पूर्वक किया जा रहा है। मैं यह भी कहने में संकोच की आवश्यकता नहीं समझता हूँ कि यदि कच्चा माल तैयार कराने में भारत सरकार को बाहरी कारखानेवालों से गहरी

रकम मिलने का लालच न होता तो यह इन अभागे किसानों को भी उन्हीं संखिये की गोली से चूहे की तरह मार डालती जिससे पिछले दिनों में हतभाग्य व्यापारी और शिल्पी मार फेंक गये थे। चीन से रुपये झटपने के ही लिये तो सरकार ने अफीम की खेती को उत्तेजन दिया और खेती कराई। विला-यत के भीखे म ग के व्यापारियों से टेक्स में मोटी रकम ऐंठने के लिये ही भारत के नील के व्यापार का पटरा कर डाला और अब लंकाशायर और मैन्चेस्टर के भेड़िये व्यापारियों की डकैती में भरपूर हिस्सा पाने के लिये ही सरकार लम्बे धागे की कपास बोने के लिये भारत के बे-समझ किसानों को आँखपट्टी दे रही है।

यह बात बहुत प्रथम से कहा जा रही है कि किसानों के ऊपर सरकारी लगान का भार इतना है जितना किसी भी अन्य और धनी देश के किसानों पर नहीं है और तहसीलदार जमींदार और बनियों के शु गलों में वह इस तरह फ सा पड़ता है कि किसी तरह भी उसका उद्धार होना असम्भव है। रुपया चुका सकने पर—चाहे वह सरकारी हो चाहे बनिये का या जमींदार का—कोई कानून उसकी मदद करने वाला—उनकी रक्षा की हिमायत करनेवाला और उसे उबारने वाला—नहीं है। दीन, अभागा, असहाय किसान किसी भी कारण से रकम अदायगी न देने से अवश्य जेल में ठूंसा जायगा और

अवश्य उसके हल-बैल-बर्तन भी नीलाम करा लिये जावेंगे।

नहरों के सुभीते बढ़ाने की अपेक्षा रेलों के सुभीते बढ़ाये जा रहे हैं कि कब इन के खेतों में इन की सुबह की कमाई पके और कब हम उसे लेकर भागें।

अब न्याय और शासन की बात पर विचार कीजिए। शासन करने वाले हाकिमों के साथ प्रजा के लोगों से व्यवहार में कुछ ऐसे पेंच पड़ जाना असम्भव ही नहीं वरन अनिवार्य है जिन में न्याय की आवश्यकता पड़ती है ऐसी दशा में शासक और न्यायाधीश का एक होना कभी न्याय नहीं हो सकता। क्योंकि बहुत सी हालतों में फर्यादी शासक पर ही फर्याद करेगा और शासक को मुद्दाअले के रूप में आना पड़ेगा। ऐसी दशा में वही यदि न्यायाधीश बन कर बैठेगा तो कभी न्याय की आशा नहीं की जा सकती है। मौर्य राजाओं के राजत्व में न्याय और शासन के महकमे अलग अलग थे। मुगल राजाओं के यहाँ भी यही बात थी। खेद की बात है कि उदारता और पद्धति की शेखी बघारने वाले पश्चिम के इन घमण्डी लोगों के राजत्व में ऐसे दोष विद्यमान हैं जिन्हें अर्द्ध सभ्य ( उन की राय में ) काल के काले हिन्दुस्तानी राजे—जिन्हें अब दुर्भाग्य से शासन की तमीज़ नहीं रही है—समझ सके और काम में ला सके थे।

अन्त में मैं इस अध्याय को समाप्त करते हुए कामन शब्द

का जो अपमान अंग्रेजी शासन में हुआ है उसकी तरफ़ पाठकों का ध्यान आकर्षित करता हूं। अंग्रेजी राज्य में कानून का अर्थ है नियम। और उस में घोर छल और प्रमाद है। वह रबर की तरह खिच और सिकुड़ सकता है। इस का फल यह हुआ है कि सारे भारतमें यह अपवाद फैला हुआ है कि अंग्रेजी कानून में सत्य की जीत नहीं होती। अंग्रेजी अदालतों में आकर सत्य बोलने वाला मूर्ख है। अंग्रेजी अदालतके आंखें नहीं हैं,कान हैं। वह देखती नहीं, सुनती है। और अदालत में जाना किसी भले मानसका नहीं,किसी गुण्डे शोहदेका काम है, इत्यादि। मैं नहीं कह सकता कि किसी भी शासन पद्धतिकी इससे अधिक और क्या लाञ्छना, तिरस्कृति और अवहेलना हो सकती है।

---

# ग्यारहवां अध्याय

——:o:——

## अंगरेजी शासन में प्रजा की दुर्दशा

किसी भी शासक-मण्डल के कानून-निर्माता यदि कानू निर्माण करते समय अपने और प्रजा के स्वार्थों में भेद समझ और अपनी स्वार्थ रक्षा के लिये कानून की घड़न में राजनैति छल प्रयोग करें तो प्रजा की दुर्दशा के लिये यही बहुत कुछ है

पिछले अध्याय में हमने इस बात पर प्रकाश डाला है कि अंग्रेजी शासन-पद्धति के दोष कैसे हैं और अंग्रेजी कानूनों में कितनी कमी, लापरवाही और राजनैतिक छल है—और ये ही कारण प्रजा की दुर्दशा को कम नहीं हैं। और इन्हीं केवल कारणों से प्रजा जिस विपत्ति में पड़ी है और जैसी मारामारी हो रही है वह विचारने योग्य है। तिस पर कुछ गुप्त रीतियां हैं जिन का, क़ानून से भी उतना सम्बन्ध नहीं है और जिनका अभिप्राय यह है कि भारतीय प्रजा कभी न उठने पाये—कभी न योग्य होने पाये—कभी न सशक्त और अस्त्र-तेज से पूर्ण न होने पाये।

ये नीतियाँ यदि खुल्लम खुल्ला कानून की शकल में धारा सभा में पास करा दी गई होतीं तो अब तक कब को अंग्रेजी शासन-पद्धति संसार में बदनाम हो गई होती । पर अंग्रेज़ बुद्धिमान—दुनियादार जाति है, उन्हों ने भला नहीं चाहो है कि वे अपनी खुल्लम खुल्ला बदनामी को ऐसे फूहड़ ढंग से फैल जाने देंगे। किन्तु कोई भी विचार-शील सज्जन जो भारत में इस सिरे से उस सिरे तक घूमेगा, भारत को ध्यान से देखेगा, वह यह अवश्य कहेगा कि भारत किसी ईमानदार राजा की प्रजा नहीं है । जिस प्रकार पिता को यह गर्व होना चाहिये कि उस का परिवार सुखी, समृद्ध और परिष्कृत है उसी प्रकार प्रत्येक राजा के लिये यह गौरव की बात है कि उस की प्रजा सुखी, समृद्ध और परिष्कृत हो । और जो पिता या राजा ऐसा गर्व प्राप्त नहीं कर सकता है वह या तो बेईमान है या अकर्मण्य । मुझे लाचार हो कर कहना पड़ता है कि अंग्रेज़ी शासन में प्रजा की बहुत ही दुर्दशा है ।

सब से प्रथम मैं सम्पत्ति की बात को उठाता हूँ । क्योंकि यह कलियुग सम्पत्ति का युग है । पैसे की तराज़ू में मनुष्य की कुल योग्यताएं तोली जाती हैं। पैसा ही मनुष्य का बाप, चाचा, ताऊ और जमाई है। बिना पैसे के आदमी गधा है। पैसे के हाथ में रहने से भाज जातियाँ विजयिनी होती हैं। पैसे की बदौलत उन्हें वीरता का तमगा मिलता है। पैसे की

बदौलत उन्हें इस लोक के अधिकार प्राप्त होते हैं। वही पैसा भारत में कितना है। इस सम्बन्ध में जो आँकड़े और सम्पत्ति शास्त्र के ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं वे पाठकों की दृष्टि में पड़े होंगे—मैं व्यर्थ उन नीरस हिसाबों को दुहरा कर पाठकों के साथ अत्याचार नहीं करूंगा, मैं केवल यह कह सकता हूँ कि इस समय भारत सबसे गरीब देश है और उसकी सम्पत्ति बराबर क्षय हो रही है और उन सबकी जिम्मेवार सरकार की अनेक ऐसी नीतियाँ हैं जिनसे खर्च का एक बड़ा भारी पनाला बराबर जारी रहता है। सरकार ने हमसे कहा ही नहीं हमें विश्वास दिलाया है और उसका आयोजन भी किया है कि भारत कृषि प्रधान देश है—यह कच्चा माल विदेशों में भेजे। इसके पूरे सुभीते उसने उत्पन्न कर दिये हैं। पर हम यह कई बार कह चुके हैं कि यह भूठ और भ्रम है। भारत कभी कच्चे माल उत्पन्न करके दूसरे देशों को देने वाला देश नहीं है। क्या यहाँ भूमि काफी नहीं है? क्या यहाँ मजूर काफी नहीं हैं? क्या यहा मजूरी सस्ती नहीं है? क्या यहाँ का जलवायु परिश्रम और काम धन्धे करने के योग्य नहीं है? और कभी भारत ने क्या ऐसे व्यापार किये नहीं थे? पर शोक है सब कारण जान कर—सब बात समझ कर—भी सरकार इस तरफ ध्यान नहीं करती है। मैं प्रथम कह आया हूँ कि कृषि, शिल्प और वाणिज्य इन तीन उपायों से ही सम्पत्ति उत्पन्न होती है। पर

सरकार कृषि को ही उत्तेजन देती है। शिल्प, वाणिज्य को
मिट चुकी है। हम कौड़ी के मोल कच्चा माल देकर छूछे हाथ
बैठ रहते हैं और सोने के मोल वही तैयार माल विदेश से
खरीद कर मक्ख मारते हैं। हमारे घरके मजूर भाई खाली बैठे
। उन्हें चार पैसे का रोजगार नहीं है और हम अपना माल
गैरों से ऊँची ऊँची मजूरी देकर तैयार कराने को मजबूर
किये गये हैं। यह ठीक वैसी ही मूर्खता-पूर्ण ठसक है जैसे
कोई दरिद्र गृहस्थी स्वयं हट्टे कट्टे बहू बेटों के रहते प्रत्येक
काम मजूरी देकर गैरों से करावे। क्या वह सुखी रह सकता
? कदापि नहीं।

किस किस तरह के भयानक कानून बना कर वाणिज्य
या शिल्प को मार डाला गया है और किस तरह गरीब
कारीगरों के गला दबाने के आयोजन उत्पन्न करके उन्हें जीता
जमीन में गाड़ दिया गया है यह बात मैं ऊपर कह आया
इसके सिवा बड़ी भारी बात इसी सम्बन्ध में जो कहनी है
: जिसके लिये सरकार खुल्लम-खुल्ला कानून बना कर बद
। नहीं हो सकती थी—वह बात उद्योग धन्धों के सम्बन्ध
सुस्ती और लापरवाही का व्यवहार है। जो कभी किसी
भव और समृद्धिशाली राजा के लिये शोभा की बात
हो सकती।

स्कूलों और कालिजों से निकले हुए छात्रों की मट्टी पलीद

है। स्टेशन के कुली, अब मजूरी कम होने को कहा जात है तो किसी मैट्रिक पास को खोजने की सलाह दिया करते। जो जवान अपने मा-बापों की आंखों के तारे, दिमाक पढ़े नाहर के समान घर द्वार पर शोभित होते थे, जिनके भय से चोर, डाकू और बदमाश गाँव घरों की ओर आँख नहीं उठ सकते थे, जो बीस पच्चीस वर्ष की उम्र तक झूठ, व्यभिचार छल, पाखण्ड नहीं समझ सकते थे, गाँव भर की स्त्रि जिनकी काकी, चाची, ताई और बहन थीं, गाँव भर के पुरु काका, चाचा, और भाई थे वे नवयुवक हाय! आज कि दशा में हैं। आँखें गढ़े में घुसी हैं, भूख मारी गई है, दुर्बल त निस्तेज मुख व्यर्थ कपड़ों से मढ़े हुए नौकरी ढूंढते फिरते हैं छोटे छोटे बच्चे प्रेम की गुत्थियों को सुलझाते हैं। भारत में एम० ए० तक अंग्रेजी शिक्षा सरकार की ओर से दी जाती है इतनी योग्यता के आदमी सिर्फ सरकारी छोटे दर्जे के कर्म चारी बन सकते हैं। क्या भारत को उद्योग धन्धे सिखान पाप था। शुद्ध भारतीय जल वायु में रह कर भारतीय आदर का आदर सिखाना पाप था। बड़े २ प्रतिष्ठित घरों के बच्चे को नौकरी की खोज में ढूंढते देखता हूँ। एक दर्जी को मैं जानता हूँ जिस की दुकान में ३) रु० रोज से ।।।) रोज तक के ६-७ कारीगर हैं और जो २००) महीने कमाता है। पर उसक लड़का दुर्भाग्य से मैट्रिक हो गया। वह २५) महीने, कमात

है। पर वहाँ दफ्तर में किसी साहब की जूतियाँ खाता है।
र अपना काम करना नहीं पसन्द करता है। एक लुहार को
भी जानता हूँ जिसका लड़का सिर्फ ५ वीं या छठी जमाअत
क पढ़ा था। बाबूपने की ऐसी हवा दिमाग में घुसा कि लुहारी
का हथौड़ा न उठा, हालाँ कि उसकी दुकान पर भी २००)
महीने की आमदनी थी। निदान वह २०) महीने पर अपने घर
से ५० मील दूर नौकरी करता है। स्त्री तक से मिलने के लिये
तरसना पड़ता है। ब्याह होते ही उसको सुहाग रात के दिन
किसी जंगली स्टेशन के मनहूस कम्पार्टमेन्ट की गन्दी कोठरी
में अकेले कटे थे। कहाँ तक गिनाया जाय! न जाने इस
विदेशी शिक्षा में ऐसी कौनसी भयानक शक्ति है कि इसे छूते
ही आदमी घमण्डी मगर नीच हो जाता है। सरकार को अपने
लिये क्लर्क चाहिये थे वही व्यसन पैदा करने को गुलामों की
दुकानें खोल रक्खी हैं।

पढ़ने के बाद ३ महकमे अच्छी आय के हैं। सिर्फ आय
ही के कारण अभागे शिक्षित युवक इन पर आँख मूँद कर टूटते
। एक इंजीनियरिंग, दूसरा डाक्टरी, तीसरा वकालत। इन्हीं
दर्जे के बराबर बेईमान और चोर कोई भी दूसरा महकमा
ना। जिस में छोटे से बड़े तक प्रत्येक चोर और झूठा है।
एक मित्र के पिता ओवरसियर थे। ३५) तनखा मिलती
। पर महीने में २ हजार तक रुपये आते, मैंने अपनी आँखों

देते हैं। एक इञ्जीनियर को जानता हूँ। २००) पाते हैं। माह्मण हैं। आर्यसमाज के प्रधान हैं । परन्तु उनके तिमंजिले पुख्ता बंगले खड़े हैं। छकड़ों में रुपया लाद कर लाते हैं। चेहरे पर फटकार बरसती है—तेज नष्ट हो गया है। बढ़ बढ़ कर दान देते हैं और वाहवाही लूटते हैं । एक ठेकेदार को जानता हूँ। अभी ताजी जान पहचान हुई है। बम्बई में एक नये इञ्जीनियर आये थे। उन्हों ने इन हज़रत को सिद्ध-साधक बनने के लिये बुला लिया है। इञ्जीनियर की स्त्री को साड़ियाँ, हारमोनियम बाजे, जेवर और सौगातें बराबर भेज रहे हैं, एक टाँग से खड़े हो कर जी हुजूर करते हैं। मैंने स्वयं खड़े हो कर उन्हें दो दो बोतल शराब पिलाते देखा है। इतना करके वे उन से आर्डर लेते हैं और मनमाना बिल बना कर स्वीकृति करा लेते हैं। उस में अठ्ठम अढ़ा दामों का है । इस तरह ये दोनों पापिष्ठ लुटेरे उस रुपये को लूट रहे हैं जो सरकारी कहाता है पर वास्तव में प्रजा का है।

डाक्टरों ने जब से जन्म लिया तब से चिकित्सा-व्यवसाय तब से निष्ठुर दुकानदारी बन गया । मनुष्यों की मानसिक, सामाजिक और शारीरिक परिस्थितियाँ पूरी रोगी बन गई हैं। औषधि भोजन वायु की तरह जीवन की आवश्यक सामग्री बन गई है। परम कारुणिक, तपोधन ऋषियों ने भूतदया से प्रेरित होकर अपनी तपश्चर्या छोड़ लोक-सेवा के लिये चिकित्सा

विद्या को देवताओं से माँगा और उस से संसार का उपकार किया। आज यह मामला है—" मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की "। किसी भी बड़े शहर में आइये और उस की सड़क पर से एक मुट्ठी धूल उठा कर देखिये ज़रूर उस में से दो चार डाक्टर वैद्य निकल आवेंगे। प्रत्येक गली में, प्रत्येक मोड़ पर, प्रत्येक मुहल्ले में मक्खी की तरह चिपके हुए हैं। इन के फन्दे में रोगी को आने की देर है, बस वे हथकंडे चलाते हैं कि टाँट पर एक बाल नहीं रहता। उल्टे उस्तरे से मूँड़ते हैं। वैद्यों की दशा ऐसी है कि बेचारे विद्याहीन, धनहीन, दयाहीन अपनी मैली कुचैली शीशियों और झूठी सच्ची दवा-दारू को लिये बैठे दिन फोड़ रहे हैं। आया सो हज़म।

सरकार का इस सम्बन्ध में क्या कर्तव्य था यह सोचने की बात है। सरकार जानती है कि भारत गरीब है। वह इन डाक्टरों को देहातों में सब जगह नहीं पहुँचा सकती। उस के लिये यह अवश्य है। देहातों में यही बेचारे अयोग्य असहाय वैद्य ग़रीब प्रजा की प्राण-रक्षा जैसे बनता है करते हैं। सरकार ने पुरातत्व विभाग के उद्धार करने में ध्यान दिया सो शायद इस लिये कि यूरोप को कारीगरी के सच्चे आदर्श मिलें। और ज्योतिष का उद्धार किया सो शायद इस लिये कि यूरोप के दुनियादार इस अपूर्व भारती विद्या का ईमान बिगाड़ कर खिलौना बना लें। परन्तु उस ने आयुर्वेद को इतना उपयोगी

और काम का ज्ञान कर भी कोई सहारा नहीं पहुँचाया, इस लिये कि सारा खेत जब ये घरू बेल ( वैद्य ) ही चर जावेंगे तो उस के बछड़े ( डाक्टर ) क्या चरेंगे ? विलायत के दवा विक्रेता किस घर ठोकरें खिये फिरेंगे ? इन बछेड़ों के लिये उस ने खेत सुरक्षित रख छोड़े। और आयुर्वेद को मरने के लिये छोड़ दिया। उस पर दो लातें और कस कर लगा दीं। ये प्रकृति और स्वभाव के विरुद्ध, हलाहल विष के समान सांघातिक ऐलोपैथी दवाइयां, जिन से तमाम यूरोप घबरा कर त्राहिमाम् पुकार रहा है, भारत जैसे गरम देश में जबर्दस्ती पिलाई जाती हैं। जो भारत सनाथ होता—भारत का कोई ज़बरदस्त पूत होता तो पूछता—हत्यारो ! किस लिये तुम ये ज़हरें कातिल भुलावा देकर गरीब मासूम स्त्री-बच्चों के गले उतार रहे हो ! किस लिये—हमारे धर्म, जाति और स्वभाव तथा देशकाल के विपरीत—हम पर बलात्कार कर रहे हो ?

जो वनस्पति स्वाभाविक रूप से सर्वत्र जंगलों में सहज हाया करती हैं, जिन्हें ताजा ताजा काम में लाकर बे-खतर आरोग्य करने की विधि आयुर्वेद शास्त्र में है उस शास्त्र का उद्धार न करके सरकार ने यह प्रबन्ध किया या होने दिया कि ये वनस्पति यहाँ से लुटा जाकर विलायत जावें और गोरे हाथों से संस्कृत करके तब हमारे हलक में उतारी जावें ! उस में अनेक घृणास्पद पशुओं के पित्त, माँस, रस चुपचाप

मिला दिये जायें। क्या इससे भी अधिक कुछ भयंकर दशा हो सकती है? मैं इसे पाप समझता हूँ। और वास्तव में यह पाप है। मैं इसे पाप प्रमाणित कर सकता हूँ।

गत वैद्य सम्मेलन में—जो बम्बई में हुआ था—जब मैंने वैद्यों से सरकारी उपाधियों के छोड़ देने का प्रस्ताव किया तब बड़े बड़े प्रायः सभी वैद्यों ने मेरा घोर विरोध किया। प्रायः सभी संस्थाओं के बड़े लोग खुशामदी और उपाधियों के भूखे होते हैं। दुर्भाग्य से यहाँ भी उन की कमी न थी। ऐसी दशा में विरोध होना आश्चर्य की बात न थी। परन्तु विरोधियों में डा० सर देसाई ने कहा कि सरकार वैद्यों को अयोग्य मूढ़ नहीं कहती है। वह वैद्यों की प्रतिष्ठा करने को तैयार है। तुम योग्य बनो कालेज खोलो, पढ़ो, अपने ज्ञान को पूर्ण बना कर बड़े बड़े इलाजों में यश प्राप्त करो। गवर्नमेन्ट तुम्हारा सम्मान करेगी इन सर महाशय की बात सुन कर मुझे हंसी आ गई। मैंने कहा—महाशय! आपने जिस कालेज से एम० डी० पास किया था वह क्या आपके पिता जी ने स्थापित किया था या आपके जाति-बन्धुओं ने? क्या कारण है कि विदेशी और अप्राकृत चिकित्सा-पद्धति सिखाने को तो सरकार इतना खिरकुशौवल कर रही है, परन्तु सीधी, सच्ची और उपयोगी चिकित्सा पद्धति के लिये कहा जाता है कि हम स्वयं कालेज खोलें, स्वयं योग्य बनें।

मानों हम किसी ऐसे देश की प्रजा हैं जहाँ का कोई वारिस या राजा नहीं है।

अब वकालत के धन्धे की बात कहता हूँ। मेरी नज़र में इसकी बराबर बेईमान और पाजी पेशा नहीं आया। ज्यों ज्यों डाक्टर बढ़े त्यों त्यों रोग बढ़ा और ज्यों ज्यों वकील बढ़े त्यों त्यों अपराध बढ़े। ये लोग मुकद्दमेबाज़ों के पक्के सहारे हैं। इन्हीं की बदौलत मूर्ख डरपोक और पोच आदमी भी अदालत में झक मारने को तैयार हो जाता है। ये झूठ के व्यापारी—झूठों के उस्ताद—पूरे बेगैरती का जीवन व्यतीत करते हैं। 'जिसकी देखें तवा परात, उसकी गावे सारी रात'। यह मसल इन पर चरितार्थ होती है। मैंने स्वयं देखा है कि इन शरीफ़ों ने चोरों को यह कह कर कि वह उस प्रतिष्ठित घर का स्त्री का यार था बुलाने पर गया था, छुड़ा दिया है। इन्हें ऐसे ऐसे पाप करते न ग्लानि, न लज्जा, न लिहाज़ है।

ये पढ़े लिखों के जीवन हैं। जिन में धर्म, दया, सहानुभूति, प्रेम और सामाजिकता बिलकुल नहीं है। परन्तु यह तो सिर्फ़ उनका बाह्याचार है—उनके भीतरी आचार व्यभिचार पाप, हिंसा और तरह तरह के बीभत्स भावों से भरे रहते हैं।

हाय! कहाँ गये वे जीवन जब प्रत्येक शिक्षित गुण, कर्म, स्वभाव और व्यवहार में पिता की समान पवित्र और

गम्भीर रहते थे। यह समाज सगठन, यह जीवन, यह आदर्श इस शिक्षा डायन ने सर्वथा अतल पाताल में डाल दिया।

अब मजूरों की दशा देखिये। न उनके रहने को अच्छा स्थान है, न खाने का सुभीता। दिन भर काम का भूत सवार है, उसी काम ने उन्हें भूत बना दिया है। जब अंग्रेजी राज्य नहीं था तब इन में से प्रत्येक आदमी अपनी छोटी-छोटी दूकानों का मालिक था। प्रातः काल नहा धोकर अपनी दूकान झाड़ कर बैठता। भगवान का नाम लेता। दिन भर मन माना काम करता। राजा की तरह प्रसन्न, बे फ़िक्र और मस्त रहता था। मित्र बान्धवों का खुले दिल से सत्कार करता और रात्रि को तान कर सोता। प्रत्येक गृहस्थ के घर में कहानियों की चर्चा थी। रात्रि को सोती बार रोचक और उपदेश प्रद कहानियाँ कही जाती थीं। परन्तु आज उनकी यह दशा हुई। अन्धेरे में आधी रात से उठ कर उनकी स्त्री को चूल्हा जलाना पड़ता है। ६ बजे खा पी कर उन्हें काम पर हाजिर होना चाहिये। सवेरे स्नान सन्ध्या के समय पर वह रोटी के बड़े बड़े कौर जल्दी जल्दी भीतर उतारता है। इतने में सीटी सुन पड़ती है। बस भागता है। और दिन भर पशु की तरह काम करता है। यही मनुष्य जीवन है। न मित्रों की खातिर, न महमान की तवाजो। अप्रमाणिक इतना कि कारखाने से बाहर आती बार तलाशी देनी पड़ती है। यही [illegible]

किसानों की बात कई बार कह चुका हूँ। जिन के तन पर चिथड़ा तक नहीं है, जो कभी नहीं फूलता फलता, जो सदा कर्जदार, सदा वृथा, सदा दुखी, सदा अप्रमाणिक रहता है।

छोटे दर्जे के अहलकार और सरकारी नौकरों की भयकर दशा का अनुमान करना कठिन है। छोटी छोटी कच्ची उम्र के नौजवान छोटी छोटी बालिका अबोध वधुओं को अपने बूढ़े माता पिता से छुड़ा कर दूर देश में छोटी छोटी नौकरियों के आसरे छोटे दर्जे के मकान किराये लेकर पड़े रहते हैं। कोई हितू नहीं, बन्धु नहीं, मित्र नहीं, सहायक नहीं। मैंने कच्ची बालिकाओं को अकेले घर में अकेली प्रसूता होते देखा। उनके बच्चे रोगी, दुर्बल, अधमरे होते हैं। बहुत से मर जाते हैं। बेचारे कठिनता स अपना निर्वाह करते हैं। साल में जो दस बीस रुपया जमा होता है वह एकाध बार घर जाने आने में खर्च कर देते हैं।

रिश्वत के लिये सरकारी नौकर इतने प्रसिद्ध हो गये हैं कि रिश्वत देना उनसे काम लेने वालों को एक जरूरी खर्च हो गया है। य बेगैरत लोग रिश्वत को हक कह कर निर्लज्जता-पूर्वक माँगते हैं। पुलिस और साधारण अदली से लेकर जज तक रिश्वत खोर है। और क्यों न हो? १०) रु० की तनखा में पटवारी सरकार की राय में परिवार का गुजर कर सकता

है ? ८) रु० रुपये की तनखा में सिपाही सपरिवार रह सकता है। जो अंग्रेज हजारों रुपये की टेबल सजाते हैं उनके दिल में इन क्लीज तनख्वाधारों की नित्य की कठिनाईयाँ न आइ हों यह असम्भव है। सब साफ बात यही है कि सरकार ने यही चाहा है कि रिश्वत लेकर पेट भरो। हम कुछ न कहेंगे। रेल में रिश्वत, अदालत में रिश्वत, दफ्तर में रिश्वत, साहब के घर पर रिश्वत। हे भगवान! कहीं इस अधर्म का अन्त भी है।

अब मैं अपराधी लोगों और जेलके जीवनों पर भी एक प्रकाश डालूंगा। प्रत्येक देश में उद्दण्ड लोगों की उत्पत्ति होना अनिवार्य है। परन्तु उनके शासन और सुधारने के लिये उत्तम प्रबन्ध करना राजा का जोखिम-पूर्ण कर्तव्य है। परन्तु जेल लुच्चपन सिखाने की पाठशाला है। बे-शर्मी की शान चढ़ाने को मशीन—जब कि स्त्री, बच्चे और ऐसे आदमियों को जिन्हों ने भूख से विवश हो कर रोटी चुरा ली थी, ऐसे अपराधी के पास निर्द्वन्द्व भाव से देखते हैं जो बलात्कार, खून या डाके के अपराध में वहां आया है। पुलिस के अधिकार व्यवहार और हैसियत इतने निकृष्ट और तुच्छ हैं कि कोई भला आदमी पुलिस से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध रखती बार घबराता है। मुझे मालूम है कि एक बार थोड़े दिन के लिये भी जेल में आकर कोई भी लज्जालु से लज्जालु और भीरु से भीरु आदमी कुछ न कुछ निर्लज्ज और धीठ बन जायेगा। मैं भरोसे से कह

सकता हूँ कि जेल अपराधियों के सुधार या दण्ड का स्थल नहीं है, वह अपराधों की पाठशाला है। वहाँ के कर्मचारियों का व्यवहार, वहाँ का आहार विहार, वहाँ की कुत्सित निवास प्रणाली सब मनुष्यत्व के सूक्ष्म कोमल भावों को नाश करने वाला है।

सब बातों के सार-रूप यह कहना कठिन है कि प्रजा की भीतरी दशा क्या है। अमीर, गरीब, शिक्षित, साधारण व्यवसाइ, अपराधी, बच्चे, भारत के प्रत्येक प्राणी ठीक उसी दशा में हैं जिस दशा में एक अनाथ परिवार के लोग होते हैं। मानों उन पर किसी का शासन नहीं है—किसी का अधिकार नहीं है। कोई उनका स्वामी नहीं है। भारत व्यर्थ पसीना बहा रहा है—व्यर्थ खून बहा रहा है—व्यर्थ आँसू बहा रहा है। वह भूखा है, वह दबा हुआ है, वह रोगी है, वह पोच है, वह दुखी है, तिस पर भी वह शक्तिशाली अंग्रेजों की प्रजा है—धिक्कार है इस राजत्व पर। साधारण व्यक्ति भी अपने पालतू पशु-पक्षियों को सजा कर रखता है, उनके खान-पान और निवास की सद् व्यवस्था करता है। शायद अंग्रेजी सरकार की दृष्टि में हम उस व्यवहार के भी योग्य नहीं हैं। हम कसाई के घर बकरे की भाँति हैं।

ये बातें उन अभागे लोगों की हैं जिन्हें सभी प्रजा कह कर तुच्छ दृष्टि से देखते हैं। अब मैं एकाध बात उन महज्जनों के

सम्बन्ध में भी कहना चाहता हूँ कि जो अपने आपको राजा कहते हैं और अपने निस्तेज चेहरे को भड़कीली पोशाक से सजा कर ज़मीन पर पैर नहीं रखते हैं। मुझे अफ़सोस है कि मैं इन्हें राजा नहीं बल्के अंग्रेज़ों की प्रजा समझता हूँ। और यद्यपि ये अकर्मण्य महाशय पूरी दुर्दशा के योग्य हैं, पर फिर भी प्रजा की दुर्दशा की याद के साथ इनकी दुर्दशा का वर्णन मैं भूल नहीं सकता।

यह बात कही गई है कि इन राजाओं के ओज और ठाठ कभी कैसे थे। पर आज क्या है? एक तो इनमें वीरता पूर्वक एक शब्द को मूँह से निकालने की शक्ति नहीं रह गई है। दूसरे उनकी अवस्थायें ऐसी गाँठ कर पराधीन कर दी गई हैं कि इस प्रकार शर्तों को मान कर राजा होना कोई तेजस्वी पुरुष कभी न स्वीकार करेगा।

अजमेर में एक मेयो कालेज है जहाँ राजकुमार पढ़ाये जाते हैं। मुझे वहाँ की भीतरी दशा, कुमारों का रहन सहन उनके आचरण और उनकी शिक्षा की सारी हकीकत मालूम है। मैं यह कह सकता हूँ कि वह साँडों को बधिया बनाने का कारख़ाना है। ये जवान लड़के आगे राजा बन कर प्रजा की पसीने की कमाई मज़े से चूसने में उस्ताद हो जाये, राजपूत तो रह सकते नहीं। जहाँ इनकी भीतरी दशा बीभत्स है वहाँ

याहरी अपमान जनक है । उस का एक साधारण उदाहरण सुनिये - अभी जो सभा नरेन्द्र मण्डल के नाम से प्रसिद्ध की गई है उस का नाम पहले चेम्बर आफ प्रिंसेस रक्खा गया था । पाठक नरेन्द्र शब्द और प्रिंस शब्द के अर्थों पर सब तरह विचार करें । मतलब यह है कि भारत की दृष्टि में जो नरेन्द्र ( ! ) हैं वे अंग्रेजों की दृष्टि में प्रिंस से अधिक नहीं हो सकते । इंग्लैंड में कोई भी हैसियत वाला आदमी अधोल-वर्ग का Boys ( लड़के ) कह कर पुकार सकता है । हायरे, भारत के अभागे नरेन्द्रगण ! !

---

# बारहवां अध्याय

—:o:—

## भारत पर ब्रिटिश लक्ष्य।

भारत वर्ष ब्रिटिश सिंह का मारा हुआ शिकार है। और प्रतापी ब्रिटिश सिंह ने अपने शिकार को मार कर यों ही अरक्षित पड़ा नहीं छोड़ दिया है। उसका इरादा सब तरफ से चाक चौबन्द होकर निश्चिन्तता से उसका स्वादिष्ट मांस खाने का था। और मारे हुए शिकार पर कोई ऐरागैरा दांव न गड़ा बैठे, इसका इस मनुष्य सिंह ने मनुष्य ही की तरह बुद्धिमानी से इन्तज़ाम किया है।

उन्नीसवीं शताब्दी का पूरा १०० वर्ष का लम्बा समय इसी सांठ गांठ में बीता है कि विलायत से हिन्दुस्तान तक के जल मार्ग और स्थल मार्ग के प्रदेश वह अपने आधीन रक्खे। और नैपोलियन के युद्ध के बाद से लेकर आजतक जितने युद्ध हुए, जितनी संधियां हुईं, जितनी व्यवस्थाएं हुईं, जितने राजनीति और कूटनीति के फन्दे फैलाये गये, सब भारत को ही लक्ष्य करके किये गये।

नैपोलियन के साथ भूमध्य सागर, मिश्र और सीरिया में जो युद्ध किये गये वे भारत के ही लिये थे। वायना की कांग्रेस

में अंग्रेजों ने यूरोप का कोई अंश अपने युद्धों के पुरस्कार में न माँग कर माल्टा, गुड होप के अन्तरीप मारीशस, सेशिलाय और लंका के अपने अधिकारों की दृढ़ता चाही। सन १८५५ में अंग्रेज़ तुर्कों के इसी लिये मुरब्बी बने थे कि स्थल मार्ग से कोई भारत पर दृष्टि न करे। बलकान राज्यों में मुसलमान बराबर ईसाइयों की हत्या करते रहते थे। फिर भी अंग्रेजों ने उसकी परवा न कर उसकी स्वाधीनता का विरोध किया। क्रीमिया की लड़ाई अपने शिकार के पहरेदार तुर्की के लिये की गई थी। जब स्वेज की नहर बनने लगी तो अंग्रेज डरे कि इससे तो भारत का मार्ग सरल हो जायगा। और उन्होंने उस का विरोध किया। पर जब नहर बनगई तब उसे स्वेज़ कम्पनी से हथिया लिया। जरूरत होने पर तुर्क से साइप्रस को अपने कब्जे में ले लिया और मिश्र को भी छीन लिया। यही काम कोई दूसरा राष्ट्र करता तो अंग्रेज खून पानी एक कर देते। मिश्र के हाथ में आने पर उन्होंने बलकान के सम्बन्ध में भी अपनी नीति बदल दी।

पूर्वी रूमानिया जब बलगेरिया में मिला लिया गया, अंग्रेजों ने उसे भी मान लिया। इससे यदि ८ वर्ष पहिले बलगेरिया यह करता तो अंग्रेज सारे यूरोप में भीषण युद्ध मचा देते।

मिश्र पर अधिकार करते समय अंग्रेजों ने सब शक्तियों से यही कहा था कि हम यह अधिकार सदा के लिये नहीं करते

उसे शीघ्र ही छोड़ देंगे। पर आज तक उसे छोड़ा नहीं है। अपनी राज़ी से छोड़ने वाले भी नहीं हैं। बल्कि उस पर और भी दृढ़ता पूर्वक अधिकार जमाये रखने ही के लिये उन्होंने लाल समुद्र और दक्षिण अफ्रीका को भी कब्जेमें रखने के लिये बोअर युद्ध और सूडान पर विजय प्राप्त की थी। जिससे अफ्रीका के उत्तरी कोने से दक्षिणी कोने तक रेल बन जाय। १९०४ के इंगलैण्ड फ्रांस के प्रसिद्ध इकरार नामे में, जिस से दोनों के झगड़े ते हो गये थे, यही शर्त मुख्य थी कि अंग्रेज मुराक्को पर नजर न डालें और फ्रेंच मिस्र पर, अंग्रेजों को मराक्को से क्या मतलब था? हाँ फ्रांस यदि मिस्र में झगड़ा करता तो उन्हें स्वेज़ की नहर छिन जाने का भय था।

रूस के तीन वर्ष बाद रूस से एक समझौता कर भारत तक के मार्गों की रक्षा का प्रबन्ध कर लिया गया था। अन्त में इस महा युद्ध में अकस्मात् जर्मनी ने हार कर अंग्रेजों को विजयी बना दिया और आज समस्त दक्षिणी एशिया में, भूमध्य सागर से लेकर प्रशान्त महा सागर तक उनका अधिकार खूब पुख्ता होगया है।

माल्टा, साइप्रस, मिश्र, अदन, पेरिम सूडान तथा अरब समुद्र के सकोट्रा आदि टापुओं पर, फारिस की खाड़ी में बेहरीन टापुओं पर लंका में अंग्रेजों का पूरा अधिकार है। उधर पूर्व में सिंगापुर मलाया प्रायःद्वीप और बोरनियो के उत्तरीय भाग पर दृढ़ अधिकार है।

अब उत्तर पश्चिम और उत्तर पूर्व का प्रबन्ध रहा। उत्तर पश्चिम में बिलोचिस्तान, अफगानिस्तान, रूस के बुखारा और तुर्किस्तान के ज़िले। उत्तर पूर्व में चीन के सिकम और तिब्बत, नैपाल, भूटान, तथा बर्मा के देश हैं।

पूरे २८ वर्ष तक प्रयत्न करने पर सन् १८१३ में बिलोचिस्तान और ३० वर्ष के प्रयत्न से १८०६ में बर्मा अंग्रेजों ने हजम कर लिया। ये दोनों देश समुद्र के किनारे पर थे। इस लिये जब तक इन पर पूरा २ अधिकार न हो गया तब तक अंग्रेजों को चैन न पड़ा। जैसे मिश्र वालों की इच्छा के विरुद्ध फ्रांस के इकरार नामे के अनुसार अंग्रेजों ने मिश्र में नील नदी के उद्गम तक पैर फैलाये, उसी तरह दक्षिणी फारिस

वाली जंगली जातियों को दण्ड देने के लिये सेनाए भेजी जाती थीं, और इस प्रकार नया देश अधिकृत किया जाता था, यह काम तब तक जारी रहा जब तक कि पहाड़ों की ठठ सीमाए भारत सरकार के हाथ मे नहीं आगयीं।

अब भारत की सीमाओं पर तीन स्वतन्त्र राज्य रह गये हैं। नैपाल भूटान और अफगानिस्तान, पर इनकी स्वाधीनता नाम की है। तीनों के हाथ पैर कस कर बँध रहे हैं। सौ वर्ष से नैपाल में अंग्रेज रेजिडेन्ट रहता है। और हजारों गोरखे भाड़े पर अंग्रेजों के लिये जान झौंकते हैं। भूटान और अफगानिस्तान को बड़ी २ रकमें बराबर इसीलिये मिलती रहती हैं कि वे अंग्रेजों की इच्छानुसार काम करें। तिब्बत में एक बार झगड़ा होने से उस के कुछ जिलों में अंग्रेजों ने अपना हाकिम नियत कर दिया था। वह जिला तब से अंग्रेजों के बाप दादे का हुआ। भूटान का कुछ अंश बंगाल में मिला लिया गया था और उसकी कुछ वृत्ति उसे मिलती थी। सन् १६१० ई० में उसने परराष्ट्रीय सम्बन्ध अंग्रेजों को सौंप कर वृत्ति दूनी करा ली। यह कहा जासकता है कि भारत में शीघ्र ही कोई भारी राजनैतिक परिवर्त्तन न हुआ तो नैपाल और भूटान आज नहीं तो कल अंग्रेजी राज्यमे मिला लिये जायेंगे।

अफ़गानिस्तान, तिब्बत और फारिस इन तीनों को अंग्रेज हिन्दुस्तान की ढाल समझते हैं।

जब से रूसियों ने मध्य एशिया में प्रवेश किया है तभी से अंग्रेज अफ़गानिस्तान को हथियाने की फिक्र में थे। उन्हें भय था कि यदि रूसी अफगानिस्तान को कब्जे में कर लेंगे तो वे फारिस की खाड़ी के रास्ते काफिरिस्तान व औरिस्तान और स्वात आदि की सीमा प्रान्तवाली जातियों को भड़काकर पंजाब तक आ पहुँचेंगे। उन्होंने सन् १८३६ से १८६० तक ५० वर्षों में चार बार अफगानिस्तान पर आक्रमण किया। इन आक्रमणों में बहुत खर्च हुआ। मगर वीर अफगानों ने उन्हें निकाल बाहर किया।

अफगानिस्तान के स्वर्गीय अमीर अब्दुल रहमानखां बहुत समझदार व्यक्ति थे, उन्हें अंग्रेज सदा कहा करते कि, रूस तुम पर आक्रमण करेगा, तुम अपने यहाँ रेल तथा तार बनवाओ। सब प्रबन्ध हम कर देंगे। पर अमीर रूसियों के रोग को जैसा बुरा समझते थे, वैसी ही बुरी अंग्रेजों की दवाई को भी समझते थे। वे अपने व्यापार पर अंग्रेजों का अधिकार नहीं होने देना चाहते थे। उनका सिद्धान्त था कि जो देश हमें सबसे कम दबावेगा, वही हमारा मित्र रहेगा। वे अंग्रेजों के मित्र ही रहे।

उनके बाद हबीबुल्ला खाँ अमीर हुए। ये अंग्रेजी पढ़े थे, और अंग्रेजों के मित्र भी थे। इनके समय में रूस तुर्किस्तान में हाथ बढ़ा रहा था। चार हजार तुर्की हिरात चले आये अमीर ने

उन्हें त्याग दिया। रूसी अफगान की सीमा की रेलें लाते थे। अंग्रेजों ने सब बातों से घबरा कर एक मिशन अफगानिस्तान में भेजा कि यदि रूस चढ़ाई करेगा तो क्या किया जायेगा, और साथ ही कुछ व्यापार के सुभीते भी चाहे थे

अमीर ने मिशन से कह दिया कि अपने पिता की सन्धि हम भी स्वीकार करेंगे। वृत्ति भी फिर ले लेंगे। मिशन की इच्छा थी का अंग्रेज अफसरों की सहायता से अफगानी सेना का संगठन हो और अफगानिस्तान तक रेल बन जाये, जिससे जरूरत पड़ने पर अंग्रेजी सेना की सहायता फौरन मिल सके, पर यहाँ दाल न गली। पर अमीर ने पहले पहल मिशन वालों के साथ जिन्हें वे काफिर समझते थे, भोजन किया और दिल्ली दरबार का निमन्त्रण भी स्वीकार किया। इस मिशन के द्वारा जो सन्धि स्थापित हुई, उससे अंग्रेज और रूसी दोनों को सन्तोष हुआ। अंग्रेज इस बात से निश्चित हो गये कि रूस अफगानिस्तान के रास्ते भारत पर आक्रमण न करेगा और रूसको भी व्यापारिक और राजनैतिक कई फायदे मिल गये थे।

कैसर ने बहुत दूर तक अफगानिस्तान पर लक्ष्य करके ही तुर्की को अपने में मिलाया था। उसका ख्याल था कि जब तुर्क मुसलमानी राज्य हमारा साथ देगा, तब फारस, जो कि अंग्रेज रूसकी ओर से दबाया जा रहा है तथा अफगानिस्तान भी उपद्रव करेगा और वास्तव में यदि रूस अंग्रेजों के साथ में

न होता तो अंग्रेज़ों के लिये अफ़गानिस्तान में भारी कठिनाई का सामना पड़ता। अंग्रेज़ों के सौभाग्य से रूस ने फारस को पहले से ही अच्छी तरह दबा रखा था और यह भी संयोग की बात हुई कि रूस का अन्त होने से प्रथम ही अंग्रेज़ों ने मेसोपोटोमिया और दक्षिण फारिस पर अधिकार कर लिया जर्मनी ने कुछ दूतों को अफ़गानिस्तान भेज कर भड़काया भी था पर कुछ सफलता नहीं हुई। अन्त में अमीर एकाएक मार डाले गये और पीछे से पता लगा कि अफ़गानिस्तान से अंग्रेज़ों का प्रभुत्व नष्ट करने ही को यह हत्या की गयी थी।

अब तिब्बत की बात लीजिये जिसे अंग्रेज़ोंने दूसरी भारत की ढाल बना रक्खा है। सन् १६०० तक तिब्बत की तरफ़ किसी का ध्यान न था। न उस देश की जनसंख्या, रीतिरस्म आदि किसी को मालूम थे। तिब्बत के लोग न तो किसी विदेशी से व्यापार करना चाहते थे और न किसी को अपनी राजधानी लासा में ही आने देना पसन्द करते थे। सन् १६०० में दलाई लामाने एक पत्र और कुछ भेट रूस के ज़ार के पास भेजी। तब अंग्रेज़ चौकन्ने हुये। उन्होंने यह भी सुना कि रूस का भी एक दूत तिब्बत में आ चुका है। अंग्रेज़ों को सन्देह हुआ कि कहीं रूस इसी नये मार्ग से तो भारत पहुँचने का उद्योग नहीं कर रहा है।

चीन भी तिब्बत की इस स्वतन्त्रता से नाराज़ था। अन्न

में चीन की मारफत यह तय किया गया कि तिब्बत सीमा पर अंग्रेजी कमीशन तिब्बत और चीनी प्रतिनिधियों से मिले जुलाई १९०३ को कर्नल यंग हसबैन्ड तिब्बत की सीमा के भीतर खम्बा जंग नामक स्थान में आ पहुँचे पर जब कई महीने तक तिब्बत के प्रतिनिधि नहीं आये तब उन्होंने सेना बुलाकर तिब्बत पर आक्रमण करने को सड़कें बनवाना शुरू कर दिया कर्नल साहिब ने इरादा कर लिया कि तिब्बती यदि हमारा विरोध करेंगे तो हम अपनी तोप बन्दूकों से उन्हें भून डालेंगे उधर इंग्लैंड में इस अन्याय का समर्थन करने को एक विवरण पत्र प्रकाशित किया, जिस में तिब्बतियों के अनेक झगड़ों का उल्लेख था।

तिब्बतियों के पास न हथियार थे और न अच्छी सेना, इसलिये पहली ही मुठभेड़ में अंग्रेज़ों ने उनके ६०० आदमी मार डाले और २०० पकड़ लिये। अन्त में कर्नल साहिब ३ अगस्त को ल्हासा पर जा धमके युद्ध तो क्या हुआ कत्ले आम हुआ। तिब्बतियों के १५०० आदमी मारे गये पर अंग्रेज़ सिर्फ ३१ मरे। दलाई लामा भाग कर मंगोलिया चले गये अंग्रेज़ों ने तिब्बतियों से जबरदस्ती एक सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करा लिये। इसके अनुसार अंग्रेज़ों को व्यापार के और राजनैतिक अच्छे अधिकार मिल गये। रूस का भय भी मिटगया। इसके सिवा युद्ध के हर्जाने का ७५ लाख रुपया भी अंग्रेज़ों ने माँगा और जब तक रुपया न मिले तब तक चिम्बी की तराई दख़ल कर ली।

# तेरहवां अध्याय

———:०:———

## प्रजा-द्रोह

राजद्रोह एक अत्यन्त प्राचीन भयङ्कर अपराध है। और जब से जगत में राज-सत्ता का जन्म हुआ है। तब से इस अपराध में ऐसे ऐसे नर-श्रेष्ठों को प्राणात्मक दण्ड दिये चुके हैं। जिन के विषय में मनुष्य समाज सदा अफसोस करा रहेगा। परन्तु जिस प्रकार एक स्वेच्छाचारी राजा या सर का असंख्य जन समूह को अरुचिकर अधिकार न्याय आधार पर वैध है और चाहे किन्हीं उचित कारणों के आधा पर भी उस का मन-वचन और कर्म से विरोध करना अपरा है तब असंख्य नर-समूह के अधिकार और स्वार्थों का अन्याय और अनीति से हरण करना भी अवश्य उसी श्रेणी का अप राध माना जाना चाहिये और यह अपराध मेरे शब्दों में प्रजाद्रोह है।

भारत के शासन के सम्बन्ध में मैं दृढ़ता-पूर्वक अंग्रेज सरकार पर यह अपराध लगाता हूँ और मैं विश्वास रखता हूँ कि सरकार सुधार के नाम पर जो कुछ करती रही है जनता के प्रति एक भयङ्कर षड्यन्त्र है।

संसार का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जैसे बड़ी बड़ी सत्ताओं ने असंख्य महान् व्यक्तियों को राज-द्रोह के अपराध में रोमांचकारी दण्ड दिये हैं उसी प्रकार दलित प्रजा ने हज़ार असमर्थ होने पर भी प्रबल शक्ति शाली राज-सत्ताओं को प्रजा-द्रोह के अपराध में विध्वन्स कर दिया है।

यह बात भी इतिहास बतलाता है कि जब २ राज-द्रोह कमज़ोर रहा, उस का पतन हुआ। और ज्योंही वह पूर्ण हुआ त्योंही उस की विजय हुई। साथ ही मनुष्यों के बनाये कानूनों ने, इन महामना प्रजा जनों पर जो राज-द्रोह के लांछन लगाये, समस्त संसार की सभ्यता ने उन्हें धो दिया। इसके विपरीत प्रजा द्रोह जब तक कमज़ोर रहा तब तक उसने भयङ्कर गर्जन तर्जन किया और उस की अखण्डगति रही। पर ज्योंही वह पूर्णांश में प्रकट हुआ, त्योंही उस का सर्वनाश हुआ। और संसार की सभ्यता कदाचित् ही सहानुभूति (?) से उस की दुर्दशा को देखा। इस से यह अर्थ निकलता है कि राज-द्रोह के स्थान पर प्रजाद्रोह ही पाप है। राजद्रोह को इतिहास ने क्षमा समर्थन और सहानुभूति से देखा है और प्रजाद्रोह को क्रोध घृणा और विरोध की दृष्टि से।

मैं अंग्रेज़ सरकार पर यह तोहमत लगाता हूँ कि उस ने भारत में आकर और भारत से अपनी पूरी पूंजी तमका लेकर

भारत की भलाई के लिये कुछ नहीं किया । उस ने चुने हुए बुद्धिमान युवकों को धार्मिक और नैतिक ओषम से पतित करके अपना गुलाम बनाने के लिए स्कूल, कालेज खोले, और हमें यह भरोसा दिया कि ये स्कूल भारत में शिक्षा और विज्ञान के प्रचार के लिये खोले गये हैं । उस ने रेल, तार और डाक के महकमे खोले और हमें विश्वास दिया कि ये सब प्रजा के हित के लिये हैं। परन्तु हमें मालुम हुआ कि यह काम उस ने हजारों मील दूर आराम से बैठे रह कर सुभीते से अपना अखण्ड हुक्म चलाने और भारत के माल को आसानी से लाद ले जाने तथा प्रजा को दबाने के लिये सेनाओं की शीघ्र सहायता पहुँचाने के लिये यह सब किया गया था । उस ने हिन्दुस्तानी जवानों को अपना सिपाही बनाया,सो भारत रक्षा करने के लिये और उस की वीरता जागृत करने के लिये नहीं। उस से नमक हलाली के नाम पर हतभाग्य कमज़ोर जातियों को जेर कराकर अपना स्वार्थ साधने के लिये। उस ने अनेक राजनीतिक चालों और राजनीतिक अधिकारों के दबाव से भारत के व्यापार और कला कौशलका नाश करके अपना घर माला माल और भारत कंगाल कर दिया।

उसने ज़मीन के सम्बन्ध में ऐसे भयंकर उलट फेर किये हैं जो किसानों के लिये बर्बादी के कारण सिद्ध हुए । उस ने धीरे २ खोटे सिक्के बना कर परदेशी व्यापार के मामले में

गहरी चाल चली है और असंख्य रुपयों को इस चाल के द्वारा यह बीच में कतर लेती हैं और इससे भारत की आर्थिक दशा में अनहोनी क्षति पहुँची है। उस ने तरह २ के नियम, छल, पाखण्ड और बहाने तथा धमकियां देकर निर्दयता-पूर्वक भारत की सम्पत्ति अन्धा धुंध लूटी है। उस ने युद्ध के समय भारत को मसल कर, उस की शक्ति से बहुत बाहर धन जन कठोर क्रूर कर्मों द्वारा लिया है और शान्ति सभा के न्याय में उसने भारत को समस्त राष्ट्रों के सामने अपना मारा हुआ शिकार कहा है। भारत की उचित सभ्यता पूर्वक की गई मांगों के बदले पाशविक ढंग से उस का खून बहाया है, उसकी स्त्रियों की लाज लूटी है और अन्त में उसने साफ़ २ कह दिया है कि भारत हमेशा हमारा गुलाम रहेगा।

ये सारी हरकतें जान बूझ कर की गई हैं। अंग्रेजों के आने से प्रथम भारत जैसा अराजक था वैसा ही आज भी है। जैसा अशिक्षित था प्रायः वैसा ही आज भी है—पर जैसा वह धनी था वैसा आज नहीं है जैसा वह व्यापारी था वैसा आज नहीं है। जैसा वह योद्धा था वैसा आज नहीं है। जैसा वह प्रबन्धक था वैसा आज नहीं है, जैसा वह खाने पीने से निश्चिन्त था वैसा आज नहीं है, जैसा वह धर्मात्मा था वैसा आज नहीं है, जैसा वह हिन्दू था, जैसा वह मुसलमान था वैसा आज नहीं है। आज वह एक हाहाकार से भरा हुआ,

भूख से रोता हुआ नंगा ठिठुरता हुआ, अपमान से पिटता हुआ, सुस्त हुआ, भविष्य की आशाओं से हीन अनाथ बालक के समान है। उस की यह दुर्दशा अंग्रेजी अमलदारी में ही हुई है और उस की सारी जिम्मेदारी अंग्रेजी सरकार पर है। तीस करोड़ नर नारियों से भरे हुए एक देश की इरादे पूर्वक उस सरकार ने यह दुर्दशा की है जो सदा यह कहती रही है कि हम भारत की रक्षा कर रहे हैं।

जिस भूमि पर अमरजयध्वजा फहराही थी। जिस भूमि के दर्शन को बारम्बार देवदूत आते थे। जिस भूमि पर भरत, विक्रम, युधिष्ठिर और शालवाहन ने एक चक्र राज्य किया। जिस भूमि की देवी दूसरे सब देशों की महारानी थी। वही आज लोहू में भरी हुई निस्तेज धूल में पड़ी है !! यह क्या भूल जाने योग्य है?

वह पूर्व का रंग कहाँ गया? वह पूर्व की समृद्धि कहाँ गई? वह प्रेम, वह शौर्य, वह युद्धरंग कहाँ गया? वह आनन्द कहाँ है? वह व्यापार की तेजी कहाँ है? वह सच्चिदानन्द में मस्त मग्न योगी महर्षि और युद्धमस्त राजपूत कहाँ हैं वह स्वतन्त्रता कहाँ गई? स्वतन्त्रता, समानता और मित्रता के नियम कहाँ गये? वही सूर्य है वही वायु और आकाश है, वही समुद्र की लहरें हैं पर वह भारत कहाँ है?

हाँ तुम्हीं हमें लूट कर ले गये। हमारी बलवान सरकार

की आंति धान्नो ! श्राइव के जमाने में तुम क्रफों की नौकरी पर आन झोंकते थे आज तुम किस जादू के बल से इतने अमीर हो गये ? तुम्हारे घर में यह बेशुमार दौलत कहां से उमड़ आई और हमारे ठसाठस भरे हुए घर कैसे खाली हो गये ?

यह काल की बलिहारी है। हम तेजस्वी आर्य जन के दास हुए जिन के पूर्वज जंगली थे। परन्तु मूर्ख के सिवा कोई अपने को अमर शक्तिवान् नहीं कह सकता। वह महान् रोमन राज्य कहाँ है ? वह प्रतापी कुस्तुन्तुनिया का सुल्तान कहाँ है ? वह चक्रवर्ती भारत का राज्य कहाँ है ? अन्त में सब का नाश है। यह चक्र है। यह काल चक्र है। जो चढ़ेगा वह गिरेगा। हम चढ़े थे हम गिर गये। तुम चढ़े हो तुम गिरोगे। हम गिरे हैं हम चढ़ेंगे उस दिन को तुम भयभीत हो कर देखो।

तुमने वायदा किया था कि तुम्हारा देश दीन दशा में है उससे हम तुम्हें उभारेंगे। सत्य न्याय और अदल इन्साफ करेंगे। बाघ बकरी एक घाटपर पानी पीयेंगे। देश की समृद्धि व्यापार, कला बढ़ायेंगे। शत्रु से रक्षा करेंगे व्यर्थ जुल्म न होने देंगे। जो कर लगे हैं उठा लिये जावेंगे।

तुम्हारी महान योग्यता के ये सारे वायदे पूरे हो गये हैं देश की दीन दशा सर्वथा उन्नत होकर आस्मान तक पहुँच चुकी है तुम्हारा सत्य, और अदल इन्साफ, नन्दकुमारने, अमीचन्द ने, पजाब के पुत्र दिलीप सिंहने, झाँसी की वीर

रानी ने और हजारों किसानों, नवाबों और जमींदारों ने स्वर्ग तक पहुँचा दिया है। सरकश में बाघ बकरी एक घाट पानी पीते ही हैं व्यापार समृद्धि बढ़ कर पहाड़ के समान हो गयी है न कोई भूखा न नंगा। जुल्म भी तुम्हारे राज्य में देखने को नहीं मिलते। जलियान वाला बाग और मोपला हत्याकांड तो सिर्फ मनोरंजन था! टैक्स भी सिर्फ आमदनी का आधा ही लेते हो।

तुम प्रश्न कर सकते हो—

'तुम कैसा राजा चाहते हो? उस बदमाश और लोहू के प्यासे हैदरअली को या उस के धर्मान्ध बेटे टीपू को या उस चोरों के शासन शाहन शाह जसवन्तराय होल्कर को अथवा उस ५७ के हत्यारे नाना साहेब और तातिया टोपी को अथवा उस पागल मूर्ख झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई को? क्या हम इन से भी बुरे राजा हैं?"

ठीक है, कह सकते हो। धरती माता की गोद में अनन्त काल के लिये विश्राम पाये हुओं के विषय में राजमद के घमण्ड से तने हुए तुम मन माने खोटे वचन कह सकते हो। उन्हों ने अपने पूर्वजों के पद चिन्हों पर चल कर अपने उबलते लोहू के जोश में जो उचित समझा किया वह उनकी स्वाधीनता के दीप को तुम्हारी आँधी से बचाने का समय था।

टीपू सुलतान के मंगवल और उसके विफराल युग के

सामने देखने की हिम्मत वाला योद्धा उस समय योरोप और समस्त संसार में कौन था ? उस मैसूर के प्रख्यात चीते का पराक्रम दो बाघों ने मिल कर छिन्न भिन्न कर डाला ! डलहौसी ने बिना प्रयोजन जिस का सर्वस्व हड़प लिया और उस की किसी ने दाद न दी, वह कंगाली में फंसे चुप चाप बैठ कर अपना लोहू पीता ! उन से जो बना उन्हों ने किया। पर कमज़ोर लूट करे तो लुटेरा, और बलवान् करे तो शाहन शाह, तुम शक्तिवान् हो, तुम्हें कौन अपराधी कहेगा ! उन का योरस्य उनका स्वातन्त्र्य प्रेम तुम ने छल बल से हत्या किया। उन्हों ने ग़द्दारी की-तुम ने दगाबाज़ी ! उन का पासा उल्टा पड़ा तुम्हारा सीधा। तुम कह सकते हो:—

"हमने तुम्हें उन अत्याचारी नवाब राजाओं की बनिस्बत क्या स्वातन्त्र्य नहीं दिया है और तुम्हारे कल्याण और सुख के लिये भारी चेष्टाएँ हम नहीं कर रहे हैं ! जब अराजकता के बादल उमड़ रहे थे। तब हमने तुम्हें शान्ति के वचन नहीं दिये थे ! क्या हमने तुम्हारे बच्चों की धार्मिक स्वाधीनता नहीं दी है ! जिस धर्म के लिये कि युरोप और एशिया में हज़ारों वर्षों से भयंकर मारकाट मच रही है। हमने अपने वचन के अनुसार राजा महाराजाओं के मर्तबे को वफ़ादारी से सम्मान नहीं रखा है ! तुम्हारे विद्याहीन पुत्रों के पढ़ाने को स्कूल

धुन्धो राज्यशासन से देश का उद्धार नहीं किया ? क्या हमने छापेखाने का अमूल्य अतुल्य स्वातन्त्र्य तुम्हें नहीं सौंपा है ? क्या व्यापार धन्धों की बढ़ती नहीं की है ? सती ठगी, बालहत्या, गर्भपात और वैसी ही कुरीतियों को क्या हमने नष्ट नहीं किया ? एक प्रांत से दूसरे प्रांत में जाने में कितने भय कितनी कठिनाईयां थीं, २० कोस जाने पर भी ज़िन्दगी की सलामती न था। उन से क्या हमने तुम्हें मुक्त नहीं किया ? आज कल क्या तुम बद्रिकाश्रम से सेतुबन्धु तक सोना उछालते बेखटके नहीं जा सकते हो ? ये रेल, तार, डाक सड़क और अमन आराम क्या हमारे ही प्रताप का फल नहीं है ? क्या किसी पिण्डारी लुटेरे को ज़रा भी गड़ बड़ करने पर दण्ड नहीं होता है ? आज मुगलों के ज़ुल्म और मराठों की लूट कहाँ है ? क्या हमारे इन उपकारों को न मानोगे ? हमने तुम्हें स्वाधीनता और अधिकार देकर साम्राज्य में सहायक नहीं बनाया है ?"

हाँ यह सब तुम ने किया है। पर किस उद्देश्य से ? कि तुम उसके बदले में गहरा हाथ मारो। तुम हमें धर्म स्वातन्त्र्य देने की बात कहते हो पर अपने धर्म पर तुम्हें खुद कुछ आस्था नहीं है तुम्हारा वास्तव में कोई धर्म ही नहीं है। न तुम्हारे भाव धर्म को छूगये हैं। तुम धर्म को एक व्यर्थ ढोंग समझ कर तुच्छ जानते हो। और भारत के विशाल

मैदान में धर्म के झगड़ों में पड़ने से तुम डरते भी थे। इन झगड़ों के कठिन परिणामों से तुम सावधान थे। इसी से धर्म में श्राड़ न लगाई। मगर तुम ने प्रान्त धर्म को उत्तेजन दिया था। किस लिये तुम ने मिशनरियों को अपना सगा समझा था? तुम्हारे राज्य में हिन्दू-लड़कों और लड़कियों को क्यों बाईबिल ज़बरदस्ती पढ़ाई जाती है? इन सब चालों को हम समझते हैं। फिर दार्शनिक हिन्दुओं और कट्टर मुसलमानों को धर्म सिखाना टेढ़ी खीर थी। तुम्हें बैर भड़क उठने का भय था। तुमने धार, मैसूर और ग्वालियर स्वतन्त्र किये इस लिये कि इन टुकड़ों को डाल कर दूसरों का भूंकना बन्द करें। राज्य हड़पने के नतीजे सत्तावन के दिनों में भोग कर तुम्हारी अक्ल ठिकाने आगई थी। इन तुच्छ राज्यों का स्वार्थ त्याग कर तुम ने उन सभी राजाओं को वशीभूत कर लिया जो तुम से सतर्क रहते थे। और जो सतर्क रहते तो बड़ी विपत्ति थी फिर भी उन के राज्यासन तुम्हारे सिपाहियों की नंगी तलवार पर धरे हैं। उन्हें तुम ने आलसी, असावधान और अचंचल बनाया है और जब तक वे आलसी असावधान और अचंचल हैं तभी तक उन को कुशल है। ज़रा भी चीं चपड़ करने पर उन्हें पागल या नालायक कह कर गद्दी से उतारते तुम्हें के मिनट लगते हैं? उन की हैसियत तुम्हारे अमरछी वायसराय कर्ज़न ने दिल्ली दर्बार में

अपने अर्दली (?) बना कर प्रकट कर दी थी। उनके भाग्य अरक्षित हैं और उन्हें फूटते देर नहीं लगती है।

तुम ने स्कूल खोल कर हमारे बच्चों को स्वदेश स्वधर्म और स्वजाति से बागी बनाया है—आज वे तुम्हारे से कपड़े पहन कर तुम्हारी सी बोली बोल कर " अमर विजय राज्य तपो, ब्रिटेन ! युद्ध उच्चारण करते हैं । व्यापार की डींग हाँकते हुए लज्जित होना चाहिये। तुम्हारे सारे प्रमाणिकपन, सारे न्याय केढोंग सारे सत्यताके स्वाँग सिर्फ अपने ही व्यापार केलिये है। अपने ही व्यापारके लिये तुमने कला कौशल को नष्ट किया और कारीगरोंको किसान बनाया,अपने ही व्यापारके लिये तुमने रेल तार डाक बनाये, अपना ही व्यापार तुम इन से कर रहे हो-ये विभाग ही कुछ छोटे व्यापार नहीं हैं। तुमने इस मसले में हमें उतनाही मज़ा दिया है जैसे काँचका खिलौना कोई बालक चार पैसे में मोल लेकर मजा पाता है। इस रत्ती भर खांड के बदले तुम ने क्या पाया है—यह बात क्यों छिपाते हो? छापे का स्वातन्त्र्य! कैसी विडम्बना है? कितने पत्र, कितनी पुस्तकें कितने प्रेस ध्वंस हो गये। एक शब्द मुंह से निकालना कठिन है इस स्वतन्त्रता की हवा में हमारा दम घुट रहा है। तुम में सच्ची बात सुनने की शक्ति थी ही नहीं।

तुम्हारे अस्पताल जिनके विषय में तुम्हें बड़ा अभिमान है और जिन्हें तुम अपने हाथ का एक बड़ा भारी पुण्यकर्म

समझते हो वास्तव में पाप की जड़ है । छोटी श्रेणी के गरीब जिन के लिये तुमने कम्हें खोला है । उन के स्वास्थ्य और रोग की कितनी उपेक्षा और तिरस्कार से व्यवस्था की जाती है । एक मनुष्य की जान के पीछे तुम्हारे अस्पताल में जितना खर्च किया जाता है उतने से कई गुना अधिक खर्च लोग अपने पालतू पशु के रोग दूर करने में कर देते हैं । इस के सिवा कितने घृणित माँस रस, कितने पशुओं के पित्त, कितने अपवित्र पदार्थ तुम चुपचाप धोखे में बिचारे भोले भाले हिन्दू नरनारियोंके कण्ठ में उतार देते हो ! कितनों का धर्म भ्रष्ट करके तुमने क्रिया कर्म शांति का नाश किया है ।

फिर तुमने डाक्टरोंके जरियेसे वही काम सदा लिया है जो कोई लम्पट किसी सती को बिगाड़ने के लिये किसी दूती से लेता है । मुगल बादशाहों को फुसलाने वाले डाक्टर थे । अमीर काबुल को फंसाने वाले डाक्टर थे । और मुर्शिदाबाद के नवाब के घर का सब हाल खोलकर बताने वाले डाक्टर थे । और आज हज़ारों हिन्दू स्त्री बच्चों को ईसाईयत की ओर खींच ले जाने वाले डाक्टर ही हैं ।

यह पवित्र चिकित्सा धर्म जो भारत में करुणा और उदारता के आधार पर था जिस का पृथ्वी पर कोई बदला या भी नहीं तुम्हारे डाक्टरोंका फीस कमाने का धंधा बन गया है।

मैडिकल कला कारखानों के सम्बन्ध में भी तुम्हारी ढोंग

झूठी है। इस मैशिनरी ने यूरोप को उजाड़ना और अशान्त करना शुरू कर दिया है और तुम देखोगे कि यह भीमकाय पाप तुम्हारे योरोप को विध्वंस कर देगा । मिलों में काम करने वाले लोगों को देखो क्या वे गुलाम नहीं हो गये हैं ? उन में जो स्त्रियां काम करती हैं उनकी दशा देखकर क्या कलेजा नहीं थर्राता ? इन कलों की आँधी ने सारे देश को हिला डाला है।

तुम्हारे ये प्यारे राक्षस कल पुर्जे चरित्र के घातक हैं— चरित्र का नाश करके अगर पूंजीदार धनी भी बन जाय तो अमीर होकर भी हिन्दुस्तान कभी स्वाधीन न होगा । इस ढंग के धन्धों में पड़े हुये भारतीय मजदूरन तुम्हारे बन्धु हो गये हैं। बिना तुम्हारी गुलामी में रहे उनका काम ही नहीं चल सकता है यह तुम्हारी कलें बाँबी हैं जिन में असंख्य साँप हैं। यह ट्राम, बिजली और मोटर की पों पों पों पों उनकी जहरी फुफकार हैं।

सती की बात ही छोड़ दो । इस उत्कट भयानक व्रत के द्वारा भारत ने अपनी वह पवित्रता बनाये रखी थी जो पृथ्वी पर कभी किसी को नसीब न हुई थी। यह एक कठोर कर्तव्य था

जिसे तुम ? जिन की स्त्रियें जो सुहागरात की प्रभात को ही अदालत में तलाक के मुकदमे चलाती हैं नहीं समझ सकते। हाँ उस में बुराइयाँ प्रचलित हुई थीं परन्तु तुम सती को रोकने पर किसी तरह व्यभिचार को भी रोक सकते, विध-

वालों के स्वत्वों और घायिलों की कोई व्यवस्था करते तो एक बात होती। तुमने भूख के डर से मरने वालो को बाँध कर डाल दिया। अब वह जूझ कर न मर सको, तड़प २ कर धम्रशाप भोग २ कर, पाप का टोकरा सिर पर लाद कर मर रही है। विदेशियों! किस लिये तुम हमारी घर की सभ्यता में कूद पड़े थे और किस लिये तुम उस का हम से समर्थन चाहते हो? बाल हत्या, गर्भपात बराबर जारी हैं। सिर्फ़ रंग ढंग बदल गया है। इस काम में तुम्हारी ज़हरीली दवाइयों और फ़ाखपन्थी डाक्टरों ने खूब यश कमाया है।

सोना उछालते चले जाने की बात कह कर क्यों हंसी उड़ाते हो? अब सोना हमारे पास छोड़ा कहां है? जब हमारे पास एक हाथ में सोना था तो दूसरे हाथमें तलवारकी मूँठ भी थी, और कलाई में उसके योग्य बल भी था। उसकी बदौलत अर्बों रुपये के हीरे मोती वस्त्र रेशम रुंढो पुञ्जों का व्यवहार अखण्ड रूप से चलता था। आज किसी के हाथ में तलवार नहीं, और किसी के हाथ में सोना भी नहीं। तुमने "हम रक्षा करेंगे" कह कर तलवार छीन ली, और "हम रक्षित रक्खेंगे" कह कर सोना छीन लिया। डाकू और ठग क्या लेने अब हमारे घर आवेंगे? कंगले के घर पर क्या डाका पड़ेगा? हम तो क्या खांय? क्या पीवें? इस उधेड़ बुन में लगे हैं। बाबा! तुम्हारी शान्ति रक्षा तुम्हारे सोने के लिये है। लुटेरे और मुगलों ने

लूट कर धन रखा तो देश में ही था तुम तो ले भागे ! असंख्य मार्गों से अनर्गल सम्पत्ति ले गए हो। पहले राजा नवाब जुल्म से पैसा छीनते थे। तुम कौशल से ठगते हो। हीरा मोती पन्ना सोना लेकर कागज़ों का गड्डा दे दिया है। तुम एक दिन सटक सीताराम बन जाना और हम उन्हें जलाकर अग्निम रसोई बनायेंगे।

ग्रेटब्रिटेन ! हम तुम्हें अच्छी तरह समझ गये हैं। तुम्हारी मैशीनरी के सामान में, तुम्हारे कानूनी स्तोत्र पाठ में, तुम्हारे शान्ति राज्य में, तुम्हारे कई के यन्त्रों में, तुम्हारे न्याय की उन्मत्त वायु में, तुम्हारी रेल गाड़ियों और बिजली की कीर्ति-कहानियों में, तुम्हारी राजसभा की चाल पेचों में, तुम्हारे औदार्य परमार्थ और सुधारों के घमण्ड में, उन्नीसवीं शताब्दि के सांकेतिक कुशल सौदाई और गड़बड़ी ठग विद्या में, ठीक वैसा ही हलाहल विष है जैसा किसी मिठाई में शत्रु को मिलाना पड़ता है। अपने घमण्ड, तोप, गोला गोली और संगीनों की गर्मी में तुम आस पास का कुछ नहीं देख सकते हो। हम समझ गये हैं जब तक तुम्हारा पेट न भर लेगा तब तक तुम हमें खाओगे। और यह तुम्हारी ईसाइयत तो तुम्हारी भोजन की मेज की छुरी चम्मच अथवा भोजन समय का पियानो बाजा है तुम लोगों को बाजे की ताल पर दाँत और छुरी चलाने का अभ्यास होता ही है।

तुम यहा समझते हो कि हिन्दुस्तानियों को किसी न किसी तरह फटे पुराने वस्त्र और रूखी सूखा रोटिया मिलो जाती हैं, अब उन्हें और किसी बात की ज़रूरत ही नहीं है। पर भाइयों! केवल रोटी के लिये लाखों पुरुष नहीं कटाये जाया करते हैं। पाण्डव कौरव युद्ध, ग्रीक और ईरानियों के युद्ध, रोमन महाराज्य की पृथ्वी विजय, योरोप के जंगलियों का दक्षिण में आना, अरबों का जंगलों मे भटकना जेरूसलम की दीवारों पर कूद्रे उसका धावा बोलना। मुहम्मद का नंगी तलवार लेकर मैदान मे आना। प्रोटिस्टेंट और कैथोलिकों के सदियोंके खूनी झगड़े, फ्रांस के प्रजातन्त्र के सामने समस्त योरुप का एक साथ अड़ जाना, प्राचीन इटली और ग्रीस का पुनर्जीवित होकर घूमना। फ्रांस और जर्मनी का साधारण बात पर लड़ मरना, रूस और तुर्क का धर्मके बहाने लड़ पड़ना, और तुम्हारा स देशमें सबके सिरेपर लोहा बरसा कर अधर्मका रक्त बहाना, ह सब किसलिये? क्या एक टुकड़ा रोटीके लिये? या अंग ढकने के लिये? नहीं, राम, अर्जुन, दुर्योधन, अलेक्जेन्डर, सीज़र ...पासियन, पियारस हानिबाल, सीपियो, सिपोलियन, पोरस क्या रोटीके टुकड़े के लिये धरती को कम्पायमान करके लाखों करोड़ों प्राणियों के लोहू से धरती को लाल कर गये हैं? नहीं। इसमें और भी गम्भीर प्रश्न है, राज्य सत्ता, नीति, धर्म रक्षा, स्वातन्त्र्य, प्रजा के अधिकार रक्षा, धर्मरक्षण आदि इसके कारण

हैं। ये कारण अमर हैं । आर्यों के बच्चे इन्हें भूले नहीं हैं। भूल भी नहीं सकते, इनके लिये सदा लड़े हैं और आगे लड़ेंगे।

तुम गदर के उन अत्याचारों का बढ़ २ कर सवा लाने के शब्दों मे जिक्र करते हो जो तुम्हारी कुछ स्त्री बच्चों पर निर्दयता पूर्वक नाना साहेब ने किये थ । वास्तव मे वे निन्दनीय थे । बुरी बात हमेशा बुरी है । परन्तु विद्रोह तो विद्रोह होता ही है—क्या तुम्हें अन्यत्र ऐसा नहीं सहना पड़ा ? फिर तुमने गदर के बाद मे तिगुने क्रोध और द्वेष से भारत मे हत्या-काण्ड मचाया था । वे तो बलवाखोर लुच्चे थे—पर तुम तो राजा और बुद्धिमान थे । तुमने अभय वचन देने के पीछे वैर को आग में अन्धे होकर सैकड़ों मनुष्यों को वृक्षों मे फाँसी पर लटका दिया । कितनों को तोप के आगे बखियाँ उड़ावीं और उनके शरीर के टुकड़े२ करके कुत्तों तो खिला दिया। पति के मारे जाने पर अनाथ स्त्रियों पर कुछ भी तरस न खाकर तुमने उनके घरों को लूट लिया, तोप से उड़ा दिया—या आग लगा दी। हजारों स्त्रियाँ भूखी मर गई हजारों युवतियों ने पत खोई, हजारों मर्द रास्ते में कंकड़ों की तरह ठुकरा कर धूल मे मिला दिये गये। कितने महल देवालय अर्मीदोज़ करा दिये गये, रणक्षेत्र में मरते हुए। घायलों की छाती में पानी २ पुकारने पर तुम्हारे उजड्ड गोरों ने संगीनें भोंक दीं। कोपो निर्दोषी कतल किया गया। शरणागत बादशाह के तोप के मु,

ये गये। तिसपर भी हमने आज तक सदा तुम्हारी एक एक बून्द के स्थान पर अपने रक्तका महासागर बहाया है— : क्या झूठ है ? क्या इससे तुम इन्कार कर सकते हो ?

तुम्हारी सरकार का पर्दा फाश हो गया है। हम अपनी ाथ महासभा में गुंथ गये हैं। उस सभा का कहना है कि हारी राज्य पद्धति जंगली है। क्योंकि उसके कानून की से तुमने निरपराध प्रजापर गोली बरसायी। स्त्रियों के मुख : से घूंघट हटा कर उनके मुंह पर थूक दिया। पुरुषों को ा करके वेश्याओं के सामने कोड़े लगाये थे। भले लोगों को ड़ों की तरह रेंग २ कर चलाया गया। उस सभा का हना है कि तुम्हारी राज्य पद्धति लुटेरी है तुम तनखाह के ामे सब रकम जेब में भर कर लेजा रहे हो और भारत को ाली और दिवालिया बना रहे हो। वह सभा तुम पर अप च लगाती है कि तुम्हारी सरकार मनुष्य समाज के नैतिक ावन को नाश करने वाली है। क्योंकि तुमने अपनी आमद के ाल से ही शराब की बिक्री जारी कर रखी है। इस सभाका ाश्वास है कि तुम भारत की भारतीयता को नष्ट करना और ... केव्यापारकोउत्तेजन देना अपनी राजनीतिसमझते हो। ... ारा प्रजा द्रोह है। वस समस्त विश्व के स्वामी

दिये गये। जिसपर भी हमने आज तक सदा तुम्हारी एक एक का बून्द के स्थान पर अपने रक्तका महासागर बहाया है—यह क्या झूंठ है ? क्या इससे तुम इन्कार कर सकते हो ?

तुम्हारी सरकार का पर्दा फाश हो गया है। हम अपनी राष्ट्राय महासभा में गुथ गये हैं। उस सभा का कहना है कि तुम्हारी राज्य पद्धति जंगली है। क्योंकि उसके कानून की रू से तुमने निरपराध प्रजापर गोली बरसायी। स्त्रियों के मुख पर से घूंघट हटा कर उनके मुंह पर थूक दिया। पुरुषों को नंगा करके वेश्याओं के सामने कोड़े लगाये थे। भले लोगों को कोढ़ों की तरह रेंग २ कर चलाया गया। उस सभा का कहना है कि तुम्हारी राज्य पद्धति लुटेरी है तुम तनखाह के बहाने सब रकम जेब में भर कर लेजा रहे हो और भारत को ऋणी और दिवालिया बना रहे हो। वह सभा तुम पर अपराध लगाती है कि तुम्हारी सरकार मनुष्य समाज के नैतिक जीवन को नाश करने वाली है। क्योंकि तुमने अपनी आमद के ख्याल से ही, शराब की बिक्री जारी कर रखी है। इस सभाका विश्वास है कि तुम भारत की भारतीयता को नष्ट करना और विलायत केव्यापारकोउत्तेजन देना अपनी राजनीतिसमझते हो।

यह तुम्हारा प्रजा द्रोह है। उस समस्त विश्व के स्वामी के सम्मुख, हम असंख्य भारतीय नर नारी तुम्हारा शक्तिमान सत्ता पर यह अभियोग लगाते हैं।

## चौदहवां अध्याय।

—:o:—

### एशिया की बेचैनी।

भारत के सिवा, भूमध्य सागर में अरब के पश्चिम साइप्रस टापू से लेकर चीन के पूर्वी बन्दर वेई-हेई वेई तक एशिया महाद्वीप के दक्षिणार्ध में जितने टापू, प्रायःद्वीप, बन्दर और दूसरे युद्धोपयोगी स्थान हैं, उन सब पर आज प्रतापी यूनियन झंडा फहरा रहा है। नक़्शा देखने से पता लग जायगा कि समुद्री मार्गों पर जिन २ स्थानों से अधिकार किया जा सकता है। उन सभी स्थानों पर अंग्रेजों का कब्ज़ा है। अंग्रेजों के पास यदि सब से बड़ी शक्तिशालिनी जल सेना न हो तो दक्षिणी एशिया पर उनका अधिकार रखना कठिन हो जाय। पर अभी तक उसे समुद्रों पर अमोघ अधिकार प्राप्त है, और यूरोप अमेरिका, और एशिया के राष्ट्रों को उस से समुद्रीय प्रश्नों पर झुकना ही पड़ता है। इस एकाधिकार के कारण उसे बेहिसाब आर्थिक और व्यापारिक-लाभ हैं।

ए फारस, बलूचिस्तान, लक्षद्वीप, मालद्वीप, लंका, बरमा अण्डमेन, नीकोबार, मलाया, सिंगापुर, सलक, उत्तरी बोर्नियो, हाँक कांग और वेई हई वेई आदि सभी स्थान हैं।

साइप्रस से भूमध्य सागर सीरिया और मिश्र की निगरानी होती है। पेरिम और अदन से बाबुल, मन्दप और लाल समुद्र की हिफाजत होती है। अदन की खाड़ी की निगाह रखने को सुकोट्रा टापू है और दक्षिणी अरब पर निगाह रखने के लिये कुरिया मुरिया टापू और खाड़ी इतने काम की हैं कि उसके लिये अंग्रेज़ फ्रान्स से लड़ गये। मालद्वीप और लंका भारत की रक्षा के ठिकाने हैं। अण्डमान, निकोबार और सिंगापुर आदि से मलक्का अलडमरूमध्य की देख रेख हो जाती है। हाँग कांग चीन का भारी बन्दर है ही। वेई हई वेई से अंग्रेज़ जापान के पीनिया नाग पर सशंक दृष्टि जमाये रहते हैं। इस प्रकार एशिया का दक्षिणार्ध अंग्रेज़ी सत्ता से घिरा हुआ है।

गत महा युद्ध में आ नई भूमि तुर्कों से मिली हैं तथा अफ़ग़ानिस्तान के कुछ हिस्सों को छोड़ कर भारतवर्ष सहित २१ लाख वर्ग मील धरती एशिया में अंग्रेज़ों के अधिकार में है जिस में १ लाख ७० हज़ार विदेशियों के अलावा ३१ करोड़ आदमी रहते हैं जिन में दो तिहाई ब्रिटिश प्रजा है।

ये समस्त देश राजनैतिक दृष्टि से चार भागों में विभक्त हैं। स्वतन्त्र, स्वराज्य, भोगा, उपनिवेश और संरक्षित या

आधोन। इन में अन्तिम श्रेणी में कुछ ऐसे भी देश हैं। जिन में प्रत्यक्ष ब्रिटिश का शासन नहीं है—पर वे हर तरह अंग्रेजों के दबाव में हैं इसलिये दूसरी शक्तियों को सदा उन से दूर रहना चाहिये।

सब से प्रथम योरोप की दो शक्तियाँ ऐशिया में आई थीं, एक डच और दूसरी पोर्चुगीज, उस समय पोप को यह अधिकार प्राप्त था कि वह नये प्राप्त प्रदेशों को जिस प्रकार चाहें इन दोनों देशों को बाट दे।

पहले दक्षिण और मध्य अमेरिका स्पेन और पुर्तगाल के हाथ में थे। पर पीछे वे स्वाधीन राज्य हो गये, यूरोपियन साम्राज्यवाद से इन प्रजातन्त्र राज्यों की रक्षा केवल इस लिये होसकी थी कि मनरो ने निश्चय कर लिया था कि हम दूसरों का देश न लेंगे। और न कोई दूसरा हमारे देशों पर अधिकार करेगा। १६ वीं शताब्दि में यदि बड़ी २ शक्तियों में मत भेद न हो जाता तो अफ्रीका से स्पेन और पुर्तगाल अवश्य निकाल दिये जाते। पर अमेरिका ने स्पेन की जल शक्ति को नाश कर दिया था—इसलिये ऐशिया में उस का कुछ भी न रह गया। उसके अधिकांश राज्य अमेरिका के संयुक्त राज्यों ने लेलिये, जो बचे वह उसने जर्मनी को बेच दिये।

सत्रहवीं शताब्दि के मध्य में हालैण्ड ने पुर्तगाल को लंका से निकाल दिया। और १८ वीं शताब्दि में अंग्रेजों ने हालैण्ड

से उसे छीन लिया। फिर भी अभी एशिया के कुछ भागों में पुर्तगालियों को प्रायः १ हज़ार वर्ग मील धरती है जिस में दस लाख आदमी बसते हैं पर उनका कुछ भी महत्व नहीं है, इधर ७०० वर्षों से ब्रिटेन का पुर्तगाल के साथ कोई झगड़ा भी नहीं हुआ है। न उसने कभी ब्रिटेन के शत्रु का साथ दिया है।

पर एशिया में हालैण्ड की दशा कुछ और ही है—उस के अधिकार में डच इन्डीज़ हैं जिन में जावा, सुमात्रा, बोर्नियो का बड़ा अंश तथा कुछ और भी टापू हैं। ये स्थान खूब धन धान्य पूर्ण भी हैं। इस के सिवा भारतीय सागर में सैनिक महत्व भी रखते हैं।

उनका क्षेत्र फल ७॥ लाख वर्ग मील है, और उन में अधिकांश मुसलमानों की बस्ती है। इसलिये मुसलमानी उपनिवेशों की दृष्टि से हालैण्ड भी एक महत्व पूर्ण शक्ति है।

एशिया में ब्रिटेन ने हालैण्ड से अनेक स्थान छीने हैं। सत्रहवीं शताब्दि में डचों के पास अंग्रेज़ों के मुकाबिले की बड़ी शक्ति थी। पर वे धीरे २ प्रबल होने लगे। १२ अगस्त सन् १८१४ में लन्दन में जो सन्धि हुई थी उसमें अंग्रेज़ों ने स्वीकार किया था कि ईस्टइन्डीज़ और वैस्टइन्डीज़ कुछ-को टापू डचों के पास हो रहेगा। यद्यपि इस सन्धि को अनेक राजनैतिक अनुचित बताते हैं—परन्तु इससे अंग्रेज़ों को

लाभ ही हुआ है। गत महायुद्ध में यदि हालैण्ड इस सन्धि के आधार पर तटस्थ न रहता और जर्मनी का साथ देता तो अंग्रेज़ों की बड़ी कठिनाइयाँ बढ़ जाती।

विस्तार और जन संख्या के ख्याल से डचईस्टइण्डीज़ सारे संसार में महत्व पूर्ण कहे जाते हैं। भारतीय महासागर से प्रशान्त महासागरतक मलक्का जल डमरू मध्यसे न्यू गाइना तक जितने टापू हैं प्रायः उन सभी में डचों का अधिकार है। केवल बोर्नियो का कुछ भाग अंग्रेज़ों के हाथ में है। और टिमूर का पूर्वी भाग पुर्तगाल के हाथ में। इतनी भूमि यहां उपनिवेश के कार्यों के लिये डचों के पास है कि मुद्दत तक और भूमि की ज़रूरत ही न पड़ेगी। डचों ने यहां शिक्षा प्रचार और कृषि की खूब उन्नति की है।

फिर भी प्राय उपद्रव होते रहते हैं, और उन्हें शमन करने में डचों को काफ़ी शक्ति लगानी पड़ती है।

सन् १३ में डचों ने अपने उपनिवेशों की रक्षा के लिये एक शक्तिमान जहाज़ी बेड़ा खड़ा करने का विचार किया था। पर महायुद्ध समाप्त हो जाने से वह बन न सका, फलत इस समय भी ईस्ट इन्डीज़ अरक्षित हैं, यदि कोई घटना हो तो डच शक्ति उसकी रक्षा नहीं कर सकती, इसी कारण सबसे ज्यादा उत्सुकता—राष्ट्र संघ को दृढ़ करने की डचों को थी और है,

और यह चाहता है कि सब राष्ट्रों के उपनिवेशों की रक्षा का भार उसी पर रखा जाय।

उन्नीसवीं शताब्दि के अन्त में एशिया में स्पेन का कोई उपनिवेश न रह गया था। और प्रशान्त महासागर में उसका स्थान जर्मनी और अमेरिका के संयुक्त राज्यों ने ले लिया था। सन् १८९९ में फिलीपाइन्स का द्वीप पुञ्ज प्रायः ६ करोड़ रुपये पर स्पेन ने अमेरिका को बेच दिया। १९०० में इंग्लैण्ड-जर्मनी और अमेरीका के संयुक्त राज्यों में एक समझौता हुआ जिससे समोअन टापू जर्मनी और संयुक्त राज्यों में बाँटना तै हो गया परन्तु—समोअन, हवाई और ग्वाम पर अमेरिका ने वहाँ की प्रजा की स्वीकृति से अधिकार किया था। पर फिलिपाइन्स पर अधिकार करते समय उसकी प्रजा की स्वीकृति नहीं ली गई थी। अमेरिका की इच्छा उपनिवेश स्थापित करने की न था, पर संयोग वश ही ऐसा हो गया, कि फिलिपाइन्स द्वीप पुञ्ज में सब कोई ३ हज़ार टापू हैं। जिनमें १ करोड़ से अधिक मनुष्य रहते हैं। जो प्रायः मलय से आये हुवे हैं। बहुत से ईसाई हो गये हैं, वहाँ भिन्न २ जाति और भाषायें हैं १० लाख मुसलमान भी हैं। अब अमेरिका ने कानून बना कर यहाँ एशिया वालों को आने ही से रोक दिया है।

फिलिपाइन्स ने स्वाधीन होने को अमेरिका से खूब युद्ध किये और उन्हें अन्त में अमेरिका तन्त्र के अन्तर्गत स्वतन्त्रता

प्रदान करदी गई। यहाँ शिक्षा प्रचार भी खूब हुआ। इसका फल यह हुआ है कि फिलिपाइन्स द्वीप वासी खूब उन्नत हो रहे हैं। अब तुर्क की बात लीजिये। १८ वीं शताब्दि के दूसरे चरण में तुर्की का आस्ट्रिया और रूस से युद्ध हुआ जिसमें आस्ट्रिया ने तुर्की को हंगरी से निकाल दिया और रूस ने उनका बहुत सा प्रदेश छीन लिया। तुर्क बहुत कमजोर पड़ गये थे और कई योरोपियन शक्तियाँ मिल कर उसे हजम करना चाहती थीं—पर उनमें मेल न था। जिसकी बदौलत तुर्की का १८ वीं शताब्दि में सर्वनाश होने से बच गया। पर गत महा युद्ध के समय तुर्क को बाँट खाने का समझौता महाशक्तियों ने गुप्तरूप से कर लिया था। इस बंट धारे से तुर्की प्रजा के हित और इच्छा का कुछ भी ख्याल न था।

योरोप की इस पाप चेष्टा से तुर्क साम्राज्य को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा—उन्नीसवीं शताब्दि में तुर्क साम्राज्य को खण्डित कर दिया गया। दो युद्धों में रूस ने तुर्क से कृष्णसागर के पूर्व का बहुत सा प्रदेश ले लिया। इधर यूनान सरबिया, मान्टीनिगरो, रूमानिया, और बलगेरिया अपने उद्योगों से स्वतन्त्र हो गये। और विवश तुर्की को योरोप से निकल जाना पड़ा। पर महायुद्ध ने तो वह विकट परिस्थिति ला खड़ी की कि जिसे यूरोप गत १०० वर्ष से रोक रखना चाह रहा था।

अन्त में आँख खुलने से प्रथम ही तुर्क साम्राज्य का नाश होगया। और १६०८ में तुर्क में प्रबल राज्य क्रान्ति उपस्थित होगई। अब्दुल हमीद को च्युत किया गया और तरुण तुर्क दलने नव्य तुर्क राष्ट्र की अवतारणा की। उन्हों ने नई पार्लिमेन्ट में युवकों को ही भरा। अधिकार भी उन्हीं को दिये। नियमित कर एवं अनिवार्य सैनिक सेवा का नियम बनाया। महायुद्ध में तुर्क को तटस्थ बनाये रखने के लिये अंग्रेज़ों ने बहुत चेष्टा की, तुर्क, में स्वाधीनता के भाव जाग्रत होगये थे। तुर्क ने लिखा था:

"—आप लोग यदि हमें तटस्थ रखना चाहते हैं तो यह निश्चित कर दीजिये कि आप लोगों को हमारे राज्य में कोई विशेष अधिकार प्राप्त न होंगे। अंग्रेज़ हमें हमारे दोनों जहाज़ दे देंगे और हमारे आन्तरिक प्रबन्ध में आगे कोई हस्तक्षेप न किया जायगा:—

पर ज्यों ही तुर्क महायुद्ध में शरीक हुआ—युरोपीय युद्ध संसार व्यापी युद्ध होगया। जर्मनी तरुण तुर्कों की गति विधि को देखकर समझ गया था कि वह तटस्थ रह नहीं सकेगा। वही हुआ। जर्मनी यह भी चाहता था कि युद्ध का दारमदार तुर्क पर ही रहे। रूसी की हार जीत से सभी की हार जीत है। उन्होंने युद्ध सामग्री और रुपयों की तुर्क पर वर्षा कर दी। इस घटना से रूसियों के लिए दक्षिणी मार्ग बन्द हो गया था,

और मित्र राष्ट्रों को अपनी बहुत सी सेना केराश, फारस, मोसोपोटामिया, और मिश्र में लगा देनी पड़ी। पर जब मिश्र और काकेशियस में तुर्क हारे। तब जर्मनी ने समझ लिया कि अब हम यदि पश्चिमी रण क्षेत्र में विजय न प्राप्त कर सकेंगे, तो तुर्क की रक्षा कठिन होगी और बाहर भी एशिया में हम प्रवेश न कर सकेंगे। और इसी लिए जर्मनी ने वह न पर सारा ज़ोर लगा दिया था।

१६१८ की ग्रीष्म में जब अंग्रेज़ पैलेस्टाइन में आगे बढ़ने का उद्योग कर रहे थे और जर्मन लोग पश्चिम में निराश हो चुके थे। तब तुर्कों को केवल काकेशस पर अधिकार कर लेने की आशा थी, वे कृष्ण सागर और कैस्पियन सागर के बीच तेज़ी से बढ़ रहे थे कि इतने मे ४ वर्ष का संघ टूट गया। बल्गेरिया ने हथियार रख दिये। और तुर्क—हंगरी तथा जर्मन ने समझ लिया कि हमारे भाग्य फूट गये। यदि १६१७ मे रूस का साम्राज्य नष्ट न हो जाता तो तुर्क का निशान भी नक्शे पर न रहता।

पर तरुण तुर्क ने १० वर्ष ही में तुर्क साम्राज्य के टुकड़े टुकड़े करके उसे एक राष्ट्र बना दिया। आज तुर्क जिस रूप में हैं—वह सब पर प्रकट है।

फारस गत महायुद्ध की लक्ष्य भूमि तथा शायद भविष्य महा युद्ध की रण भूमि है।

पैरिस की शान्ति सभा में एक बार फारस के मन्त्री ने कहा था—

"हम लोग भी शिक्षित और सभ्य हैं, तथा हमारी स्वाधीनता में जो ब्रिटेन और रूस बाधक हैं इस में फ्रांस का पूरा दोष है—वह अपने साथियों के लाभ के लिये हमारा पूरा नाश देखता रहा है। फ्रांस ने जिस प्रकार पोलैण्ड को रूस के सुपुर्द कर दिया था। अब फ्रांस हमारे देश से तभी लाभ उठा सकता है जब वह हमें पूर्ण रूप से स्वतन्त्रता दे। साथ ही अब हम लोग इंग्लैण्ड का भी आदर और विश्वास उसी समय करेंगे—जब वह हमारे सम्बन्ध में अपनी पुरानी नीति बदल डालेगा।"

गत ५० वर्षों से योरोपियन शक्तियाँ पेशिया पर अपना प्रभुत्व जमाने के लिये फारस में लड़ रही हैं। और अपने स्वार्थ के लिए उसकी स्वतन्त्रता एवं सभ्यता का नाश किया जा रहा है। यह बीसवीं शताब्दि में भी योरोप की शक्तियों द्वारा बल पूर्वक सब प्रकार की उन्नतियों से वंचित किया जा रहा है। कैस्पियन सागर के दोनों ओर रूस ने फारस को दबाया और ट्रान्स काकेशियस प्रान्त जिस में स सारकी सब से अच्छी तेल की खानें हैं उसने युद्ध में छीन ली।

- उधर इंग्लैण्ड भारत के मार्ग में फारस के होने से उस पर अपना प्रभाव रखना आवश्यक समझता है। इन दोनों

शक्तियों में कितनी चालें 'दाव' चाल हुये हैं। और उन के बीच बिचारा फारस किस तरह पिसा है यह कहां तक कहा जाय?

युद्धकाल में शत्रुमित्र ने फारस का इस प्रकार उपयोग किया—मानों यह लावारिस प्रदेश था। यदि रूस में क्रान्ति न होती तो युद्ध के बाद फारस का भी खातमा था।

पर बोलशेविक सरकार ने घोषणा निकाल कर प्रकट किया कि हम १९०७ की रूस और अंग्रेजों की घृणित संधि को नहीं मानते, तथा फारस को पूर्ण स्वतन्त्र स्वीकार करते हैं।

पर रूस की सेनायें हटते ही पूर्ण प्रान्त पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया। और शांति महासभा के समय एक भी समाचार देश में बिना जाँचे नहीं जाने दिया। पैरिस में जब शान्ति सभा बैठी तो फ़ारस ने बहुत ही न्याय प्रार्थना की, पर परिणाम कुछ भी न निकला, अन्त में प्रारब्ध और संयोग के आसरे वह बैठा है।

अब जापान की बात लीजिये। सिंगापुर से कमसचट का तरफ एशिया के पूर्व में टापुओं की एक शृङ्खला है। ये टापू प्रशान्त महासागर और एशिया के बीच में और साथ ही एशिया तथा आस्ट्रेलिया के बीच में एक अवरोध का काम देते हैं। यही जापान है।

जापान ने जाग कर देखा कि आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड पर अंग्रेजों का पूर्ण अधिकार है। और दूसरे जिन टापुओं पर

राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से जापान का अधिकार हो सकता था। ये सब टापू और और यूरोपियन शक्तियों के उप निवेश बन चुके हैं। १६ वीं शताब्दि के आरम्भ में उस ने बड़ा ही कठिनता से आस पास के कुछ टापुओं पर अधिकार प्राप्त किया। फिर चीन से लड़कर फारमोसो और रूस से लड़कर सेघेलियन का दक्षिणार्ध ले लिया। फिर जब उसने कोरिया पर अधिकार कर लिया, तब मानों वह जापान और मंचूरिया के बीच के समुद्र का मालिक बन गया। इस के बाद महायुद्ध में उस ने जर्मनी से मरियाना, मार्शल कारोलिन और पेल्यू टापू भी ले लिये। इस के बाद शान्ति सभा में ग्रेट ब्रिटेन के समझौते के अनुसार भूमध्यरेखा से उत्तर के सब जर्मन टापू जापान को मिल गये।

कोरिया प्रायद्वीप जापान सागर और पीत सागर के बीच जापान की ओर निकला हुआ है। राजनीतिज्ञों का कहना है कि कोरिया जापान के कलेजे पर तनी हुई कटार है। यदि वह किसी योरोपियन शक्ति के हाथ में जाय तो वह जापान के लिये उतना ही भयानक है जितना ग्रेट ब्रिटेन के लिये बेलजियम का जर्मनी के हाथ में जाना। यदि कोरिया में योरोपियन शक्ति हो तो वह जापान को चीन से बिलकुल पृथक रख कर चीन के उत्तरी भाग पर सहज में अधिकार कर सकती है।

कोरिया में विदेशी जाने नहीं पाते थे—जब जब पादरियों और व्यापारियों ने घुसने का प्रयत्न किया खूनखराबी हुई। पर जब योरोपियों को उस दुर्दशा में पहुंचाने को चेष्टा का जिस में के योरोप के राष्ट्र अन्य दुर्बल राष्ट्रों को पहुंचाते रहे हैं—इस समय तक जापान यथेष्ट बलवान राष्ट्र बन चुका था। और उस ने योरोप की साम्राज्य लोलुपता का ज्ञान प्राप्त करके अपनी पर राष्ट्रीय नीति आप ही निर्धारित भी की थी। उसे भय था कि कोरिया को अंग्रेज या रूस न हड़प लें, उसने चेष्टा करके दो बड़े युद्ध किये, और कोरिया का सारा प्रान्त ही अधिकार में कर लिया। उधर योरोपियनों ने चीन को भड़का दिया। जापान ने बहुत चाहा कि चीन और जापान मिलकर कोरिया का सुसंगठन करें। पर चीन बराबर योरोपियनों को प्रश्रय देता जाता था। अन्त में १८९४ में चीन जापान में युद्ध हुआ और संसार ने प्रथम बार देखा कि किस तरह एशिया की जल थल की सेनायें लड़ा करती हैं। चीन हारा, उस के बाद उस ने कोरिया में सुधार किये और योरोप ने देखा कि पूर्व एशिया में यह हमारे मार्ग का बड़ा कण्टक खड़ा हो गया।

बीसवीं शताब्दि के प्रारम्भ में सब शक्तियां डट गईं। रूस चाहता था कि कोरिया का सर्व श्रेष्ठ बन्दर मेसेमपो रूस के कब्जे में रहे और जाड़े के दिनों में यहाँ रूस के युद्ध जहाज

बढ़े रहें। यदि यह होता तो जापान सागर से पीत सागर को जाने का मार्ग रूस के हाथ में चला आता था और इस से जापान पर आपत्ति आती थी। झगड़ा बढ़ता रहा। अमेरिका और ग्रेट ब्रिटेन जापान के गुप्त समर्थक थे। फल स्वरूप रूस जापान युद्ध छिड़ा। और जापान ने विजय पाई। उस के बाद से जापान का कोरिया पर बहुत बड़ा प्रभुत्व हो गया और जापानी संस्कृत कोरिया में बढ़ गई है।

महायुद्ध में कोरिया वाले चुप रहे। परन्तु शान्ति सभा में उस को कुछ भी सुनवाई नहीं हुई। कोरियन इस प्रतीक्षा में है कब कभी जापान में प्रजातन्त्र का उदय होगा तभी हमारे दुःख दूर होंगे।

चीनका प्रश्न एशिया में सबसे महत्वपूर्ण है। शान्ति सभा में शाटंग के प्रश्न पर जो सरासर बेईमानी और बदनीयती योरोपकी महाशक्तियों ने प्रकट की थी उतनी और किसी प्रश्न पर न की होगी। शान्ति सभाने ही ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि आगे चल कर अनेक युद्धों की सम्भावना हो गई है।

जापान ने युद्ध के बाद चीन से १५ करोड़ रुपया नकद, तथा व्यापार का अधिकार प्राप्त किया था। पर फ्रांस रूस और जर्मनी ने यह चेष्टा की कि जापान के बजाय रूसका प्रभुत्व जमा रहे।

खासे अधिकार मिल गये ।

जर्मनी फ्रांस और ग्रेटब्रिटेन ने भी अपना २ काम बना लिया, अब इटली ने भी पैर फैलाये। चीन बहुत कुछ सह चुका था—इटली से उसने साफ इन्कार कर दिया, अन्य शक्तियों ने भी इटलीको दुदुराया सन्१८९६से१८९९ तक इसी प्रकार बड़ी छीना झपटी होती रही। अन्त में चीन और जापान स्वाधीन हुए। कुछ चीनी युवक पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त करके और जापान के आदर्श को देख कर संगठित हुए। और शिक्षा प्रचार, राष्ट्रीय भाव को उदय और मन्चू राज्य का अन्त करने में लग गये।

राज पक्ष वाले भी विदेशियों से घृणा करते थे। परन्तु वे क्रान्ति न करना चाहते थे। इन्हों ने धर्मान्धता और अज्ञानता से लाभ उठा कर उन में विदेशियों के प्रतिघृणा के भाव भर दिये।

धीरे २ गुप्त षड्यन्त्र और विद्रोह खड़ा हो गया। जो बाक्सर विद्रोह के नाम से प्रसिद्ध है। अन्तमें योरोप की सम्मिलित शक्ति का सेना एडमिरल सेमर की अधीनता में पेकिंग पहुँची और अन्त में पीकन का पतन हुआ।

परन्तु योरोपीय शक्तियों के अत्याचार से तरुण मण्डल ने प्रजातन्त्र की स्थापना की। उन्होंने सैनिक शिक्षा की ओर ध्यान दिया। इस के सिवा शासन, अर्थ विभाग, शिक्षा और समाज सुधार में भी हाथ लगा दिया गया। अफीम से पिंड

छुड़ाने की चेष्टा की और प्रायः चीनी विदेशियों के विरोधी हो गये । और युआन शिकाई प्रेसीडेण्ट चुने गये । उन के बाद 'सन' चुने गये । इस प्रकार ८ वर्ष के युद्ध के बाद चीन में प्रजातन्त्र स्थापित हुआ ।

अब हम एशिया पर जर्मनी प्रभुत्व के लिये प्रयत्न का भी थोड़ा ज़िक्र करेंगे । प्रिंस बिस्मार्क ने जर्मन साम्राज्य बड़ी चतुरता और साहस से स्थापित किया । इस के बाद जर्मनी को अपने उपनिवेश की भी चिन्ता हुई । पर उत्तरी और दक्षिण अमेरिका में मनरो सिद्धान्त के कारण उस की दाल नहीं गल सकती थी ।

खासे अधिकार मिल गये ।

जर्मनी फ्रांस और ग्रेटब्रिटेन ने भी अपना २ काम बना लिया, अब इटली ने भी पैर फैलाये। चीन बहुत कुछ सह चुका था—इटली से उसने साफ़ इन्कार कर दिया, अन्य शक्तियों ने भी इटलीको दुदुराया सन् १८६६ से १८६६ तक इसी प्रकार बड़ी छीन झपटी होती रही। अन्त में चीन और जापान स्वाधीन हुए। कुछ चीनी युवक पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त करके और जापान के आदर्शों को देख कर संगठित हुए। और शिक्षा प्रचार, राष्ट्रीय भाव को उदय और मन्चू राज्य का अन्त करने में लग गये।

राज पक्ष वाले भी विदेशियों से घृणा करते थे । परन्तु वे क्रान्ति न करना चाहते थे । इन्हों ने धर्मान्धता और अज्ञानता से लाभ उठा कर उन में विदेशियों के प्रतिघृणा के भाव भर दिये ।

धीरे २ गुप्त षड्यन्त्र और विद्रोह खड़ा हो गया। जो बाक्सर विद्रोह के नाम से प्रसिद्ध है। अन्त में योरोप की सम्मिलित शक्ति का सेना फ़ील्डमिरल सेमर का आधीनता में पेकिंग पहुँची और अन्त में पीकन का पतन हुआ।

परन्तु योरोपीय शक्तियों के अत्याचार से सर्वथा मण्डल ने प्रजातन्त्र की स्थापना की । इन्होंने सैनिक शिक्षा की ओर ध्यान दिया। इस के सिवा शासन, अर्थ विभाग, शिक्षा और समाज सुधार में भी हाथ लगा दिया गया। अफीम से पिण्ड

यदि अमेरिका के लिए यह बात ठीक है कि वहाँ के लोग योग्य हों या अयोग्य, पर वे अपना सब काम आप ही सम्हालें और दूसरा कोई उनके काम में हस्ताक्षेप न करे तो योरोप एशिया, और अफ्रीका के लिये भी यही बात बिल्कुल ठीक है। संसार ऐसा विस्तृत नहीं है कि उस में ऐसी बातों के सम्बन्ध में दो नीतियों की गुंजाइश हो सके।

राष्ट्रपति विल्सन ने युद्ध के बाद कहा था कि मनरो का सिद्धान्त संसार भर में प्रचलित कर दिया जाय।

सब लोग सुख से अपने देश में रहें। कोई किसी के देश में आक्रमण करने न जाय। पर योरप वाले मन मानी करना चाहते थे और एशिया को दबाये रखना उनके लिये आवश्यक था—फलतः विल्सन का प्रयत्न विफल हुआ।

परन्तु एशिया अब जागृत हो गया है और वह यूरोप के भार से अपने को सर्वथा उन्मुक्त करना चाहता है।

ता० २८ नवंबर सन् १९२४ ई० के दिन सन् यात् सेन ने योकोहामा शहर में 'एशिया का एकी करण' नामक विषय पर एक भाषण दिया था। वह भाषण नीचे दिया जाता है।

"वास्तव में एशियां खंड के पुनर् जीवन का प्रारंभ, जापान ने जब परदेशी राष्ट्रों के साथ किये हुए अन्यायी सुलहनामों को मिट्टी में मिला दिया, तब से हुआ। उस समय से जापान

वार्सेल्स की सन्धि के अनुसार जर्मनी को एशिया में केवल अपने अधिकृत प्रदेश ही नहीं छोड़ने पड़े, बल्कि सारे एशिया प्रान्त में व्यापार या धर्म प्रचार करने का अधिकार भी त्यागना पड़ा।

रूस जापान युद्ध ने तथा जापान के महा युद्ध में शरीक होने ने यूरोप की दृष्टि ऐशिया की तरफ बदल दी। इन दो घटनाओं ने मानो यूरोप को चुनौती दे डाली है। जापान का इन कामों से अन्तिम उद्देश्य यह था कि ऐशिया में यूरोप का कुछ भी महत्व न रह जाय।

जापान को इस प्रकार विजयी होते देख ऐशिया की जातियों में राष्ट्रीयता के भाव उत्पन्न होगये और तरुण मिस्रियों, तरुण फारसियों, तरुण भारतियों, तरुण स्यामियों, और तरुण चीनियों ने काहिरा और कस्तुन्तुनिया से बटेविया और पीकन तक उन्हें फैला दिया। ऐशिया केवल ऐशिया के लिए रहे यही सब की एक सामूहिक इच्छा होगई है।

ऐशिया से जर्मनी को निकाल बाहर करने में जापान ने जो मुंह मर्दी दिखाई उससे भले ही मित्र राष्ट्र प्रसन्न हुए हों—परन्तु वास्तव में यूरोप को एशिया से खदेड़ने का यह उपक्रम है।

मि० एल—वटिंस ने अपनी पुस्तक—दी—प्राब्लम् ऑफ दी कामन वैल्थ में लिखा था—

यदि अमेरिका के लिए यह बात ठीक है कि वहाँ के लोग योग्य हों या अयोग्य, पर वे अपना सब काम आप ही सम्हालें और दूसरा कोई उनके काम में हस्ताक्षेप न करे तो योरोप एशिया, और अफ्रीका के लिये भी यही बात बिल्कुल ठीक है। संसार ऐसा विस्तृत नहीं है कि उस में ऐसी बातों के सम्बन्ध में दो नीतियों की गुंजाइश हो सके।

राष्ट्रपति विल्सन ने युद्ध के बाद कहा था कि मनरो का सिद्धान्त संसार भर में प्रचलित कर दिया जाय।

सब लोग सुख से अपने देश में रहें। कोई किसी के देश में आक्रमण करने न जाय। पर योरुप वाले मन मानी करना चाहते थे और एशिया का दबाये रखना उनके लिये आवश्यक था—फलतः विल्सन का प्रयत्न विफल हुआ।

परन्तु एशिया अब जाग्रत हो गया है और वह यूरोप के भार से अपने को सर्वथा उन्मुक्त करना चाहता है।

ता० २८ नवंबर सन् १९२४ ई० के दिन सन् यात् सेन ने कोबे शहर में 'एशिया का भावी कार्य' नामक विषय पर एक भाषण दिया था। वह भाषण नीचे दियाजाता है।

"वास्तव में एशिया खंड के पुनर्जीवन का प्रारंभ, जापान ने जब परदेशी राष्ट्रों के साथ किये हुए अन्यायी मुआहनामों को मिट्टी में मिला दिया, तब से हुआ। उस समय से जापान

एशिया खंड में पहला स्वतंत्र राष्ट्र समझा जाने लगा। चीन, हिन्दुस्थान, ईरान, अफ़गानिस्थान, अरबस्थान और तुर्कस्थान आदिक अन्यान्य पौर्वात्य राष्ट्र, युरोप के अधिराज्य में हैं। उन्हें युरोप के उपनिवेश की हैसियत से राष्ट्र समझे जाते हैं। ३० वर्ष पहले जापान भी युरोप का ऐसा ही एक उपनिवेश था—समझा जाता था। किन्तु जापानी लोग दूरदर्शी थे और उन्हें अपनी परिस्थिति के विषय में अपमान मालूम होने लगा। अतएव उन्हों ने वैसे अन्यायी सुलह नामे नष्ट कर देने का और जापान को स्वतंत्र बनाने का निश्चय किया। इस आन्दोलन के कारण एशिया खँड में नवीन जीवन का संचार हुआ और हम भी एक दिन जापान के समान ही युरोप के जाल से छूट जावेंगे, ऐसी आशा उसके अन्तः करण में उदित होने लग गई। केवल ३० ही वर्ष पहले एशिया खँड के लोगों को, युरोप की शास्त्रीय और औद्योगिक उन्नति देख कर, उसके सुधरे हुए अस्त्रास्त्रों की ओर ध्यान देकर और सामर्थ्यवान सेना की स्थिति ध्यान में लेकर, ऐसा प्रतीत होने लग गया था कि युरोप एशिया की अपेक्षा बहुत ही बड़ा चढ़ा खँड है और उस का अधिकार एशिया खँड पर पादाक्रांत किया करो बना रहेगा, यह निश्चित सा है।

जापानने अन्यायी सुलह रद्द कर देने के १० वर्ष पश्चात रूसी जापानी युद्ध का दावानल सुलग उठा। जापान ने रूस

को हरा दिया और यह हार अनेक शताब्दियों में पहली ही हार निश्चित हुई।

जापान की इस विजय का एशिया खंड पर बड़ा भारी असर पड़ा। ए, खं, के अन्तर्गत भाग में रहने वाले लोगों पर इस विजय का यद्यपि कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा तथापि युरोप खंड की सीमा पर रहने वाले और नित्य ही युरोपियन लोगों के सम्बन्ध में आने वाले और उन के द्वारा परेशान हुए लोगों के हृदय पर उस विजय का जबरदस्त प्रभाव पड़ा। एशिया के लोगों ने युरोप के पंजे से मुक्त हो जाने का निश्चय किया और स्वतंत्रता प्राप्त करने के आन्दोलन का, ईरान, अफ़गानिस्थान, तुर्कस्थान, और अरबस्थान में प्रारंभ हो गया। लग भग २० वर्ष की अवधि में इजिप्त, तुर्कस्थान, ईरान, अफगानिस्थान और अरबस्थान ने स्वतंत्रता प्राप्त करली और हिंदुस्थान में भी वही आन्दोलन दिन प्रति दिन बलवान हुआ जा रहा है।

जब स्वतंत्रता प्राप्त करने की अभिलाषा परिपक्वावस्था पर आ पहुँचेगी तब ही एशिया खंड के राष्ट्रों को एकता की आवश्यकता प्रतीत होने लग जायेगी और तब कहीं जा कर स्वातंत्र्य प्राप्ति का आन्दोलन फली भूत होगा। पश्चिमी एशिया के राष्ट्रों ने परस्पर में सहानुभूति और स्नेह सम्पादन कर लिये हैं। परंतु पूर्व एशिया के जापान और चीन ने इस

प्रकार के स्नेह सम्बन्ध नहीं स्थापित किये हैं। तथापि दिन प्रति दिन पौर्वात्य देशों में एक होने की भावना जागृत हो रही है यह निःसन्देह एवं निर्विवाद है।

गत कुछ शताब्दियों में युरोप खंड में भौतिक सुधार, सुधार के शिखर पर आ पहुचे हैं। परन्तु पौर्वात्य-देश जहाँ के तहाँ ही खड़े हुए हैं। ऊपर २ से देखने वालों को पाश्चात्य सुधार, पौर्वात्य सुधारों की अपेक्षा श्रेष्ट मालुम होते हैं सही पर पाश्चात्य सुधारों का सचा स्वरूप खुला करके दिखा दिया कि हम लोगों को क्या प्रतीत होता है? शास्त्रों की ओर देखने पर विशेष जोर दिया गया है, ऐसा देख पड़ता है। यह उपयुक्तता मानवी समाज के साथ लगाइये कि उसका उद्देश्य आधि भौतिक उन्नति की ओर देख पड़ता है। विमान, बम और मशीन गन्स ( यांत्रिक तोपें ) वगैरह सब प्रकार जबर दस्ती के सुधार के हैं। युरोप के इस सुधार के कारण ही वे हम लोगों दास्य-गुलामी में रख सकते हैं और इसी से तो हम लोग वे भी हमारी उन्नति नहीं कर सकते। हम पूर्वीय हमेशा-'जबर दस्त का ठेंगा सिर पर'-इस ध्येय का तिरस्कार किया करते हैं। हमारे सुधार उनके सुधारों से श्रेष्ठ हैं! हमारे सुधारों का सार है पुण्य और परोपकार! पूर्व के देशों का अध्ययन करने वाले पाश्चिमात्य विद्वानों ने स्वीकार किया है कि हमारे ही आधिभौतिक सुधार उनसे कमजोर हैं,

तथापि हमारे सुधारों के तो उन्होंने मुक्त कंठ से गुणगान किये हैं ।

पौर्वात्य और पाश्चिमात्य सुधारों की हम लोग जब तुलना करने लग जाते हैं तब कौनसी संस्कृति न्याय और सरलता का अधिक पुरस्कार करती हुई हम लोगों को देख पड़ती है ? कौनसी संस्कृति मानव प्राणी के लिए और संसार के लिये विशेष उपकारक है ? ५०० से लेकर २००० वर्ष पहले के काल में चीन संसार में एक अत्यन्त प्रभाव शाली राष्ट्र था । चीन का दर्जा वर्तमान इग्लैंड और अमेरिका के बराबर का था । आज इग्लैंड और अमेरिका को संसार के प्रभाव वाली राष्ट्रों में के दो राष्ट्र माने जाते हैं । परंतु चीन "एकमेवमेवा द्वितीयम्" ऐसा राष्ट्र उस समय था । उस समय चीन निर्बल व कमजोर राष्ट्रों के साथ किस प्रकार से आया और निर्बल राष्ट्र उस के साथ किस प्रकार पेश आये, यह देखने योग्य है । उस समय के निर्बल राष्ट्र चीन को गुरू मानते थे, कर भार भी देते थे, और आप के अधिराज्य में हमें शामिल कर लिया जाय, ऐसी उस से प्रार्थनायें किया करते थे । वे चीन को करभार देने में अपना सम्मान समझते और न देने में अपमान ! वे राष्ट्र केवल एशिया में ही न थे पर यूरोप में भी थे । पुश्त दर पुश्त वे राष्ट्र चीन को मित्र मानते थे ।

मेरे कथन को पुष्टि के लिये मैं नीचे लिखे ताज़े उदाहरण पेश करता हूँ। हिन्दुस्तान के उत्तर में नेपाल और भूटान नाम की रियासतें हैं। यह रियासतें छोटी हैं तथापि वहां के लोग हट्टे कट्टे, चतुर, कुशल और युद्ध में बड़े शूरवीर हैं। नेपाल के गोरखा लोग वीर योद्धा की हैसियत से, संसार भर में कितने विख्यात हैं, यह कह बताने की कोई आवश्यकता नहीं है। अंग्रेज अफसर लोग नेपाल में, गोरखा लोगों को अपनी सेना में भरती करने के लिये जाते थे। इंग्लैंड ने हिन्दुस्थान जैसे बड़े भारी देश को जीत लिया है और वह उसे जित राष्ट्र का तरह समझता रहा है। नेपाल में हमारा दूत रहे, इस लिये उलटा अंग्रेज लोग नेपाल को बड़ा भारी कर देते हैं। नेपाल ऐशिया खंड का एक प्रबल राष्ट्र है। ऐसा उपरोक्त विवेचन पर से कहने में कोई बाधा नहीं।

चीन का अन्तर राष्ट्रीय दर्जा कालानुसार कम हो रहा है। चीन नेपाल से बहुत दूर है। उभय राष्ट्रों में तिब्बत के पहाड़ों की बड़ी २ व लंबी २ कतारें हैं। परन्तु अब तक नेपाल चीन को वरिष्ठ सत्ताधारी मानता था और खिराज भी देता था। नेपाल का ग्रेट-ब्रिटन के साथ का और चीन के साथ का जो बर्ताव है वह क्या फर्क बता रहा है? यद्यपि इस समय चीन कमजोर राष्ट्र हो तथापि चीन की संस्कृति के विषय में नेपाल में पूरा २ सम्मान है। नेपाली लोग चीन

की संस्कृति को आदर सम्मान की दृष्टि से देखते हैं तथापि वैसा आदर उन्हें ग्रेट ब्रिटन के विषय में नहीं है।

हम लोगों के सामने पौर्वात्य और पाश्चिमात्य संस्कृति के सम्बन्ध का झगड़ा ही मुख्य प्रश्न है। पौर्वात्य संस्कृति का अधिष्ठान परोपकार और पुण्य पर है। पाश्चात्य संस्कृति उपयुक्तता और ज़बरदस्ती पर ज़ोर देती है। जब हमारा विश्वास पुण्य और परोपकार पर होता है, अन्य लोगों को हम वही दीक्षा देते हैं। किन्तु जब हम उपयुक्ततावादी बन जाते हैं और जबरदस्ती करने लग जाते हैं, तब जनता को महीमगम्स के हाथ हरा देते हैं। हम सद्गुणों के द्वारा अन्यान्य लोगों को जब दीक्षा देते हैं तब वे अपनी पवित्रावस्था में भी नेपाल के समान ही उपकारबद्ध हो जाते हैं। किन्तु जिन पर ज़बरदस्ती से अमल चलाया जाता है वे तुम सामर्थ्यवान होते हुए भी, इजिप्त अथवा हिन्दुस्थान जिस प्रकार ब्रिटिशों से स्वतंत्र हो जाने के दाया २ पर प्रयत्न करते हैं, उसी प्रकार प्रयत्न करते ही रहेंगे। परन्तु यदि ग्रेट ब्रिटिन दुर्बल हो गया तो हिन्दुस्थान और इजिप्त पाँच ही वर्षों के भीतर उस की सत्ता से मुक्त हो जावेंगी।

इस पर से पौर्वात्य और पाश्चिमात्य संस्कृति की महत्ता ध्यान में आ जावेगी। पर्शिया फ्रांस का पक्की करना करने के उत्सुक हम यदि यारे लोगों को कौनसी नींव पर स्वतंत्रता की

इमारत खड़ी की जा सकेगी, इस का विचार करना चाहिए। हमारी सँस्कृति में न्याय, परोपकार और पुण्य इन गुणों की जो विशेषता थी, उन्हीं गुणों की नींव पर एकता की इमारत उठाना सद्गुणों का अधिष्ठान लेकर फिर योरोपियन शास्त्र की सहायता से हम लोगों को हमारे उद्योग व्यवसाय और युद्ध की सामग्री वृद्धिंगत करना चाहिये। इस उद्योग व्यवसाय और युद्ध के साधनों के साथ, पाश्चात्यों की अन्यान्य राष्ट्रों को हराने की वृत्ति का, हम लोगों को अनुकरण नहीं करना चाहिये। आत्म रक्षा के जितना ही हमें उनका अनुकरण करना चाहिये।

जापान ने सेना और सँस्कृति की दृष्टि से पाश्चिमात्यों का बहुत कुछ अनुकरण किया है। जापान को सेना अथवा नौसेना की सिद्धि के लिये युरोप पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। इसी से जापान पूरा २ स्वतंत्र है, ऐसा कहने में कोई बाधा नहीं।

दूसरा एक एशिया का देश गत विश्वव्यापी महायुद्ध में मध्यवर्ती सत्ता की ओर से शामिल हुआ था। वह देश हार गया। बाद में उसने युरोपियनों को खदेड़ दिया और अब वह पूर्णतया स्वतंत्र हो गया है वह देश तुर्कस्थान है। तुर्कस्थान और जापान, यह दोनों देश, एक संरक्षक दिवाल की तौर ९८ एशिया के दोनों ओर खड़े हैं। ईरान, अफगानिस्थान

और अरबस्थान भी जागृत हो रहे हैं और ये युरोपियनों की सैंरक्षक पद्धति का अनुकरण कर रहे हैं। चीन के पास इस समय बहुत से सिपाही और बहुत कुछ युद्ध सामग्री होने से यह भी सत्वरही स्वाधीन बनेगा।

एशिया खँड का एकीकरण करन और संसार में अपना दर्जा स्थापित करते हम लोगों को परोपकार और पुण्य का ही आश्रय लेना चाहिये। उन्हीं के आधार पर ही एशिया के सब राष्ट्रों को एक हो जाना चाहिये। इसी से हम लोगों को एक बलवान सत्ता बन जावेगी। परन्तु यह आधार हम लोगों को प्राप्त कर लेना और युरोपियनों को उनके एशिया खंड के अधिकार छोड़ देने के लिये कहना, इस के माने हैं एकाध बाघ की चमड़ी निकाल लेना। हमारे छीने गये अधिकार पुनः प्राप्त करने के लिये हम लोगों को जबरदस्ती के मार्ग का ही अवलंबन करना होगा। जापान और तुर्कस्थान के पास पर्याप्त और सुव्यवस्थित सैनिक सामग्री है। दूसरे, ईरान, अफगानिस्थान, अरबस्थान और नेपाल, ये राष्ट्र युद्ध कला मे निपुण थे। हम ४० क्रोड़ चीनी लोग यद्यपि शान्ति प्रिय हैं तथापि समय आया कि हमारी सामर्थ्य बढ़ जाती है। यदि एशिया में के राष्ट्र एकत्र हो जायं और योरोपियनों के साथ युद्ध करने के लिये तैयार हो जाँय, यकीन है कि हमें विजय अवश्य ही बिना प्राप्त हुए कभी नहीं रहेगा।

इमारत खड़ी की जा सकेगी, इस का विचार करना चाहिए। हमारी संस्कृति में न्याय, परोपकार और पुण्य इन गुणों की जो विशेषता थी, उन्हीं गुणों की नींव पर एकता की इमारत उठाना सद्गुणों का अधिष्ठान लेकर फिर योरोपियन शास्त्र की सहायता से हम लोगों को हमारे उद्योग व्यवसाय और युद्ध की सामग्री पूर्णांगत करना चाहिये। इस उद्योग व्यवसाय और युद्ध के साधनों के साथ, पाश्चात्यों की अन्यान्य राष्ट्रों को हराने की वृत्ति का, हम लोगों को अनुकरण नहीं करना चाहिये। आत्म रक्षा के जितना ही हमें उनका अनुकरण करना चाहिये।

जापान ने सेना और संस्कृति की दृष्टि से पाश्चिमात्यों का बहुत कुछ अनुकरण किया है। जापान को सेना अथवा नौसेना की सिद्धि के लिये युरोप पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। इसी से जापान पूरा २ स्वतंत्र है, ऐसा कहने में कोई बाधा नहीं।

दूसरा एक एशिया का देश गत विश्वव्यापी महायुद्ध में मध्यवर्ती सत्ता की ओर से शामिल हुआ था। वह देश हार गया। बाद में उसने युरोपियनों को पदच्युत किया और अब वह पूर्णतया स्वतंत्र हो गया है वह देश तुर्कस्थान है। तुर्कस्थान और जापान, यह दोनों देश, एक संरक्षक दिवाल की तौर पर एशिया के दोनों ओर खड़े हैं। ईरान, अफगानिस्थान

और अरबस्थान भी जागृत हो रहे हैं और वे युरोपियनों का संरक्षक पद्धति का अनुकरण कर रहे हैं। चीन के पास इस समय बहुत से सिपाही और बहुत कुछ युद्ध सामग्री होने से वह भी सत्वरही ससाधीश बनेगा।

एशिया खंड का एकी करण करन और संसार में अपना दर्जा स्थापित करते हम लोगों को परोपकार और पुण्य का ही आश्रय लेना चाहिये। उन्हीं के आधार पर ही एशिया के सब राष्ट्रों को एक हो जाना चाहिये। इसी से हम लोगों की एक बलवान सत्ता बन जावेगी। परन्तु यह आधार हम लोगों को प्राप्त कर लेना और युरोपियनों की उनके एशिया खंड के अधिकार छोड़ देने के लिये कहना, इस के माने हैं एकाध बाघ की मूछी निकाल लेना। हमारे छीने गये अधिकार पुनः प्राप्त करने के लिये हम लोगों को जबरदस्ती के मार्गों का ही अवलंबन करना होगा। जापान और तुर्कस्थान के पास पर्याप्त और सुव्यवस्थित सैनिक सामग्री है। दूसरे, ईरान, अफगानिस्थान, अरबस्थान और नेपाल, ये राष्ट्र युद्ध कला में निपुण थे। हम ४० क्रोड़ चीनी लोग यद्यपि शान्ति प्रिय हैं तथापि समय आया कि हमारी सामर्थ्य बढ़ जाती है। यदि एशिया में के राष्ट्र एकत्र हो जायं और योरोपियनों के साथ युद्ध करने के लिये तैयार हो जाँय, यकीन है कि उन्हें विजय अवश्य ही बिना प्राप्त हुए कभी नहीं रहेगा।

इमारत खड़ी को जा सकेगी, इस का विचार करना चाहिए। हमारी सँस्कृति में न्याय, परोपकार और पुण्य इन गुणों की जो विशेषता थी, उन्हीं गुणों की नींव पर एकता की इमारत उठाना सद्‌गुणों का अधिष्ठान लेकर फिर योरोपियन शास्त्र की सहायता से हम लोगों को हमारे उद्योग व्यवसाय और युद्ध की सामग्री वृद्धिंगत करना चाहिये। इस उद्योग व्यवसाय और युद्ध के साधनों के साथ, पाश्चात्यों की अन्यान्य राष्ट्रों को हराने की वृत्ति का, हम लोगों को अनुकरण नहीं करना चाहिये। आत्म रक्षा के जितना ही हमें उनका अनुकरण करना चाहिये।

जापान ने सेना और सँस्कृति की दृष्टि से पाश्चिमात्यों का बहुत कुछ अनुकरण किया है। जापान को सेना अथवा नौसेना की सिद्धि के लिये युरोप पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। इसी से जापान पूरा २ स्वतंत्र है, ऐसा कहने में कोई बाधा नहीं।

दूसरा एक ऐशिया का देश गत विश्वव्यापी महायुद्ध में मध्यवर्ती सत्ता की ओर से शामिल हुआ था। वह देश हार गया। बाद में उसने युरोपियनों को खदेड़ दिया और अब वह पूर्णतया स्वतंत्र हो गया है वह देश तुर्कस्थान है। तुर्कस्थान और जापान, यह दोनों देश, एक संरक्षक दिवाल को तौर ९८ एशिया के दोनों ओर खड़े हैं। ईरान, अफगानिस्थान

और अरबस्थान भी जागृत हो रहे हैं और वे युरोपियनों का शैक्षक पद्धति का अनुकरण कर रहे हैं। चीन के पास इस समय बहुत से सिपाही और बहुत कुछ युद्ध सामग्री होने से वह भी सत्वरही सत्ताधीश बनेगा।

एशिया खंड का एकीकरण करने और संसार में अपना दर्जा स्थापित करते हम लोगों को परोपकार और पुण्य का ही आश्रय लेना चाहिये। उन्हीं के आधार पर ही एशिया के सब राष्ट्रों को एक हो जाना चाहिये। इसी से हम लोगों की एक बलवान सत्ता बन जावेगी। परन्तु यह आधार हम लोगों को प्राप्त कर लेना और युरोपियनों को उनके एशिया खंड के अधिकार छोड़ देने के लिये कहना, इस के माने हैं एकाध बाघ की चमड़ी निकाल लेना। हमारे छीने गये अधिकार पुनः प्राप्त करने के लिये हम लोगों को जबरदस्ती के मार्ग का ही अवलंबन करना होगा। जापान और तुर्कस्थान के पास पर्याप्त और सुव्यवस्थित सैनिक सामग्री है। दूसरे, ईरान, अफग़ानिस्थान, अरबस्थान और नेपाल, ये राष्ट्र युद्ध कला मे निपुण थे। हम ४० क्रोड़ चीनी लोग यद्यपि शान्ति प्रिय हैं तथापि समय आया कि हमारी सामर्थ्य बढ़ जाती है। यदि एशिया मे के राष्ट्र एकत्र हो जायं और योरोपियनों के साथ युद्ध करने के लिये तैयार हो जाँय, तो निश्चय है कि उन्हें विजय अवश्य ही बिना प्राप्त हुए कभी नहीं रहेगा।

मनुष्य वश मे युरोप और एशिया की सँख्या इस प्रकार है:-

हिन्द ३०॥ क्रोड, चीन ४० क्रोड़, सयाम, अयाम और अग्नेय दिशा के वश, जापान और अन्यान्य देशों की सँख्या अनेकों क्रोड़ होगी। इस एशिया में के लोगों की जन सँख्या स सार की जन सख्या से आधी जन सख्या है। युरोप केवल ४० क्रोड़ को आबादी का खड है। परन्तु एशिया की आबादी है ६० क्राड। ४० क्रोड की जन सँख्या, ६० क्रोड़ बहुसँख्यों को मार डाले, यह न्याय और मनुष्यत्व के विपरीत है। जो २ न्याय और मनुष्यत्व के विरुद्ध होता है उस की अन्त मे हार ही होती है। सद्भाग्य से युरोप में के कुछ लोग उस ध्येय के वशीभूत नहीं हुए हैं और वे इसी ध्येय का पुरस्कार करते रहते हैं।

इस समय युरोप में एक नया ही राष्ट्र निर्माण हुआ है। उस राष्ट्र का, श्वेत सर्प की तरह, समूचे योरोप ने बहिष्कार कर डाला है। एशिया के कुछ राष्ट्रों ने भी उसी वृत्ति का अंगीकार किया है। वह राष्ट्र है रूस। रूस अपने गोरे भाइयों से फटकना नहीं चाहता। कारण? रूस का विश्वास उपयुक्तता और जबरदस्ती पर नहीं है किन्तु उस को विश्वास है परोपकार एवं पुण्य पर। रूस न्याय का पुरस्कार करता है। इसी से उसने एशिया के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ लिया है। युरोपियनों को भय है कि रूस उन नये तत्वों को सफल

तो नहीं कर लेगा ? इसा म य म्स का निषेध करते हैं और रंग बलवाई कहते हैं ।

हम एशिया खंड के ऐक्यकरण के विषय पर बोल रहे हैं। परन्तु योरोपियनों के द्वारा संकट सहन करने वाले हम, उन का प्रतिकार क्यों कर सकेंगे ? अथवा जिन पर जुल्म हुआ है वैसे लोगों को, जुल्म गारों से किस प्रकार मुक्त कर सकेंगे ? हमारे जैसे सताए हुए लोग केवल एशिया में ही नहीं परन्तु योरोप के केन्द्र स्थानों में भी हैं। बहुत से लोगों को बहुजन समाज के दुःख विमोचनार्थ किया जाने वाला आन्दोलन, सुधारों के विरुद्ध गदर मालूम होता है। जो सुधार अत्याचारों का विध्वंस करेंगे, उन्हीं का हम लोग पुरस्कार करेंगे।"

जरमनी के भूतपूर्व कैसर विलियम ने एक लेख में लिखा था:- "कि रंगीन जातियों की स्वाधीनता का संग्राम ज़ोरों से जारी है। यदि गोरा शासक जातियाँ इस आन्दोलन को अपने लिये नाशकारी समझने से इन्कार करें तो यह उनका ही अपराध होगा, क्योंकि भविष्य में उन्हें इन रंगीन जातियों के भीषण संघर्ष का सामना करने के लिये बाध्य होना पड़ेगा। यह बात कोरी कल्पना ही नहीं है। संसार के किसी भी भाग पर दृष्टिपात कीजिये, सभी जगह या तो संघर्ष जारी है, अथवा शीघ्र ही जारी होने वाला है। चाहे चीन की ओर देखिये

मनुष्य बल मे युरोप और एशिया की संख्या इस प्रकार है:-

हिन्द ३०॥ क्रोड़, चीन ४० क्रोड़, सयाम, श्याम और अग्नेय दिशा के देश, जापान और अन्यान्य देशों की संख्या अनेकों क्रोड़ होगी। इस एशिया में के लोगों की जन संख्या संसार की जन संख्या से आधी जन संख्या है। युरोप केवल ४० क्रोड़ की आबादी का खंड है। परन्तु एशिया की आबादी है ६० क्रोड़। ४० क्रोड़ की जन संख्या, ६० क्रोड़ बहुसंख्यों को चीर डाले, यह न्याय और मनुष्यत्व के विपरीत है। जो २ न्याय और मनुष्यत्व के विरुद्ध होता है उस की अन्त मे हार ही होती है। सद्भाग्य से युरोप मे के कुछ लोग उस ध्येय के वशीभूत नहीं हुए हैं और वे इसी ध्येय का पुरस्कार करते रहते हैं।

इस समय युरोप मे एक नया ही राष्ट्र निर्माण हुआ है। उस राष्ट्र का, श्वेत सर्प की तरह, समूचे योरोप ने बहिष्कार कर डाला है। एशिया के कुछ राष्ट्रों ने भी उसी वृत्ति का अंगीकार किया है। वह राष्ट्र है रूस। रूस अपने गोरे भाइयों से फटकना नहीं चाहता। कारण? रूस का विश्वास उपयुक्तता और जबरदस्ती पर नहीं है किन्तु उस को विश्वास है परोपकार एवं पुण्य पर। रूस न्याय का पुरस्कार करता है। इसी से उसने एशिया के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ लिया है। युरोपियनों को भय है कि रूस उन नये तत्वों को सफल

तो नहीं कर लेगा ? इसी में वे रूस का निषेध करते हैं और उसे बलवाई कहते हैं ।

हम एशिया खंड के ऐक्योफस्या के विषय पर बोल रहे हैं। परन्तु योरोपियनों के द्वारा संकट सहन करने वाले हम, उन का प्रतिकार क्यों कर सकेंगे ? अथवा जिन पर जुल्म हुआ है वैसे लोगों को, जुल्म गारों से किस प्रकार मुक्त कर सकेंगे ? हमारे जैसे सताये हुए लोग केवल एशिया में ही नहीं परन्तु योरोप के केन्द्र स्थानों में भी हैं। बहुत से लोगों को बहुजन समाज के दुःख विमोचनार्थ किया जाने वाला आन्दोलन, सुधारों के विरुद्ध गदर मालूम होता है। जो सुधार अत्याचारों का विध्वंस करेंगे, उन्हीं का हम लोग पुरस्कार करेंगे। "

जरमनी के भूतपूर्व कैसर विलियम ने एक लेख में लिखा था—कि रंगीन जातियों की स्वाधीनता का संग्राम ज़ोरों से जारी है। यदि गोरा शासक जातियाँ इस आन्दोलन को अपने लिये घातकारी समझने से इन्कार करें तो यह उनका ही अपराध होगा, क्योंकि भविष्य में उन्हें इन रंगीन जातियों के भीषण संघर्ष का सामना करने के लिये बाध्य होना पड़ेगा। यह बात कोरी कल्पना ही नहीं है। संसार के किसी भी भाग पर दृष्टिपात कीजिये, सभी जगह या तो संघर्ष जारी है अथवा शीघ्र ही जारी होने वाला है। चाहे जिस ओर देखिये

अथवा भारत की ओर, अफ्रीका की ओर अथवा मलाया जाति वालों के घर जाया या फ़िलिपाइन की ओर सभी जगह यही दृश्य पाइयेगा ।

स घर्ष बड़े भारी संग्राम का आरम्भ है। अनेकों वर्ष पहिले जब मैं यहां पर था तभी मैंने इसकी भविष्यवाणी की थी। मुझे तो उसी समय यह विश्वास हो गया था कि यह स ग्राम अवश्यम्भावी है। और उस समय यदि मेरी बातें सुनी गयी होतीं तो यदि इसको रोकना स भव न होता तो भी उसका विष इतना विष नहीं फैलने पाता जितना यों ही छोड़ देने से फैल गया।

## गोरी जातियों का सगठन ।

सभ्यता को नष्ट होने से बचाने के लिये दो चीज़ों की आवश्यकता थी और अभी भी है। पहिला, सभी गोरी जातियों का एकीकरण, और दूसरा अन्य जातियों के प्रति सम्मान का भाव । स सारव्यापी महायुद्ध ने यह दिखला दिया है कि गोरी जातियों के जिस स गठन को मैंने अपील की थी वह अब नहीं रहा। इससे उन साम्राज्यों की कठिनाइयां और भी बढ़ गया हैं जिनके पास उपनिवेश हैं। इस महायुद्ध को अंग्रेज़ और फ्रेंच राजनीतिज्ञों ने इस लिये "धार्मिक स ग्राम" का रूप दिया था। जिसमें अपनी, प्रजाओं की सहानुभूति प्राप्त कर एक प्रकार इस तरह अपने साम्राज्यवादी उद्देश्य को छिपायें रखें।

मरा प्रशाओं को 'बोच' और 'ह्यूण' कहा जाता, तथा मुझको खून का प्यासा एवं ईश्वर का शत्रु कहा जाता था। धूर्त प्रचारकों ने पहले समय में कांगो के निवासियों पर उच्छृङ्खल बेलजियन सिपाहियों द्वारा किये गये अत्याचारों को कुरेद डाला तथा संसार को यह दिखाने का प्रयत्न किया कि ये अत्याचार शांत बेलजियम वालों के ऊपर जर्मन सैनिकों ने किये हैं। कैसा जघन्य मिथ्या प्रचार था। इस तरह का प्रचार कर फ्रेंच और अंग्रेजों ने गोरे जर्मनों के विरुद्ध अपने सभी साथियों को भिड़ा दिया और किसी अन्य राष्ट्र ने जरा चूं तक नहीं किया। यहाँ तक कि अमेरिका ने भी इसके विरुद्ध कोई आवाज़ न उठायी।

## मनुष्यता के विरुद्ध अपराध।

महायुद्ध के बाद, फ्रांसीसियों ने मोरक्को और सेनिगल के जंगलियों का पहरा जर्मन राइनलैण्ड में बैठा दिया जिसे आज तक उसने पूर्णतया वापस नहीं बुलाया है। उस समय राइनलैण्ड की गोरी जाति का जो अपमान किया गया था उसके प्रतिकारके लिये इन ऐंग्लो सैक्सनों ने ही क्या किया? कुछ भी तो नहीं! क्या यह अपना जाति के प्रति उनका घोर विश्वासघात नहीं हुआ? गोरी जातियों के विरुद्ध उन्हीं की जमीन पर गोरी जातियों ने ही जो रंगीन जातियों को भिड़ाया यह गोरा जातियों के प्रति भयानक अपराध है साथ ही मनुष्यता के

विरुद्ध भी घोर अपराध है। इसके सिवा रंगीन जाति के सैनिकों के विरुद्ध भी यह एक अपराध हो हुआ। यह एक राजनीतिक पागलपन था जो कि बर्सेलिज की सन्धि से दुहरायी गयी।

## अमेरिकन हब्शियों का विरोध।

मुझे यह भी मालुम है कि संयुक्त प्रदेश के समझदार हब्शी नेताओं ने इस अत्याचार के विरोध में कई अमेरिकनों का साथ दिया था। क्योंकि उन लोगों ने यह समझा था कि जातिगत द्वेष की आग में ईंधन डालना भयानक काम होगा इन्हीं सब घटनाओं का यह परिणाम है कि गोरी जातियों के प्रति सम्मान को रंगीन जातियों ने बिलकुल ही खो दिया है।

एशियाई जातियों और अफ्रीका के हब्शीयों तक में अपनी जाति की ऐतिहासिक संस्कृति के गौरव का ज्ञान होना वैध और स्वभाविक हो है। साथ ही यह नये संघर्षों की सम्भावना का जन्म देता है . इसी का यह परिणाम है कि गोरी जातियों की साम्राज्य विस्तार की कामना का इतना विरोध होने लगा है।

## ससार भर में जातिगत संघर्ष।

इधर रंगीन जातियों का हौसला इस लिये और बढ़ता जा रहा है कि इनके सैनिकों ने अपने प्रभुओं की उस समय की असमर्थता अपनी आँखों देखी है जब इनमें सहायकों के

रखते हुए भी केवल मात्र अर्मन सैनिकों से वे पार न पा सके। रंगीन जातियों की दृष्टि में गोरी जातियों के प्रति सम्मान भाव इसी लिये नहीं लुप्त हुआ है कि वे आपस में हा लड़ते हैं, बल्कि इसके साधन में उन्होंने जो घृणित मिथ्या का प्रचार किया था जिसको सुन स्वयं मिथ्या को भी शर्म आती।

फ्रांस की क्रान्ति ने यह सिद्धान्त स्थिर कर दिया है कि अपने देश की रक्षा करना प्रत्येक नागरिक का अवश्य कर्तव्य है। और इस सिद्धान्त को मैं भी तहेदिल से ताईद करता हूँ। पर अंग्रेजों और फ्रांसिसियों ने तो इस सिद्धान्त का अपने उपनिवेशों के निवासियों तक बढ़ा दिया है। नष्ट होते हुए रोमन साम्राज्य की नकल करते हुए उन लोगों ने भी गोरी जातियों की ही जमीन पर गोरों ही के विरुद्ध उन लोगों ने रंगीन जाति को खड़ा कर दिया। उसी का आज हम यह परिणाम देखते हैं कि इस संसार की सभी जातियों में जातिगत संघर्ष चल रहा है।

राष्ट्रों के स्वास्थ्य सम्बन्धी नियम बिलकुल स्थिर हैं। उनका पालन होना ही चाहिये। नहीं तो मानवजाति स्वयं नष्ट हो जायगी। विभिन्न रंगों की जातियाँ कभी कभी मिल नहीं सकता। क्योंकि उनके सिद्धान्त अलग २ तथा उनका प्रकृति के नियम भी भिन्न २ हैं।

## जातियों की मिलावट।

सन् १६२२ में फ्रेञ्च लेखक गाम्ने बटने फ्रांस के एशियाई

उपनिवेशों के सम्बन्ध में लिखते हुए कहा है कि इण्डोचाइना के फिर चीन के अधिकृत होने की सम्भावना हो रही है। यदि इसके बचाने का कोई उपाय है तो वह यही है कि अगले दस वर्षों के भीतर इन दोनों की मिश्रित जाति तैयार की जाय।

मानव समाज का विकास इस तरह की मिश्रित जातियों के द्वारा नहीं हुआ करता। बल्कि इससे उनकी रक्षा ही करनी चाहिये। एक जर्मन दार्शनिक ने इन राष्ट्रों के सम्बन्ध में एक बार कहा था कि ये 'ईश्वर के विचार' हैं। अतः ईश्वर के विचारों का एक साथ गड़बड़ घोटाला करना मनुष्यों की अनधिकार चेष्टा होगी।

लोग यह भी कहा करते हैं कि इस तरह की मिलावट से उनमें ज्ञान पैदा होता है पर मेरी तो दृढ़ धारणा है कि किसी जाति में विशेषतः शत्रुओं के रक्त सम्मिश्रण से उनका विकास कभी सम्भव नहीं। सुतरां मैं इसमें कोई लाभ नहीं देखता कि रंगीन जातियों के रक्त में गोरी जातियों का रक्त मिलाया जाय। इन रंगीन जातियों को कौन कहे गोरी जातियों में ही कितनी जातिगत विशेषताएं हैं। जो परस्पर नहीं मिल सकतीं। उनकी आत्मा और जोश में कुछ ऐसी प्राकृतिक विलक्षणता रहती है जो पूर्णतया मिल ही नहीं सकती।

संयुक्तराज्य में कोजातियों के सम्मिश्रण से सफलता मिली है पर वे जातियां परस्पर भावविरोधी नहीं थीं।"

## पन्द्रहवां अध्याय

——:o:——

### भावी महा युद्ध ।

इस समय समस्त एशिया निकट भविष्य में होने वाले महा-युद्ध की प्रतीक्षा में है। उसका यह दृढ़ विश्वास है कि गत महायुद्ध में जो अत्याचार और बेईमानियाँ योरोप की महा-शक्तियों ने एशिया पर की हैं, उनका करारा बदला उन्हें भविष्य युद्ध पर मिलेगा। इस महायुद्ध में एशिया की चिर निद्रित भूमि महाशक्तियों के रक्त को पीकर हुँकार करेगी। और फिर युद्ध के पीछे उस पर से योरोप का प्रभुत्व हट जायगा।

योरोप निकट भविष्य के अपने नाश को प्रत्यक्ष देख रहा है, और वह बड़ी शक्ति से उस समय की तैयारी कर रहा है। अमरीका भी उसका साथी है।

उपनिवेशों के सम्बन्ध में लिखते हुए कहा है कि इण्डोचाइ के फिर चीन के अधिकृत होने की सम्भावना हो रही है। यदि इसके बचाने का कोई उपाय है तो यह यही है कि अगले क वर्षों के भीतर इन दोनों की निश्चित जाति तैयार की जाय।

मानव समाज का विकास इस तरह की मिश्रित जातिय के द्वारा नहीं हुआ करता। बल्कि इससे उनकी रक्षा ही करनी चाहिये। एक जर्मन दार्शनिक ने इन राष्ट्रों के सम्बन्ध में एक बार कहा था कि ये 'ईश्वर के विचार' हैं। अतः ईश्वर के विचारों का एक साथ गड़बड़ घोटाला करना मनुष्यों की अनधिकार चेष्टा होगी।

लोग यह भी कहा करते हैं कि इस तरह की मिलावट स उनमें जान पैदा होती है पर मेरी तो दृढ़ धारणा है कि किसी जाति में विरोधी तत्त्वों के एक सम्मिश्रण से उनका विकास कभी सम्भव नहीं। सुतरां मैं इसमें कोई लाभ नहीं देखता कि रंगीन जातियों के रक्त में गोरी जातियों का रक्त मिलाया जाय। इन रंगीन जातियों को कौन कहे गोरी जातियों में ही कितनी जातिगत विशेषताएं हैं। जो परस्पर नहीं मिल सकतीं। उनकी आत्मा और जोश में कुछ ऐसी प्राकृतिक भिन्नताएं रहती हैं जो पूर्णतया मिल ही नहीं सकती।

संयुक्तराज्य में कोजातियों के सम्मिश्रण से सफलता मिली है पर ये जातियाँ परस्पर भावविरोधी नहीं थीं।"

स्त्रियां और दो सहाय विध्वंसक। गत तीन वर्षों को सामुद्रिक युद्ध सम्बंधी तय्यारी के खर्च में क्रमानुसार पांच करोड़ अस्सी लाख पाउण्ड, पाँच करोड़ अठावन लाख पाउण्ड और छः करोड़ पाँच लाख पाउण्ड किये गये। गत अगस्त तक विमान-यन्त्रों पर से लड़ने वाले बत्तीस हजार छः सौ छप्पन मनुष्य तय्यार कर लिये गये। इनके अतिरिक्त जो आकाशी सेनायें हैं। उनको जोड़ने से सब मिलाकर दश लाख तिरपन हजार छः सौ पचास मनुष्य होते हैं। किन्तु उन आकाशी सैनिकों के फी सैकड़े बत्तीस मनुष्य अगस्त में इगलैण्ड के बदले इराक, पूर्वी देश और हिन्दुस्तान में थे।

## फ्रान्स

फ्रान्सीसी सामुद्रिक विद्वानों ने हिसाब तय्यार किया है, कि वर्तमान जंगी जहाज आदि जब सन् १६३० ई० में पुराने ढंग के हो जायेंगे, तब तक नये ढ ग के निम्नलिखित जंगी सामुद्रिक यान तय्यार होजाये गे, दश दश हजार टन के चार हलके क्रूजर, आठ आठ हजार टन के तीन हलके क्रूजर, सत्ताईस २सौ टन के छः विध्वंसक, चौबीस २सौ टन के छः विध्वंसक, चौदह २ सौ टन की २६ जहाज फाड़न वाली टारपोडो नावें, १५६० टनको सोलाह जहाज फाड़ने वाली टारपेडो नावें, ११५० । ५० टनको नौ पनडुब्बियां और चौदह छोटा २ पनडुब्बियां, इनकी मंजूरी निरस्त्र होने के ठहराव के बाद दो गई

चार हजार पाउण्ड बम के गोले भी रख कर चारों ओर तथा ऊपर नीचे निरन्तर छोड़े जा सकते हैं। कई वर्षों की परीक्षा का फल यह मिला है, कि इतनी अधिक मार को आग बरसाने वाली चीजों सहित उड़ने और शत्रुओं को विध्वंश करने की पूरी सफलता प्राप्त हुई है। और कोई विमान यान अब तक ऐसा नहीं बनाया जा सका है जो इसका सामना कर सके। इसके उपरान्त ईवुजेल फोर्ड नामक और एक प्रकार का भयंकर सर्वविध्वंश सौ विमान यानों को भी बनाने के लिये ठेकेदारों को तीन लाख डालर दिये गये हैं। बढ़ी हुई सेनाओं का टिकाने के लिये सत्तरह नई बड़ी २ छावनियाँ बनाई गई हैं और चालीस हजार फौजें भी नई तैयार की जा रही हैं। नई लड़ाई की तैयारी के आरम्भ का खर्च चलाने के लिये सत्तर लाख डालर भी मंजूर किये गये हैं। जातियों में नागरिक सैन्यों को गठित करने के लिये एक हजार नौ सौ छब्बीस खेमे डाले गये थे, जिनमें रह कर तेतीस हजार छः सौ चोरानवे मनुष्य और दो हजार छः सौ उनहत्तर विद्यार्थी लड़ने भिड़ने की शिक्षा पूरी पूरी पा गये।

## ग्रेट ब्रिटेन।

जब से निरस्त्र बनने का निश्चय हो गया है—तब से आला दर्जे के निम्नलिखित जलयुद्ध यान सिधारे, बनाये और साज़ सामानों से चुस्त कर लिये गये हैं, अठारह क्रूज़र, दश पनडु

मासिक पत्र और सप्ताहपत्र प्रकाशित हो रहे हैं। रूसी गवर्नमेंट को सहायता इन में से यह को मिलती है जो रूस बाहर वाली आकाशी विद्याशक्ति के तमाम मनवाद भी शामिल करने से नहीं चूकते।

## इटली

अगस्त तक आकाशी सेना १६ हजार ६२८ मनुष्यों का बन है और आकाशी यान १४५३ हो गये। इन यानों में ७५० प्रथम श्रेणी के हैं।

## स्पेन

छोटे से स्पेन ने भी बार्सिलोना नगर में आकाशी युद्ध विद्या सिखलाने और अन्य आकाशी यान बनाने का प्रबन्ध किया है। यहीं जलयुद्ध भी सिखलाने का स्कूल है। गवर्नमेंट यह विचार रही है कि स्थान स्थान में लोगों का ओर से स्वतन्त्र तौर पर आकाशी युद्ध विद्या सीखने सिखलाने का प्रबन्ध भी हो।

## जापान।

निरस्त्र होने का निर्णय अब से हो गया है, तबसे जंगी जहाज आदि बनाने में साढ़े तीन करोड़ डालर खर्च किये गये हैं। अगस्त तक की रिपोर्ट यह है,—प्रथम श्रेणी के क्रूज़र दो बन गये और आठ बन रहे हैं, दूसरी श्रेणी के क्रूज़र [illegible]

है। केवल अन्तिम चार चोजों का खर्च ही क्रमानुसार एक अरब इकतीस करोड़ दश लाख बासठ हजार फ्रांक, एक अरब चार करोड़ अट्ठाईस लाख इकतालीस हजार फ्रांक एक अरब तीन करोड़ तिरासी लाख से तालीस हजार फ्रांक, और चौदह करोड़ फ्रांक हो गया। अगस्त तक आकाशी सेना तेंतीस हजार चार सौ बाहत्तर मनुष्यों तक हो गई थी और आकाशी यान तीन हजार पाँच सौ-जिनमे एक हजार पाच सौ बयालीस एकदम नये से नये ढंग के है।

## रूस

आकाशी यान २००० हैं और इसके सिवा ऐसे दो इंजिनोंवाले सुदूरगामी आकाशी यान देश भर मे सर्वत्र बनाये जा रहे हैं। जिन पर वाणिज्य हो सकेगा और युद्ध भी किया जा सकेगा। अध्यापक तलाबुक परीक्षा और निर्माण का पूरा भार लेकर ऐसे और इतने आकाशी यान बनवा रहे हैं, कि जो अंग्रेजी जलसेना आदि के साथ मुकाबला करने में पूरे समर्थ हों। आकाशी युद्ध विद्या सिखलाने के लिये बाहर बड़े बड़े शिक्षालय खोले गये हैं जिनमें हजारों २ विद्यार्थी भरती हो रहे हैं। तमाम रूसी नवयुवकों को आकाशी युद्ध विद्या में धुरन्धर करने के नाना प्रकार के प्रबन्ध किये गये हैं। मामूली विद्यालयों में पढ़ने वालों के लिये आकाशी युद्ध विद्या की शिक्षा अनिवार्य्य की गई है। केवल आकाशी युद्ध विद्या सम्बन्धी अनेकों

है लोग का खर्च ६ लाख १७ हजार दो सौ पच्चीस पौण्ड वार्षिक है—८ लाख रु० भारत को भी देने पड़ते हैं, जिस के बदले वह अपना ऐसा प्रतिनिधि भेज सकता है। जिसे सुनने का स्वयं अधिकार नहीं।

लीग को स्थापना वास्तव में एशिया से भयभीत होने पर यूरोप के राष्ट्रों का गुट्ट है जिस में एशिया से केवल जापान ही सम्मिलित है।

पर भावी युद्ध कब टूट पड़े इस की कल्पना करी नहीं जा सकती। पिछले दिनों जनरल यर्ड उडने जो भारत की सेनाओं के प्रधान अध्यक्ष हैं गोरखों के सामने गोरखपुर में जो भाषण दिया था—उस का सार यह था—

"अन्तिम लड़ाई तो अभी लड़नी ही है और जहाँ हम लोग शान्ति के लिये हृदय से चेष्टा कर रहे हैं वहां हमें अभी युद्ध के लिये तैयारियाँ करनी होंगी। कब और कहाँ वह युद्ध छिड़ेगा कोई नहीं कह सकता। पर यह मैं विश्वास पूर्वक कहरहा हूँ कि तुम गोर्खा लोग हमारे मित्र की हैसियत से फिर लड़ने के लिये तैयार रहोगे और अधिकारों के लिये लड़ोगे।" इसी कथन के साथ ही जब हम भारतीय सेनाओं के जेनरल स्टाफ के अध्यक्ष लेफ्टेनेण्ट जेनरल सर ऐण्ड्रू स्कीन की ओर से चारों दिशाओं के कमाण्ड के हेडक्वार्टरों के नाम निकाले हुए सूचना पत्र (मेमोरण्डम) की बातों को बैठाते हैं तबतो भावी महायुद्ध

आकाशी यान से जाने वाला जंगी जहाज १ बन गया, और १ बन रहा है, जहाज फाड़ने वाली टारपीडो नावों को छोड़ने के जंगी जहाज २ बन गये। प्रथम श्रेणी के विध्वंसक १ बन गया और ६ बन रहे हैं तथा ४ के लिये हुक्म दिया गया है। और इसके उपरान्त और भी १२ बनाने का निर्णय कर लिया गया है। दूसरा श्रेणी के विध्वंसक ७ बन गये हैं। पनडुब्बियाँ १५ बन गई, १३ बन रही हैं और इनके अतिरिक्त और भी १३ बनने की मंजूरी दी गई है, समुद्र को जहाज फाड़ने वाले बम गोलों से साफ करने के यन्त्र ४ बन गये और इसके सिवा और भी २ बनाने की मंजूरी माँगी है, कि आगामी ५ वर्ष में और तीन करोड़ २० लाख डालर जलयुद्ध के सामानों के लिये खर्च करना चाहिये।

जातियों को इन जंगी तैयारियों की रिपोर्ट को पढ़ने से स्पष्ट रूप से ज्ञात पड़ता है, कि वह आगे के महायुद्ध के लिये प्रस्तुत हो रही हैं। निरस्त्र बनने का निर्णय केवल गपोड़ेबाजी को छोड़ कर और कुछ नहीं है।

यूरोप ने भावी युद्ध से बचने ही के लिये 'लीग आफ नेशन्स, की स्थापना की है इस का मुख्य स्थान जेनोवा में है। उस में दुनिया के लग भग ६० राष्ट्र शरीक हैं। रूस और अमेरिका इस मे शरीक नहीं हैं। जर्मनी २ वर्ष हुये अभी इस में मिलाया गया है। स्पेन हाल ही में उस से अलग हो गया

स्वतन्त्र कराने एवं उन से मित्रता गांठ कर एशियाई राज्यों का एक सुदृढ़ संघ स्थापित करने के प्रयत्न में लगे हुए हैं। अफ़ग़ानिस्तान, तुर्की और फारस को स्वतन्त्र होने में बड़े भारी त्याग के साथ सहायक बन कर रूस की सोवियट सरकार ने इन राज्यों को अपना चिरकृतज्ञ बना लिया है और इन में से प्रत्येक के साथ उसकी मित्रता की सन्धियाँ भी हो चुकी हैं। एशिया के पूर्व में उसने विशाल राष्ट्र चीन को स्वतन्त्र होने में जो अमूल्य सहायताएं दी हैं उन्हीं के फलस्वरूप आज सारा चीन राष्ट्रीय झण्डे के नीचे आ गया है और वह दिन दूर नहीं जान पड़ता जब एशियाई राष्ट्र के गुट में वह भी अपना योग्य स्थान ग्रहण करता दिखाई देगा।

संडे क्रानिकल ने रूस के वर्तमान बड़े नेता मोसियो स्टेलिन के प्रयत्नों का भेद खोल दिया है। इस पत्र ने एक सिपाही के मुलाकात के समाचार प्रकाशित किये हैं जो इसने स्टेलिन से की थी। इस मुलाकात में स्टेलिन ने बतलाया कि हम इस वक्त भी लड़ सकते हैं। पर अभी हमारी तैयारी पूर्ण नहीं हुई है। १९२९ में रूस की फौज संसार का सामना करने के लिए तैयार हो जावेगी। हम सारे संसार को जीत सकते हैं। अगर हमने इंगलैण्ड को परास्त न किया तो यह समझ लो कि हमारा सारा वक्त यों ही गया। इंगलैण्ड इस समय संसार की नाक की हड्डी है। इसलिये हमारा इससे मुकाबला

केसम्बन्ध में किसी प्रकार का संशय ही नहीं रह जाता। यह सूचना पत्र गोपनीय था और गुप्त रूप से प्रचलित किया गया था। परन्तु कलकत्ते के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय पत्र 'फारवर्ड' का कहीं से उस को एक प्रति मिल गई और उसने उसे प्रकाशित कर भण्डा फोड़ कर दिया।

उक्त सूचना पत्र में ले० जेनरल सर येरह स्कीन ने अन्य बातों के सिवा एक बात उस में यह लिखी थी कि "अन्य देशों की सेनाओं के विकाश और उन्नति देख कर हमारी भारतीय सेनाओं में भी उन्नति की आवश्यकता प्रतीत होती है जिसके लिये अगले कई वर्षों में कम से कम आठ करोड़ रुपये खर्च करने का अनुमान है जो सेना के लिये आधुनिक सैनिक सामान जुटाने के काम में लगाये जायँगे

जैसे १९१४ ई० के जर्मन अंग्रेज संग्राम का कारण जर्मनी और ब्रिटेन की बहुकालीन प्रतिद्वन्द्वता थी वैसे ही जानकारों को स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि जो महायुद्ध छिड़ने वाला है वह ब्रिटेन और बोलशेविक रूस का लाग डाट के कारण ही छिड़ेगा और सम्भवतः उसका क्षेत्र भी भारत की सीमा के बहुत नि कट ही होगा। तथापि निश्चय पूर्वक अभी यह कोई नहीं कह सकता कि रणचण्डी की घोर गर्जना पहले पहल कहाँ पर और कब होगी। उसी उद्देश्य से रूस के नेता यूरोप की ओर से अपना ध्यान हटा अपनी सारी शक्ति एशिया के राष्ट्रों को

चाहिए। इस पर मि० रोट ने अन्तर्राष्ट्रीयता वादियों को खुग तरह लताड़ा और उनका दूसरे राष्ट्रों की ओर से वकालत करने की प्रवृत्ति का घोर निन्दा की तथा कहा कि जापान और यूरोप में भावी महा समर के लिये भयानक तैयारियां हो रहा है।

क्रूजर बिल पर आज फिर वादविवाद आरम्भ हुआ, सिनेटर वानसन ने बिल का समर्थन करते हुए कहा कि जापान में अप्रत्यक्ष तैयारियां हो रही हैं निकट भविष्य में ही प्रशान्त महासागर में एक भयानक युद्ध होने का आशंका की जाती है, उन्होंने आगे बोलते हुए कहा कि अमेरिका व्यापारी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के कारण संसार की आँखों में गड़ रहा है। इसलिये क्या तो हमें अपने व्यापार को छोड़ देना होगा या इसे कायम रखने के लिये इसकी जान से रक्षा करनी होगी, न मालूम भविष्य में प्रशान्त महा सागर में कैसा अभिनय हो जाय। इस लिये मैं चाहता हूँ कि उस अवसर का विचार कर हमें इस बिल को इसी रूप में पास कर देना चाहिये। उन्होंने आगे कहा कि वाशिंगटनकान्फरेन्स में अमेरिकनों को धक्का देकर अंग्रेज तुरन्त ही लड़ाकू जहाज बनाने में लग गये और आज भी वे पूर्णत समुद्र के मालिक बने हुए हैं।

## अमेरिका और जापान।

मो० बोरोडिन की धारणा है कि अमेरिका और जापान के

है। इस सिपाही का कहना है कि मैंने रूस में ऐसे हवाई जहाज देखे हैं, जो हवा में नजर नहीं आते। मैं स्टेलिन की आज्ञा से हवाई जहाज द्वारा तुर्किस्तान वगैरह सैर करता रूस के उस हेड कार्टर में पहुंचा जो भारत की सामा पर है। वहाँ मैंने अपने क्रांतिकारी फौजी कौंसिल के मेम्बरों से मुलाकात की। वहां मुझे यह बतलाया गया कि, रूस का सब से बड़ा दुश्मन इंगलैण्ड है जिससे हम घृणा करते हैं। इंगलैण्ड हर जगह हमारे रास्ते में रोड़े अटकाता है। हम इंगलैण्ड पर हिन्दुस्तान के द्वारा आक्रमण करेंगे। यह भी बताया गया है कि, रूस के सरकारी अफसरों की संख्या ६० लाख है। रूस ज़हरीली गैसों की तैयारी में बड़ी कोशिश कर रहा है।

अमेरिका के सिनेट में सिनेटर रीड़ ने "नैवी बिल पर बोलते हुए कहा कि "संसार के सम्पूर्ण युद्ध विद्यालय हमारे नाविक बेड़ों को तहस नहस करने तथा हम पर आक्रमण करने के लिये तरह तरह की स्कीम बनाने में व्यस्त हैं और हम चुप चाप बैठे हैं।" इन शब्दों से जादू का सा असर हुआ। सम्पूर्ण सदस्य उनके भयानक गर्जन को सुनकर चौंक उठे। उपरोक्त बिल में ९ वर्ष के भीतर पन्द्रह क्रूजर ( बड़े लड़ाई के जहाज़ ) बनाना आरम्भ कर देने के लिये सिफ़ारिश की गई है। भूतपूर्व प्रेसिडेन्ट कूलिज ने इस प्रस्ताव का विरोध किया था। उनका कहना था कि समय का प्रतिबन्ध हटा देना

जापान और इङ्गलैण्ड दोनों में इसलिये घनिष्ठता हो रही है क्योंकि दोनों को चीन में अपने अपने स्वार्थ और सुविधाओं के लिये भय हो रहा है। चीन यदि वस्तुतः स्वतन्त्र हो गया और उसका नेतृत्व श्रमजीवियों और किसानों के हाथ रहा तो चीन में साम्राज्यलोलुप शक्तियों का अन्तिम खतरे में पड़ जायगा। लेकिन आस्ट्रेलिया और अंग्रेजों के स्वार्थों का यह संयोग अस्थायी और क्षणिक है। इङ्गलैण्ड और जापान के पैसिफिक (प्रशान्त) महा सागर के मुख्य स्वार्थ एक दूसरे के विरुद्ध हैं और इस महासागर में युद्ध छिड़ने के समय जापान इङ्गलैण्ड की सहायता की आशा नहीं कर सकता। इसी तर्क के आधार पर मा० बोराह्टन अन्त में इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि जापान ऐसी अवस्थाओं में कोई ऐसा काम नहीं कर सकता जिससे कि सोवियट रूस के साथ जो उसका मित्रभावित सम्बन्ध है उसमें किसी प्रकार का खतरा उपस्थित होने की सम्भावना हो।

## अमीर की यात्रा।

अफ़गानिस्तान के बादशाह अमानुल्लाह अपनी लम्बी यात्रा में पश्चिम के देशों की एक राजधानी से दूसरी राज[illegible]थ में जाते रहे तब सर्वत्र ही उनका तथा उनकी [illegible] ऐसा स्वागत हुआ जैसा भारत से भाग [illegible] पड़ता। कुछ ही 'मण' पहले तक

योच युद्ध छिड़ने की सम्भावना है यद्यपि वह युद्ध कदाचित निकट भविष्य में न छिड़ेगा। उनका भविष्य कथन है कि जापान आक्रमण भाव अंगीकार करके शांटुंग, चिहली और मंचुरिया में अधिकार-विस्तार करेगा, अगर अमरिका चुप चाप उसे देखता न रहेगा। अगर अमेरिका युद्ध नहीं छेड़ता तो वह अन्य प्रकार के उपाय से काम लेगा जैसे आर्थिक दबाव और चीन कैरोफ को जापान विरोध नाति में सहायता देना आदि। इन सब बातों से दोनों साम्राज्यवादी राज्यों के सम्बन्ध कटु हो रहे हैं जिस से दोनों के बीच आगे चल कर युद्ध छिड़ेगा। चीन जापान अपने वर्ताव से स्पष्ट प्रकट कर रहा है कि वह अति करने यहाँ तक कि अमेरिका से युद्ध करने तक को तैयार है।

## जापान, ब्रिटेन और रूस

आगे चल कर म० योशहिन ब्रिटेन के जापान के प्रति भाव की आलोचना करते हुए इस बात पर विशेष जोर देते हैं कि कनाडा और आस्ट्रेलिया के भाव जापान के अत्यन्त विरुद्ध हैं। इस कारण से मुझे दृढ़ निश्चय है कि अंग्रेजों और जापान के बीच फिर किसी प्रकार की मित्रता की सन्धि नहीं हो सकती। मन ही ध्यान में स्थिति की आवश्यकतावश जापान और ब्रिटेन की जातियों में अधिक घनिष्टता क्यों न पैदा हो जाय। इस विषय पर मो० योशहिन लिखते हैं कि, इस समय

है कि इन दोनों देशों के सोवियट रूस के गणतन्त्र के साथ निश्चित समझौते पहले ही हो चुके हैं।

अंग्रेजों की ओर से अफगानिस्तान को वास्तविक और बड़ा भारी भय है जो दिनों दिन अधिक निकट होता दिखाई देता है यह संसार के राष्ट्रों के मामलों के जानने वालों को स्पष्ट जान पड़ता है। सन् १९२७ की पहली जुलाई को लन्दन के 'डेली टेलीग्राफ' पत्र के संवाददाता ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि ब्रिटिश सरकार की नीति भारत के सीमाप्रान्त से आगे बढ़ कर आक्रमण करने का है। उसने कहा था कि आगे बढ़ कर आक्रमण करना ही खतरे से बचने का सब से अच्छा रास्ता है जो गतिशील सेनाओं और वैज्ञानिक यन्त्रों तथा हवाई जहाजों द्वारा किया जा सकता है।

इसका यही अर्थ है कि स्वयं इंगलैण्ड ही प्रथम आक्रमण करेगा और बोलशविक रूस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करता हुआ उसी सैनिक सिद्धान्त पर अफगानिस्तान पर हल्ला बोलता हुआ आगे बढ़ेगा जिस के वशीभूत हो १९१४ में जर्मनों ने बेलजियम को लतयर्द कर डाला था।

## अंग्रेज़ों की तैयारियाँ

इस आक्रमण के लिये तैयारियाँ बराबर हो रही हैं। यह बार बार कहा गया है कि भारतीय सेना को शस्त्रास्त्रों एवं हवाई जहाजों से पूर्णरूप से सुसज्जित करने के लिये और

अफगानिस्तान के राज्यों को कोई जानता भी नहीं था, वह पहाड़ों में छिपा हुआ था, कितनी ही बातों के लिये वह इंगलैण्ड के आश्रित था और उसे भारत सरकार तक की मर्ज़ी के खिलाफ कुछ करने का साहस नहीं था।

बड़ी २ शक्तियों ने एक छोटे से पहाड़ी देश के बादशाह का इतना हार्दिक और धूमधामी स्वागत क्यों किया?

इस हार्दिक स्वागत का कारण समस्त संसार जानता है। अफगानिस्तान यद्यपि बड़े २ राज्यों की तुलना में एक छोटा सा एवं शक्ति रहित राज्य है, किन्तु अगर रूस और इंगलैण्ड में युद्ध छिड़ जाय तो यह अत्यन्त महत्व का स्थान रखता है। इंगलैंड और रूस में छिड़ने का भय है इसीलिये इंग्लैंड ने बादशाह अमानुल्लाखाँ को अपनी ओर मिला लेने के लिये अपनी शक्ति भर प्रयत्न किये थे और साथ ही चतुराई का विचित्र प्रभाव दिखाते हुए उसने उनके ऊपर ब्रिटिश साम्राज्य की शक्ति का प्रभाव भी पैदा करना चाहा।

दो महाशक्तियों के बीच में होने के कारण अफगानिस्तान को यह निश्चय करना है कि किस ओर से उसे सबसे अधिक खतरा है। जान तो यही पड़ता है कि अमानुल्लाह ने निश्चय कर भी लिया था क्योंकि इंग्लैंड के साथ मित्रता की सन्धियों में बंधने से इनकार करने के बाद उन्होंने तुर्की और फारस से मित्रता की सन्धियाँ की थीं यह सभी को अच्छी तरह मालूम

## अफगानिस्तान का विद्रोह।

आपको स्मरण होगा कि जबतक अमानुल्ला खाँ लण्डन में थे। उनसे इस बात के लिये इक़रार कराने का भारी प्रयत्न किये गये कि जो सुधार वे करना चाहते हैं उनको जब पूरा करने के लिये वे अंग्रेज़ों से एक करोड़ पौंड कर्ज़ लें और अंग्रेज़ सलाहकार रखें। लेकिन अमानुल्ला खाँ ने नम्रतापूर्वक ये सब बातें अस्वीकार कर दीं। फिर उनको रूस की यात्रा स्थगित करने के लिये बहुत कुछ समझाया बुझाया गया, किन्तु जैसा उन्होंने निश्चय कर रखा था वे मास्को गये। इन बातों के कारण निश्चय ही वे लण्डन और दिल्ली में अंग्रेज़ सरकार के बहुत अप्रिय हो गये। इसके सिवा बम्बई में उन्होंने कई ऐसी बातें कह दी थीं जिनसे भारत सरकार नाराज़ थी। अमानुल्ला खां को अफगानिस्तान छोड़े जब प्राय: एक महीना हो चुका था, कलकत्ते के 'फारवर्ड' ने समाचार प्रकाशित किया था कि अफगानिस्तान में उपद्रव खड़ा करने को एजेन्ट भेजे गये हैं। अवश्य, तुरन्त ही उस समाचार की सत्यता से साफ इन्कार किया गया और उसका खण्डन कर दिया गया था। तीन महीने बाद भारत से खबरें आने लगीं कि सीमा के पार उपद्रव खड़ा हो गया है जो अमानुल्लाके सुधारोंके विरोध के कारण है, जो जंगली जातियाँ ब्रिटिश इलाके के पास बसती हैं उन्हीं को सुधारों के विरुद्ध आपत्ति भी जान पड़ी।

अधिक धन की जरूरत है। हवाई जहाजों के बड़े अड्डे स्थापित किये जा रहे हैं और सीमा पर युद्ध कौशल की दृष्टि से रेलवे लाइने डाली जारही हैं। ज्यों ही ये तयारियाँ पूर्ण हुई समझी जायेंगी त्यों ही सोन हुए भारत की तोपों की गड़गड़ाहट और हवाई जहाजों की फड़फड़ाहट से नींद खुलेगी। सर आस्टेन चेम्बलेन ने युद्ध के विरुद्ध अमेरिका के प्रस्ताव का जो जबाब भेजा है उस में हम युद्ध के नक्कार के शब्द सुन सकते हैं।

## सर्वत्र एक साथ विद्रोह

अफगानिस्तान में अमानुल्ला खाँ, फारस में रिज़ा खा, और अरब में इब्नसऊद् के विरुद्ध एक साथ ही विद्रोह होना कम से कम आश्चर्यजनक तो अवश्य है। क्या इन तीनों में एक तरह के कार्यों का कोई एक कारण है? पहले तो हमें यह देखना चाहिये कि तीनों विद्रोह किस प्रकार एक से हैं। अफगानिस्तान, फारस और अरब तीनों ही स्वतन्त्र एशियाई मुसलिम राज्य हैं। तीनों के शासकों का व्यक्तित्व और स्वतन्त्र उल्लेखनीय है। तीनों का सामाय ब्रिटिश साम्राज्य के वशों की या अंग्रेजों के मैंडेट ( प्रबन्ध ) वाले देशों की सीमाओं से मिली हुई हैं। तीनों ही ने अपने मामले किसी प्रकार अंग्रेजों के नियन्त्रण में करने से खूब दृढ़ता पूर्वक इन्कार कररखा है। अब एक एक करके हम उनके सम्बन्ध में विचार करते हैं। पहले अफगानिस्तान को ही लीजिये।

के लिये मार्ग के सम्बन्ध में उपद्रव पूर्ण विवाद, ईराक को स्वीकार करना आदि तथा राष्ट्र सन्ध को लिखना कि अंग्रेजों का मुनरो सिद्धान्त हमें स्वीकार नहीं, जेनेवामें ब्रिटिश और फ़ारस के प्रतिनिधियों में कभी २ बाते हो जाना तथा ताम्ब और आबूमूसाके द्वीपों के आधिपत्य के सम्बन्ध का विवाद—ये सब खास घटनाए हैं। अब इराक की सीमा के पास खुर्दिस्तान की जंगली जातियों के निकट ही विद्रोह खड़ा हो गया है।

## अंग्रेज़ों की नाराजी का नतीजा।

अफ़गानिस्तान, फारस और अरब सर्वत्र ही एकसा दृश्य है। अगर इतिहासके पन्ने उलटिये तो यही बाते लगभग एक सौ वर्षों से समस्त अफ्रीका और एशियामें देख पड़ती है कि—मायिक संचालकों को नाराज किया नहीं कि उस को अपनी प्रजाके बीच विद्रोह होता दिखाई देगा।" ऐसा क्यों होता है? फ्रैंच, जर्मन और रूसी तथा वैसे ही अन्य लोग तथा एशिया वालेतो यह आरोपपूर्ण बात कहते रहते हैं कि य विद्रोह ब्रिटिश एजेंटों, ब्रिटिश षड़यन्त्र और ब्रिटिश धनके द्वारा होते हैं, ये विदेशी कितने झूठे हैं यह प्रत्येक व्यक्ति जानता है। राम! राम! किसी भद्र पुरुष को तो ऐसी कल्पना भी नहीं हो सकती। इसलिये मैं तो उक्त विद्रोह का कारण यही कहूँगा कि भगवान ही एक बार फिर अपने प्रेमपात्र साम्राज्य की ओर से काम कर रहे हैं।

## अरब का विद्रोह।

पिछली गर्मी में नज़द पर इराकसे हवाई जहाजों से आक्रमण किये जाने के बाद जद्दा में इब्नसऊद के प्रतिनिधियों और सर गिलबर्ट क्लेटन की एक कानफ्रेन्स हुई थी। लेकिन इब्नसऊद ने अमानुल्ला की तरह सब प्रलोभनों का तिरस्कार किया और अन्य देशों की अधीनता स्वीकार नहीं की। इससे बात चीत पूरी नहीं हो पाई और कान्फ्रेन्स टूट गई। 'डेलीमेल' तथा उसके दर्जे के अन्य पत्रों में कहा गया कि बोलशेविक प्रभाव का यह परिणाम है। उसके बाद बहुत जल्द ही खबर आई कि ईराक की सीमा क पास की बहाबी जातियों के नेता शेख फैजलउद्दाविश ने विद्रोह खड़ा किया है। उस वक्त ट्रांस जोर्डन की सीमा के निकट जंगली जातियों के बागी होने की खबर थी। इब्नसऊद उनको दबाने के लिये खुद उत्तर की ओर गये। लेकिन उन्हें गये देर नहीं हुई कि जद्दा के पास भारी बलवा हो जाने की खबर आ गई। यहाँ याद रहे कि लालसागर के तटका हजाज़ में यही एक बन्दरगाह है जो गैर मुसलिमों के लिये खुला है।

## फारस का विद्रोह।

तीसरा विद्रोह फारस का है। यहाँ भी उक्त दोनों की सी बातें देखने में आती हैं। रजा खाँ कभी तो ब्रिटिश अधिरक्षण में थे, पर अब वे पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो गये हैं। हवाई जहाजों

## युद्ध की तैयारियां

प्रश्न—युद्ध के लिये जो आश्चर्य जनक नये आविष्कार होने की बातें कही जाती हैं क्या उन पर आप का कुछ विश्वास है? मार्शल फोश ने कहा कि,—"जेनेवा में शान्ति के प्रयत्न होने पर भी हम जानते हैं कि प्रत्येक राष्ट्र अनुसन्धान के काम में लगा हुआ है और जहरीली गैस को इतना पूर्ण बनाने के प्रयत्न में है कि जिससे वह शत्रु को पूर्ण रूप से नष्ट कर दे, यह बिल्कुल ही सम्भव है कि बहुत नाशक जहरीली गैसें तैयार की जाचुकी हैं।

प्रश्न—क्या आप सोचते हैं कि अगले युद्ध में गैस काम में लाई जायगी? मार्शल फोश—अगर यह सम्भव है कि कानून बना कर युद्ध में गैसों का व्यवहार बन्द किया जाय, तो युद्धों का ही अन्त क्यों नहीं कर दिया जा सकता? मैं समझता हूँ कि अगले युद्ध में वे सभी अस्त्र काम में लाये जायेंगे जिन से विजय अधिक निश्चित समझी जायगी।

प्रश्न—यन्त्रों के युद्ध में रण-नीति निपुणता का क्या हाल होगा? क्या सुयोग्य जेनरलों को ज़रूरत वैसीही होगी जैसी कि अब तक के युद्धों में रही है? मार्शल फोश—बदलने वाली अवस्थाओं के जेनरलों के काम में परिवर्तन होगा ही। इस लिये नये साधनों के लिये तैयार होना होगा और उनकी अभिज्ञता प्राप्त करनी होगी।

प्रश्न—नेपोलियन की रण-नीति गत महायुद्ध में विशेष सफल नहीं हो सकती थी, क्योंकि सौ वर्ष में बहुत से परि-

भावी महायुद्ध कैसा भयङ्कर होगा, इस सम्बन्ध में मार्शल फोश नामक सुप्रसिद्ध फ्रञ्च जेनरल ने एक पत्र-प्रतिनिधि से जो बातें कही हैं उन का अनुवाद यहां दिया जाता है। यह वही मार्शल फोश हैं जिन्हों ने गत महायुद्ध में कुल मित्र राष्ट्रों की सेनाओं का नेतृत्व किया था और विजय प्राप्त की थी—

भावी युद्ध का स्वरूप

हो सकता है कि हमारा यह विश्वास हो कि अगला युद्ध अभी दूर है, पर यह समझ लो कि एक युद्ध होगा। तब वह युद्ध कहां हो सकता है ?—यह प्रश्न पत्र-प्रतिनिधि ने मार्शल फोश से किया। मार्शल फोश ने अपना हाथ फैला कर उत्तर दिया कि यह कहीं से भी एकाएक छिड़ सकता है।

प्रश्न—अब से बीस वर्ष बाद—जो युद्ध छिड़ेगा वह कैसा होगा ?

मार्शल फोश—'वह गत महायुद्ध से अधिक भयङ्कर होगा। आज कल के जमाने में कोई आदमी बहुत दूर का भविष्य नहीं देख सकता, पर जो युद्ध होगा वह भयङ्कर होगा। यह तो हमें निश्चय ही समझ रखना चाहिये। युद्ध के जीतने के लिये अनेक प्रकार के यन्त्र काम में लाये जायेंगे। युद्ध के यन्त्रों को ठीक तौर पर काम में लाने के लिये फिर भी वीर पुरुषों की आवश्यक्ता होगी ही, किन्तु वह मनुष्यों का युद्ध होने की अपेक्षा मुख्य कर यन्त्रों का युद्ध होगा।

जा सकती है। उसकी उपयोगिता तो इसी में है कि यह बड़ी शीघ्रता से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भी जा सकती है।

प्रश्न—क्या आप टैंकों को उपयोगी समझते हैं ?

मार्शलफोश—हाँ वे कई तरह से उपयोगी हैं वे प्रभावपूर्ण शस्त्र हैं और मैं समझता हूँ आगे भी रहेंगे। तोपखानेकी उन्नति के लिये अब विशेष स्थान नहीं है। आज तक तोपें जितनी दूर तक गोले फेंकती हैं इस से अधिक दूरी तक गोले फेंकना बहुत अधिक उपयोगी नहीं होगा। कारण,बहुत अधिक दूर से गोले फेंकने वाली तोपों से हानि पहुँचाई और शहर नष्ट किये जा सकते हैं,किन्तु युद्ध में विजय शहरों को नष्ट करके नहीं, सेनायें नष्ट करके प्राप्त की जाती है।

## हवाई हमले।

प्रश्न—कितने ही लोगों की धारणा है कि हवाई हमलों के द्वारा बड़े २ शहरों का नाश किये जाने से भावी युद्ध अत्यल्प कालीन होगा। वे सोचते हैं कि अगर फ्रांस के हवाई जहाज बर्लिन पर विस्फोटक पदार्थ,आग लगाऊ बम और जहरीली गैस बरसायें, जर्मनी के हवाई जहाज यही वस्तुयें पेरिस पर बरसायें तो दोनों ही देश लड़ाई बन्द करने के लिये तैयार हो जायेंगे ?

मार्शलफोश—शत्रु के हवाई जहाजों के हमले से बचने के लिये वास्तव में कोई काफी उपाय नहीं है। उपाय ढूंढने में सभी राष्ट्र लगे हुए हैं और निस्सन्देह कुछ दिनों में ऐसे हम-

मतंन हो गये होंगे। नेपोलियन का नाम सुनते ही मार्शल फोश की आँखों में एक प्रकार का गर्व का तेज झलकने लगा और वे बोले, नेपोलियन की बात मत कहो, यदि महायुद्ध में वे होते तो उन्होंने लड़ाइयाँ जीती होतीं और इस युद्ध में वे लड़ाइयां जीतने वाले होते। युद्ध की नीति बदल सकती है और किस प्रकार लड़ाइयाँ लड़नी चाहिये इस में भी सब तरह के परिवर्तन हो सकते हैं। किन्तु फिर भी मेधावी योद्धा विजय प्राप्त करेगा।

## पैदल सेना कहां होगी?

प्रश्न—क्या आगे भी पैदल ही सेना का मुख्य भाग होगा?

मार्शलफोश—भविष्य की सेनाओं के इतने विभाग होंगे कि प्रत्येक विभागों पर बहुत अधिकार निर्भर करना होगा। पैदल सेना को जिस तरह हम समझते हैं कि सैनिक कन्धों पर बन्दूक लेकर लड़ेंगे इस प्रकार की तो रहेगी नहीं। पैदल सेना जिसे कहते हैं। उसका प्रत्येक जवान हल्की मेशीन तोप लेकर निकलेगा और यह भी आत्मरक्षा का हथियार होगी जैसे आज कल समझा होता है।

प्रश्न—सवार सेना तो अब होगी ही नहीं?

मार्शलफोश—नहीं। सवार लोग घोड़ों पर सवार होकर तो आधुनिक युद्धों में कभी न लड़ेंगे, किन्तु तो भी वे आवश्यक होंगे। मोटर द्वारा सैन्य संचालन की व्यवस्था से घुड़सवारों की आवश्यकता का तो अन्त हुआ नहीं। कारण, सवार सेना शीघ्रता से स्थानान्तरित करने के लिये अबभी उपयोगी समझी

मिनटों में लोगों को मार डालेगी और ऐसे गोले होंगे जिन के फूटने या फासफोरस निकल कर आधे मिनट में मनुष्य का सफाया कर देगा। एक मिनट में हजारों फैर करने वाले सैकड़ों टैंक नामक यन्त्र अलग ही संहार करेंगे। लाखों आदमियों के हाथों में जो मेशीनगन तोपें और अपने आप चलनेवाली बन्दूकें होंगी वे प्रति मिनट में करोड़ों गोलियां बरसायें गी। यह अग्नि वर्षा ऐसी भयंकर होगी कि कोई पक्षी भी इसके बीच से बढ़कर जिन्दा नहीं निकल सकेगा, इसके सिवा आकाश में हज़ारों हवाई जहाजों के कारण अंधकार छा जायगा। चित्र की भयंकरता इतने ही से समाप्त नहीं है। युद्ध क्षेत्रों के बहुत पीछे हवाई जहाजों और तोपों से बरसाये हुए गोलों के कारण शहर जलते हुए दिखाई पड़े गे। ये सब बातें तो ऐसी हैं जो ज्ञात हैं। परन्तु कितने ही अज्ञात शस्त्रास्त्र और भी भयंकर संहार करते दिखाई देसकते हैं। एक कल्पना यह की जा सकती है कि बिजली और रेडियों के द्वारा मीलों की दूरी से चलाये जाने वाले हवाई जहाज, टैंक आदि प्रलय उपस्थित करते दिखाई दें। ऐसा भी हो सकता है कि जिस हवा में सांस लेते हैं उसी में विद्युत प्रवाह ऐसा पैदा कर दिया जाय जिस से मनुष्य की मृत्यु हो जाय या कोई अदृश्य किरण ही उसे मार डाले। इस तरह प्रलयंकर युद्धों से जो नर संहार होगा उस से दूर २ तक महाभयंकर अकाल और महामारी फैलना भी स्वाभाविक होगा।

स्त्रों से सफलता पूर्वक बचने का कोई उपाय निकल ही आयेगा आज तो अवश्य ही कोइ ऐसा उपाय नहीं मालूम है। युद्ध में जिस राष्ट्र की हवाई सेना जितनी ही अधिक प्रबल होगी वह उतना ही अधिक मजबूत होगा। किन्तु मैं यह नहीं समझता कि बड़े बड़े शहरों यहां तक कि राजधानियों और भारी औद्योगिक नगरों के नष्ट होने से युद्ध की समाप्ति हो जायगी। युद्ध क्षेत्र की सेनाओं के ऊपर प्राप्त होने वाली विजय शत्रु से अधिक उत्कृष्ट यन्त्रों और अधिक सिखाये हुए जवान अफसरोंके नेतृत्व में युद्ध जारी ही रहेगा, किसी महान् राष्ट्र के शहरों को नष्ट करके उसे हार मानने को आप तैयार नहीं कर सकते।

बीस वर्ष बाद।

अगले बीस वर्षों में क्या हो जायगा, यह कोई नहीं कह सकता। किन्तु यह हम कह सकते हैं कि जो यन्त्र इस समय दिखाई दे रहे हैं इन में बड़ी भारी वृद्धि हो जायगी। ये सभी यन्त्र भयंकर बहु परिमाण में उस समय मौजूद होंगे। इसके बाद मार्शल फोश ने भावी युद्ध की भयंकरता का चित्र खींचते हुए कहा कि अगणित हजारों जबर्दस्त तोपें अपने विरुद्ध लड़ने वाली सेनाओं पर लाखों करोड़ों गोले बरसायेंगी। ऐसे ऐसे जबर्दस्त नाशकारी गोले तैयार हो चुके हैं जिनको गत युद्ध में कोई जानता भी नहीं था। ऐसी जहरीली गैसें देखने में आयेंगी जो गैस से रक्षा करने वाले पर्दों को भी बेध कर

हमें इसके लिये गुप्त अनुसन्धान की जरूरत नहीं है। हमें समस्त अपने बल से शत्रु के बल का मुकाबिला करना है। हमें यह देखना है कि शत्रु की कौनसी चाल और चोट हमें गिरा सकती है और हम उसका क्या निराकरण कर सकते हैं और हम शत्रु को किस चाल से हरा सकते हैं। अब बलाबल का विचार ऐसा है।

हम इस प्रकार हमला कर सकते हैं—

१—उस की शिक्षा त्याग दें।

२—उस को कौन्सिल और सम्मान त्याग दें।

३—उसे टैक्स न दें।

४—उसके अन्याय मूलक कानून न माने।

५—जिन व्यापारों से उसका स्वार्थ है उसे नष्ट कर दे।

६—उसका न्याय छोड़ दे।

७—पंचायत बनाये।

८—स्वदेशी वस्तु ग्रहण करें।

९—अपने जीवनों को ऐसा बनाये कि सरकारी सहायता की मुहताजी न बनी रहे।

सरकार के पास इतने शस्त्र हैं—

[illegible]

दमन पूर्ण कानून,

# सोलहवां अध्याय

——:o:——

## सफलता का रहस्य

साधारण बुद्धि और बुद्धिवाला पुरुष हमारे इस अद्भुत युद्ध की सफलता पर विश्वास नहीं कर सकता। परन्तु हम निश्चय सफलता प्राप्त करेंगे ऐसा हमें विश्वास है। इस सफलता में एक रहस्य है—एक गुरुमन्त्र है, या यों कहना चाहिये कि एक कुंजी है जिस के बिना विजय असम्भव है। इस अध्याय में हम उसी कुंजी का जिक्र करेंगे जो बहुत ध्यान से समझने की वस्तु है।

हमारा युद्ध सरकार से है। प्रत्येक अच्छे योद्धा को यह बात सोच लेना परमावश्यक है कि अपना और शत्रु का बला बल क्या है। यह एक नीति की मर्यादा है। शत्रु के बलाबल को देखने के लिये—उनकी कितनी सेना है, कितनी युद्ध सामग्री है, कितना आयोजन और तैयारियाँ हैं यह सब जानने को—नीतिज्ञ लोग गुप्त दूत रखने तक की आज्ञा देते हैं। परन्तु हम जिस शक्ति से लड़ रहे हैं उसका बल हमें पर प्रकट है

हमें इसके लिये गुप्त अनुसन्धान की जरूरत नहीं है। हमें केवल अपने बल से शत्रु के बल का मुकाबिला करना है। हमें यह देखना है कि शत्रु की कौनसी चाल और चोट हमें गिरा सकती है और हम उसका क्या निराकरण कर सकते हैं और हम शत्रु को किस चाल से हरा सकते हैं। अब बलाबल का विचार ऐसा है।

हम इस प्रकार हमला कर सकते हैं-

१—उस की शिक्षा त्याग दें।

२—उस को कौन्सिल और सम्मान त्याग दें।

३—उसे टैक्स न दें।

४—उसके अन्याय-मूलक कानून न मानें।

५—जिन व्यापारों से उसका स्वार्थ है उसे नष्ट कर दें।

६—उसका न्याय छोड़ दें।

७—पंचायत बनावें।

८—स्वदेशी वस्तु ग्रहण करें।

९—अपने जीवनों को ऐसा बनावें कि सरकारी सहायता की मुहताजी न बनी रहे।

सरकार के पास इतने शस्त्र हैं—

१—जेल,

२—राजनैतिक छल-पूर्ण कानून,

३—तलवार।

अब इस में एक बात विचारने की है कि सरकार कोई प्रकट स्वेच्छाचार करने वाली संस्था नहीं है। अपने शस्त्रोंको हाथ में रखते हुए भी अनियम से प्रयोग नहीं कर सकती। यही हमारे लिये सफलता का रहस्य है और इसी लिये हम अन्त में जीतेंगे भी। १।२।७। ८ और ६ नम्बरके हमारे कार्य ऐसे हैं कि सरकार हमारी इन चोटों को अपने तीनों में से किसी भी शस्त्र से बन्द नहीं कर सकती है। ५ वा और छठा प्रकार ऐसा है कि उसके लिये कुछ छल-पूर्ण कानून निकालकर रूपान्तर से कोई शस्त्र ( जेल आदि ) काम में लाया जासकता है। पर बहुत सी साधारण और यदि समझदारी से अपनी मार मारी गई तो कदापि सरकार उसे रोक नहीं सकती। अब रहे ३ रा और चौथा काम, ये जोखिम पूर्ण हैं। लेकिन सरकार इन पर केवल प्रथम के दो शस्त्र चला सकती है। तीसरा शस्त्र हरगिज नहीं चला सकता, यदि पूर्ण सावधानी से हम अपना काम करें। यहाँ यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि प्रथम के दोनों शस्त्र बहुत ही साधारण और छिछोरे हैं और उनके प्रति हमारा केवल भय ही भय है। ये वास्तव में डराने के खिलौने हैं, सो उक्त ३ रा और ४ था मोर्चा-जमाते ही दोनों शस्त्र हम पर पड़ेंगे, पर मैं विश्वास पूर्वक कहता हूँ कि उनसे हमारी क्षति रत्ती भर न होगी। और सरकार शीघ्र समझ लेगी कि ये शस्त्र बहुत तुच्छ और व्यर्थ हैं।

परन्तु तीसरा शस्त्र भयंकर है। उसे यदि सरकार निकाल कर प्रयोग कर सके तो खेद-जनक परिणाम होगा—और यहां तक सम्भावना है कि हमारा नाश भी हो जाय। पर सब से मार्के की बात ऊपर हम कह आये हैं कि सरकार स्वेच्छा से कभी इन हथियारों को प्रयोग कर ही नहीं सकती, इसका उसे अधिकार नहीं है—क्योंकि वह एक नियामक और नियन्त्रित संस्था है। खास कर पिछले शस्त्र को प्रयोग करने के लिये तो उसे पूरी पूरी जवाबदेही है। यही हमारी जीत का गुरु-मन्त्र है कि सरकार इस शस्त्रको बिना बहाने निकाल नहीं सकती है, यदि हम उसे वैसा बहाना मिलने का अवसर न दें तो सरकार तलवार निकाल ही नहीं सकती। और तब हमारी जीत है।

यह बात मैं उदाहरण से समझा दूंगा। कल्पना करिये कि आपने सरकारी टैक्स देने से इन्कार कर दिया। अब सरकार क्या करेगी? नियम से वह यह कर सकता है—

१—आप को जेल भेज दे।

२—आपका माल कुर्क कर ले।

इससे अधिक कुछ नहीं। उसके पास एक करोड़ तोप हों और एक लाख हवाई जहाज, पर वह इस काम के लिये इससे अधिक दण्ड दे ही नहीं सकती। इस दण्ड को आप प्रसन्नता से स्वीकार कीजिये। बिना उज्र जेल जाइये। और हँसते हँसते

अपना माल कुर्क होने दीजिये। इसी तरह आपके पड़ोसी, गाँव के सब लोग करें। बल्कि कुल देश के लोग करें। अब मज़ा आवेगा यहाँ कि अपने आप सरकार का यह शस्त्र टूट कर टुकड़े हो जायगा।

क्यों? यह भी सुनिये। जेल भेजने का क्या अर्थ है? यही न, कि आपको आपके परिजन से अलग रक्खा जाय—आपकी स्वच्छन्दता छीन ली जाय-समाज से अलग कर दिया जाय। पर यह बात तब हो सकती है कि आप अकेले जेल जावें। अर्थात जेल जाने योग्य कार्य आप अकेले करें। पर यदि सब करेंगे तो सब ही जेल जावेंगे, वहीं घर बसेगा। सरकार की इतनी हैसियत नहीं है कि वह सबको रहने को पक्के घर और भोजन दे। और न सरकार इतनी मूर्ख है कि वह बे भन्दाज़ मेहमानों को घर बुलाकर बरात जोड़ेगी। निदान वह जेल नहीं भेजा सकती। यही हाल कुर्की का होगा। अकेले आपकी कुर्की होगी तो पास-पड़ोसी खरीदेंगे। पर जब सभी का माल कुर्क होगा और खरीदेगा कोई नहीं तब क्या सरकार आपके खाट पीढ़े, रजाई, बिछौने पोतड़े, चक्की सब लेजाकर अपने दफ्तर में रक्खेगी? असम्भव है, सरकार मुँह के बल गिरेगी—उसकी हार होगी-वह किसी तरह इन हथियारों से हमें न दबा सकेगी।

उदाहरण के लिये बारदौली जिले का मामला ताजा है। किसानों ने लगान देने से इन्कार कर दिया। सर्कार को सख्त्

पटेल ने बहुतेरा समझाया, पर सरकार अकड़ गई। कुर्की जारी हुई। बड़ा मज़ा आया। लोग अमीन को बुला बुला कर ले गये कि भाई, ज़रा मेहरबानी करके पहले मेरा माल कुर्क करलो मैं धन्धे से लगूं। बेचारे अमीन के बोली बोलते २ बोलती बन्द हो गई, कोई ख़रीदार नहीं। अन्त में गरीब किसानों की विजय हुई।

परन्तु यह कार्य बुद्धिमानी से शान्ति पूर्वक न किया गया और सरकार को तलवार निकालने का बहाना मिल गया तो हम हारेंगे। कल्पना करिये कि आपने चुपचाप अपना माल कुर्क न करने दिया, अमीन से लड़ बैठे, सिपाही को मार बैठे, फौजदारी हो गई। इतना बहाना बहुत है। विद्रोह कह कर बराबर फौज की गोली से आप भून दिये जावेंगे।

कर्तव्य यह है कि शान्ति और नियम में काम हो तो अन्त तक सरकार तलवार न निकाल सकेगी। यह मशहूर था कि अंग्रेज़ लहरों पर हुकूमत करते हैं, अंग्रेज समुद्र के राजा हैं। बात सच थी। समुद्री बल संसार की किसी जाति के पास अंग्रेजों के समान नहीं है। पर वाहरे वीर कैसर पैर चूमने लायक काम किया। लड़ाई के अन्त तक ऐसी चाल चली कि अंग्रेज़ों का समुद्री बल पड़ा पड़ा झींग हगता रहा। और उसे प्रयोग करने का अवसर ही न आया। हम थोड़ी भी सावधानी, शान्ति और विचार बुद्धि से अपना युद्ध करेंगे तो

निस्सन्देह सरकार की तलवार व्यर्थ होगी। जो लोग डरते हैं वे समझ हैं। हम अपने लड़कों को सरकारी स्कूलों में नहीं पढ़ते, किसी का क्या इजारा है। कोई ऐसा कानून नहीं है कि न पढ़नेवाले को सजा मिले। हम कौन्सिल की मैम्बरी छोड़ते हैं, खिताब नहीं चाहते, कोई जुर्म नहीं। सरकारी माल का व्यापार नहीं करते। डाक, तार, रेल में न नौकरी करते न उससे काम लेते हैं। अदालत में नहीं जाते, घर में फैसला करते हैं और कोई ले जाय तो अपना बचाव नहीं करते। भेज दो जेल बस यही न बात है। देखें जेल में कितनी जगह है। स्वदेशी वस्तु ग्रहण करना कोई कानूनन जुर्म नहीं है। टैक्स न देने और कानून न मानने से फांसी नहीं लग सकती है। जेल, कुर्की है सो घास की तलवार है—सरकारी हिम्मत हो तो उन्हें लेकर लड़े।

१—असफल होने का भीषण परिणाम।

प्रत्येक भारत के बच्चे को यह ज्ञान रखना चाहिये। कि यदि हमारा स्वाधीनता का आन्दोलन असफल हुआ तो भारत की खैर नहीं है—भारत का उठता हुआ मस्तक बुरी तरह कुचल दिया जायगा और भारत का प्रत्येक जीव—चाहे वह स्वाधीनता का भक्त हो या विरोधी—निश्चय विपद में पड़ेगा।

यह बात तो होना की तरह स्पष्ट है कि भारत अब तत्काल स्वावलम्बन लेगा और यह सम्भव है कि कोई गैर जाति

भारत की मनमानी मालिक बन कर रहे। स्वाधीनता की प्यास जिस जाति को लग जाती है वह लोहू तक पीती है भारत ने अपनी प्यास सतोगुणी जल से अब तक बुझाई है और इस के लिये भारत गान्धी का ऋणी है। परन्तु यदि किसी भी कारण से यह सतोगुणी जलका स्रोत बन्द हो गया या हम ही इस मार्ग से भटक गये तो याद रखना चाहिये भारत में पचासों वर्ष तक खून की नदियां बहेंगी और तब न्याय, अन्याय, कानून, नीति सब अतल पाताल में डूब जायेंगे। यह काम हमारे और हमारे विरोधी दोनों के लिये त्रासदायक होगा।

भारतवर्ष अभी तक शायद अंग्रेजों की दृष्टि में गुलाम—डरपोक—लोगों से भरा हुआ देश है। इससे अभी वहाँ यही चरचा चल रही है कि भारत को दबाना चाहिये, अराजकता मिटानी चाहिये। परन्तु जब अंग्रेजों को यह पता लगेगा कि वास्तव में भारत वीर है, निर्भय है और अपने स्वत्व के लिये सर्वस्व होम देने के तैयार हैं तब उसी हाउस आफ लार्डस में धड़ल्ले से यह कहा जायगा कि "इंगलैण्ड भारत को अपने साम्राज्य में मिलाये रखने के लिए भारी से भारी लड़ाई लड़ेगा और अपनी पूरी २ शक्ति लगा देगा।

महा-मनस्वी भीष्म-पितामह ने एक बार युधिष्ठिर से कहा था कि—"बेटा! सोने के ढकने से सत्य का मुंह बन्द है।"

यह बात इतनी सच्ची थी कि मनुष्य अब तक अपने जीवन में उसे आजमा सकता है ।

सत्य बात तो यह है कि प्रत्येक समाज पर न्याय का शासन होना चाहिये और प्रत्येक प्रजा को न्याय भक्त होने की शपथ लेनी चाहिये । और न्याय की मर्यादा तोड़ना दण्डनीय ठहरना चाहिये । परन्तु अब राजा का शासन होता है, राजभक्त होने की शपथ ली जाती है, राजा के प्रति अवज्ञा करना दण्ड-नीय है—चाहे राजा की नीति और आचार कैसा ही कुत्सित क्यों न हो ।

हम समस्त अंग्रेज जाति से, वरन समस्त मानव समाज से एक प्रश्न करते हैं कि धर्म की दृष्टि से मनुष्य के प्रति और समाज का समाज के प्रति कर्तव्य क्या है ।

जिस समय भारत में अंग्रेज व्यापार करने आये थे और घटना क्रम से शासन के अधिकार उनके हाथ में आने लगे तब उन्होंने यह घोषणा की थी कि हम लुटेरे, स्वार्थी और अयोग्य हाथों से एक निराश्रित जाति की रक्षा करने का पवित्र उद्योग करते हैं । परन्तु आज वही अंग्रेज भारत को अपनी सम्पत्ति किस लिये समझते हैं । यह बात सोचने की है । कल्पना करिये कि कोई सज्जन दया करके किसी अनाथ बालक का रक्षण करे तो उसका यह कार्य प्रशंसा की दृष्टि से देखा जायगा कि उसने सच्चा मानव धर्म पालन किया । किन्तु बालक अनाथ

हो कर कहे कि अब मैं अपना सम्भाल लूंगा आपको धन्य-वाद है, आप अपने घर पधारें और यह व्यक्ति उस बालक पर और उसकी सम्पत्ति पर पूरा अधिकार ही रक्खे तो यह उसकी मय कर भोसता है। भारतवर्ष या आयर्लैण्ड जब अंग्रेजों से असन्तुष्ट है—अंग्रेजों की नीति उन्हें ना पसन्द है। अंग्रेजों के कार्यों ने उन्हें नाराज कर दिया है, साथ ही वह समर्थ है और अपने घरका प्रबन्ध स्वयं करना चाहते हैं तब क्या कारण है कि यह जवाब भारत को दिया जाता है कि ब्रिटेन साम्राज्य में उसे मिला रखने को अपनी सारी शक्ति लगा देगा और घुड़क कर कहा जाता है चलो बात छिड़ोगे।

यूरोप स्वाधीनता का शिक्षक है। मेरी बात प्रसिद्ध है कि, पुत्र यहां तक कि कन्याओं तक को भी युवा होने पर माता पिता स्वतन्त्र कर देते हैं। यह उनकी गौरव पूर्ण और शोभन योग्य परिपाटी है। पर क्या कारण है कि करोड़ों मनुष्यों से भरा भूखण्ड बल पूर्वक पराधीन रक्खा जाता है। कहा गया है कि भारत अयोग्य है—उसे धीरे २ अधिकार मिलेंगे। मैं पूछता हूं क्यों ? क्या प्रमाण ? कदाचित् मान लिया कि हम अयोग्य हैं, पर हम अपने अधिकारों का दुरुप-योग करके अपना ही तो बिगाड़ करेंगे। [illegible] की जाति को हमारी इतनी चिन्ता ?

उसे पोषण कराना चाहती है, हमारे लिये अब अन्धविश्वास, भक्ति और आधीनता असम्भव हैं।

तब परिणाम केवल एक है। युद्ध, अब मेल हो नहीं सकता उसके मार्ग दूर हैं। मेल होने के दो ही मार्ग हैं—या तो ब्रिटिश गवर्नमेंट अपना सर्वस्व नाश कर भिखारी बनने को तय्यार हो जाय और या हम पूरे २ बेगैरत और तुच्छ बन कर सिर झुका लें।

मेरी समझ में दोनों असम्भव हैं। गवर्नमेंट का राज़ी से सर्वस्व देना असम्भव है। मगरमच्छ जो निगल गया है वह वस्तु बिना पेट चीरे निकल हो नहीं सकती। और देश की जो दशा हम देख रहे हैं—उसका जैसा उत्थान हो रहा है—उसे देखते देश सिर झुकायेगा यह भी समझ में नहीं आता—हर सूरत में युद्ध ही अवश्यंभावी है।

ऐसी दशा में हमारा यह धर्म है, बल्कि संकट काल का कर्त्तव्य है कि सब स्वार्थ—सब प्रलोभन—सब दुर्बलतायें—सब द्वेष, ईर्षा, फूट भूलकर एक मन, एक वचन, एक प्राण से इस युद्ध में जूझ मरें। दिगन्त को कम्पायमान करती हुई हमारी आवाजें निकलें—"कार्यं वा साधयामः शरीरं वा पातयामः।"

ईश्वर हमें क्रोध, हिंसा, हत्या, द्वेष, नीचता और पाप से बचावे। हमें विनय दे, धैर्य दे, साहस दे, और मार्ग दे।

हम उठें, खिलें, सुखी हों। हम अन्त में कवि रवीन्द्र के शब्दों में ईश्वर से प्रार्थना करके अपना यह ग्रन्थ समाप्त करते हैं—

"जहाँ मन भय से परे है, जहाँ मस्तक ऊँचा है, जहाँ स्वतन्त्र ज्ञान है, जहाँ उन्नति छोटी छोटी घरेलू दीवारों में नहीं रोकी गई है, जहाँ हृदय के अन्तरतम प्रदेश से सत्य की अमृतमयी धारा निकलती है, जहाँ अनवरत परिश्रम उन्नतिस्थल की ओर बाँह फैलाये हुए है, जहाँ बुद्धि के निर्मल और पवित्र स्रोत ने अपना मार्ग निरर्थक व्यवहारों के भयानक रेगिस्तान में नहीं खो दिया है, जहाँ मानसिक प्रवाह, पवित्र विचार और कर्म के विस्तीर्ण मैदान में बह रहा है, जहाँ हृदय आपकी अखंड सुधा-धारा-प्रवाहिनी सौम्य मूर्ति को धारण करने के लिये प्रस्तुत है और जहाँ इन्द्रियाँ आपके सर्व स्वरूप में भक्तिपूर्वक सेवा करने के लिये कटि बद्ध हैं हे मेरे स्वामी! आनन्द और स्वतन्त्रता के उस शिखर पर मेरा देश पहुँचे।

ओ३म शान्ति। शान्ति। शान्ति।

# निवेदन

हमें दुःख है कि पुस्तक अति शीघ्रता में छपने के कारण प्रूफ सम्बन्धी बहुत भूलें रह गई—कृपा कर पाठक सुधार कर पढ़े ।

( प्रकाशक )

---

# भविष्य भारत।

---

इस ग्रन्थ में जो रह गया है, वह रहस्य इस भयानक पुस्तक में पाइयेगा, पर इस ग्रन्थ के छपते २ ग्राहक बन गये तो ही पुस्तक के दर्शन सम्भव हैं। आज ही लिखिये ।

मूल्य १)

---

## दिल्ली में मिलने के पते